જ્યોતિપુંજ

નરેન્દ્ર મોદી

VISIT…

LANZAROTE Caliente.com

જ્યોતિપુંજ

નરેન્દ્ર મોદી

જ્યોતિપુંજ



નરેન્દ્ર મોદી

પ્રવીણ પ્રકાશન પ્રા. લિ. - રાજકોટ



JYOTIPUNJ
Writen by : Narendra Modi
Published by : Pravin Prakashan Pvt. Ltd., Rajkot - 1

પ્રકાશક :
પ્રવીણ પ્રકાશન પ્રા. લિ.
લાભ ચેમ્બર્સ, મ્યુ. કૉર્પો.
સામે, ઢેબર રોડ, રાજકોટ.
web. : www.pravinprakashan.com
e-mail : pravinprakashan@yahoo.com

પ્રથમ આવૃત્તિ :
૧૪ - ૦૪ - ૨૦૦૮

મૂલ્ય : રૂા. ૬૫૦

ISBN : 81-7790-084-6

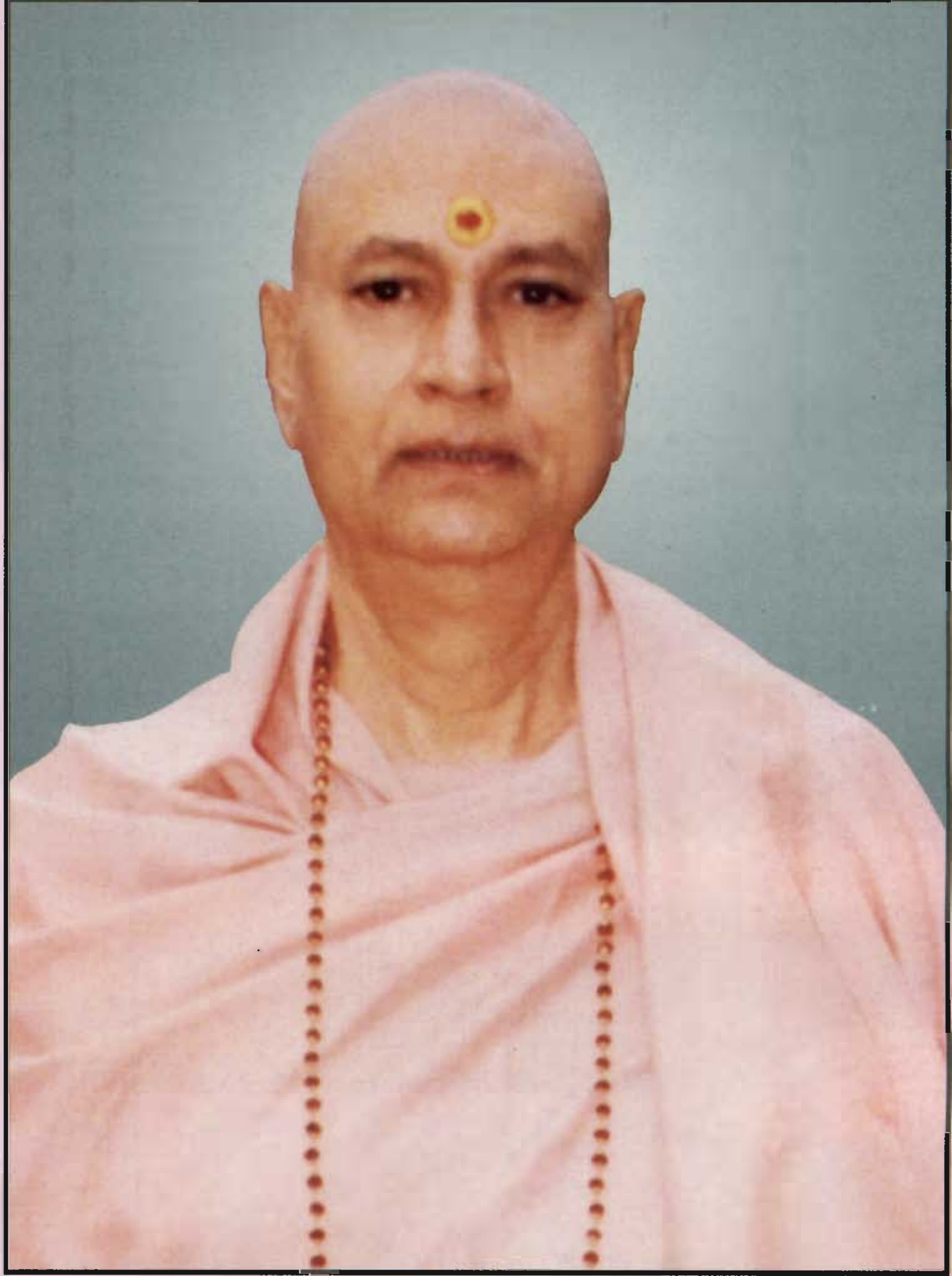
ડિઝાઈન :
દિનેશ ટીલવા dineshtilva@gmail.com

બાઈન્ડિંગ :
કુમાર બુક બાઇન્ડિંગ વર્ક્સ

મુદ્રક :
પ્રવીણ પ્રકાશન પ્રા. લિ. - રાજકોટ



અર્પણ
માતૃભૂમિની
સેવામાં રત
અખંડ
એકનિષ્ઠ
લાખો સ્વયંસેવકોના
શ્રી ચરણોમાં
સાદર
અર્પણ...



પ.પૂ. સ્વામી સત્યમિત્રાનન્દગિરિજી

भूमिका

संसार में उन्हीं मनुष्यों का जन्म धन्य है जो परोपकार और सेवा के लिए अपने जीवन का कुछ भाग अथवा सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर पाते हैं। विश्व इतिहास का निर्माण करने में ऐसे ही सत्पुरुषों का विशेष योगदान रहा है। संसार के सभी देशों में सेवाभावी लोग हुए हैं, लेकिन भारतवर्ष की अपनी विशेषता रही है, जिसके कारण वह अपने दीर्घकाल के इतिहास को जीवित रख पाया है। भारतवर्ष में जो उदाहरण प्रस्तुत हुए हैं वे अन्यत्र दुलर्भ हैं। इनमें सर्वाधिक अगर किसी का नाम लिया जा सकता है तो महर्षि दधीचि का नाम है। किसी ने समय दिया, किसी ने जवानी दी, किसी ने धन और वैभव छोड़ा, किसी ने कारावास की कठिन वेदना सही। भारतवर्ष की धरती धन्य है, यहां का धर्म धन्य है, यहाँ के भगवान धन्य है, जिन्होंने राक्षसों का विनाश करने के लिए एक ऋषि को अपना सम्पूर्ण शरीर दान कर देने की अद्‌भुत प्रेरणा प्रदान की। कोई व्यक्ति किसी के पास जाकर प्रार्थना करे कि मुझे भूमि दे दीजिये - राजा प्रसन्न होकर भूमिदान देगा। किसी विद्वान के पास जाईये और उससे कहिए कि महाराज, मुझे विद्या-दान किजिये। वह बारह वर्ष तक पढ़ाकर अपनी विद्या दे देगा। किसी वस्त्र व्यवसायी से वस्त्र मांगिए तो आपके तन ढकने के लिए वह वस्त्र दे देगा, कोई सम्पति दे देगा। सम्पत्तिदान, विद्यादान, वस्त्रदान, भूमिदान, विद्वान ब्राह्मणों के कर्मकाण्डों के द्वारा पुण्यदान - ये सब कुछ सुना गया था, लेकिन किसी ने सुना ही नहीं था कि कोई अपना प्राणदान कर सकता है। महर्षि दधीचि ने प्रसन्नतापूर्वक अपने शरीर का प्रत्येक भाग - पूर्ण काया विवेकपूर्वक राक्षसों का विनाश करने के लिए, वृत्रासुर का विनाश करने के लिए समर्पित कर दी। ऐसा अद्‌भुत त्याग संसार में कहाँ मिलता है ?

ऐसे कठिन कलिकाल में यह रसधारा सूखी नहीं है। परमेश्वर की कृपा से एक महापुरुष का आविर्भाव हुआ, जिन्हें सारा देश जानता है। परमपूज्य डॉ. केशव बलीराम हेडगेवारजी, जिनको हम डॉ. हेडगेवारजी के नाम से भी पुकारते हैं। उनके मन में विचार आया कि राष्ट्र की सेवा करने के लिए कुछ लोग होने चाहिये। सब लोग अपने खाने, पीने, भोजन, निवास, संतति इन्हीं सब के निर्माण में लगे रहेंगे, तो इस देश का निर्माण कौन करेगा ? अपनी भारतमाता के स्वरूप का रक्षण कौन करेगा ?

इसके लिए एक ओर राजनीतिक दृष्टि से बहुत लोग प्रयत्न कर रहे थे, उनका हम विस्मरण नहीं कर सकते हैं, पर दूसरी ओर डॉ. हेडगेवारजी के मन में पूरा विश्वास था कि राजनीति अंततोगत्वा समाज को तोड़ देती है, उसमें व्यक्तिगत स्वार्थ उभरकर आता है। सद्‌गुणों का प्रचार कम होता है और जिनके स्वार्थ पूर्ण नहीं होते हैं वे सद्‌गुणियों को भी दुर्गणी सिद्ध करने का प्रयास करने लगते हैं। यह विचार उनके मन में निश्चित रू प से रहा होगा, जिससे उन्होंने राजनीति से दूर रहकर राष्ट्र का निर्माण और व्यक्ति के निर्माण के लिए 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ' की स्थापना की। बहुत थोड़े से लोग उनके साथ थे उस समय। लेकिन कोई वस्तु छोटी-बड़ी नहीं होती है। ऐसा तो हमें मानना ही नहीं चाहिये।

मुझे दो स्थानों पर जाने का अवसर मिला : एक कलकत्ता का वटवृक्ष और दूसरा कबीर वट नर्मदा के तट पर। उन दोनों स्थानों पर जब गया और पूछा कि इतनी बड़ी-बड़ी शाखाएं दिखाई पड़ रही हैं, उन्होंने धरती को इतना छू लिया है और वे इतनी वृहदाकार हो गई हैं कि पता लगाना मुश्किल हो गया है कि इसमें मूल कौन-सा है ? वहां के अधिकारी ने कहा कि महाराज, मूल का पता लगाना तो कठिन है। केवल परंपरा से यहां अधिकारी आते रहे हैं वे ही बता सकते हैं। लेकिन ये शाखाएं ही इतनी बड़ी हो गई हैं कि वे अपने को मूल रूप से सिद्ध कर रही हैं। इसलिए इस वटवृक्ष का पहला बीज कैसा भाग्यशाली रहा होगा, जिस बीज में से निकले हुए एक वृक्ष और उस वृक्ष में से निकली हुए प्रत्येक शाखा वटवृक्ष दिखाई पड़ रही है। इसलिए महाराज, प्रथम बीज जिसने डाला है, उसको कोई जानता नहीं।

जानबूझकर इस वटवृक्ष का निर्माण नहीं हुआ। किसी पंछी को भूख लगी तो उसने कहीं फल खा लिया और फल खाने के पश्चात् जो प्रत्येक व्यक्ति की विसर्जित करने अपनी स्वाभाविक इच्छा होती है, उस विसर्जन में से ऐसा सर्जन संसार में कहीं हो सकता है ? मनुष्य तो ऐसा कर ही नहीं सकता। एक पक्षी का बड़ा भाग्य है कि वो अपने जीवन में इतना छोटा होने पर भी इतना बड़ा कार्य कर सकता है कि जिसके मल में से निर्गत बीज इतना बड़ा वटवृक्ष बन जाय, आश्चर्य है। उस वटवृक्ष को देखने के बाद मेरे मन में भी विचार आया कि कोई भी व्यक्ति अपनी पूर्ण निष्ठा के साथ किसी कार्य को प्रारंभ करने का विचार करें, संकल्प करें इस तरह उसमें दृढ़ता हो तो जैसे एक छोटा सा बीज वटवृक्ष बन सकता है। इस तरह उसका चिंतन भी वृहदाकार होकर वटवृक्ष की भांति छाया, शांति और शीतलता प्रदान कर सकता है।

इस विचार से यदि हम देखें तो पू. डॉ. हेडगेवारजी का प्रयत्न एक वटवृक्ष के छोटे से बीज धरती में स्थापन करने का मानो कार्य हो। उन्होंने केवल पाँच स्वयंसेवकों को लेकर कार्य प्रारंभ किया। कार्य की गुरुता, कार्य की क्षमता और कार्य की पुण्यशालिता और उस कार्य के द्वारा व्यक्ति को मिलने वाला संतोष निरंतर बढ़ता गया और एक ने दूसरे को और दूसरे ने तीसरे को

और इस तरह से शृंखला बढ़ती गई । स्वार्थ के लिए तो लोग बढ़ते हैं, लेकिन यह एक अद्‌भुत घटना थी कि निःस्वार्थ समाज के निर्माण के लिए सैकड़ों लोगों ने अपनी तरुणाई देने का मन में संकल्प कर लिया । हम जानते हैं कि ऐसी कठिनाई में स्वार्थ में रहने वाले लोग निःस्वार्थ व्यक्तियों का बड़ा आदर नहीं करते हैं और ऐसा ही प्रचार करते हैं कि कोई काम नहीं करते । हम साधु-महात्माओं को भी लोग ऐसा ही कहते हैं :

नारि मुई घर संपति नासी ! मूंड़ मुंड़ाय भये संन्यासी ।

इस प्रकार का आक्षेप तो संन्यासियों पर भी लगता है । अधिकांश लोग मूंड़ मुंड़ाकर ऐसे संन्यासी होते भी हैं । लेकिन स्वामी विवेकानंद, स्वामी रामतीर्थ, भगवान आदि शंकराचार्य की परंपरा के सैकड़ों संन्यासी मूंड़ मुंड़ाने वाले संन्यासी नहीं हैं । वे ज्ञान का छुरा लेकर दूसरे के मूंड़ मूंड़ने वाले संन्यासी हैं । लेकिन उस समय लोगों ने कहा कि ऐसे थोड़े से लोग राष्ट्र का क्या परिवर्तन करेंगे ? लेकिन डॉ. हेडगेवारजी के मन में पूर्ण श्रद्धा थी कि यह राष्ट्र का कार्य है, भगवान का कार्य है । उनको धीरे धीरे अच्छे लोग मिलते चले गये । इसलिए पिछले वर्ष हम सब लोगों ने पूरे देश में हजारों स्थानों पर परमपूज्य श्रीगुरुजी माधव सदाशिव गोलवरकरजी की शताब्दी का उत्सव बड़े उत्साहपूर्वक मनाया । ईश्वर की कृपा से पूरे राष्ट्रीय कार्यक्रम का मुझे अध्यक्ष चुना गया और बड़े विनम्र भाव से धन्यवाद देने के लिए मैंने सेवा का कार्य स्वीकार किया । किसी को ज्ञात नहीं था कि डॉ. साहब इतनी जल्दी संसार छोड़कर चले जायेंगे और वे एक प्राध्यापक को जीवन का यह कार्य देकर चले गये ।

श्री गुरुजी मूल रूप से संन्यासी बनना चाहते थे । स्वामी रामकृष्ण परमहंस के प्रत्यक्ष शिष्य स्वामी अखंडानंदजी, जो स्वामी विवेकानंद के गुरुभाई थे, उनसे उन्होंने ब्रह्मचर्य की दीक्षा भी ली । उन्होंने केश-श्मश्रु और दाढ़ी भी रख ली । बड़े प्रिय लगने लगे । स्वामीजी महाराज ने उन्हें कमण्डल दिया और कहा कि तुम्हारे केश और दाढ़ी बड़े अच्छे लगते है । इसे कभी मुंडाना नहीं, कभी समाप्त नहीं करना । इसी बीच श्री गुरुजी परम पूजनीय डॉ. हेडगेवारजी के यहां गये और उनका दर्शन किया ।

उन्होंने गोलवरकरजी को देखा । प्राध्यापक रह चुके थे, त्यागी थे । मन में वैराग्य जागा इसलिये उधर चले गये । डॉ. हेडगेवारजी ने गुरुजी से पूछा - 'क्या कर रहे हैं ?' - उत्तर मिला - 'साधना ।' 'काहे के लिये ?', 'मोक्ष के लिये ।' 'बड़ा अच्छा विचार है । पर एक बात बताइए कि आप मोक्ष का सुख प्राप्त करने की तैयारी में हैं । यदि तुरन्त आपके सामने हजारों लोग नरक के कुण्ड में गिर रहे हों तब आप क्या करोगे ?' श्री गुरुजी ने उत्तर दिया, 'पहले मैं नरक में जाने वालों को निकालूंगा । बाद में मोक्ष की बात करूंगा ।' डॉ. हेडगेवारजी ने कहा कि 'ठीक यही स्थिति भारतवर्ष की हो रही है । सैकड़ों लोग स्वार्थ के नरक-कुण्ड में गिर रहे हैं और भारतमाता की चिंता के लिए कोई तैयार नहीं है । ऐसे में मुझे लगता है कि आप मोक्ष को छोड़ दीजिए ।'

स्वामी अखंडानन्दजी महाराज ने प्रेम से आज्ञा दे दी । उनसे कमण्डल का प्रसाद लेकर नागपुर आ गए और उसके बाद उनकी अखण्ड साधना चली । तैंतीस वर्ष में तैंतीस बार भारतवर्ष की परिक्रमा कर उस महापुरुष ने आद्य शंकराचार्य के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की । भगवान आदि शंकराचार्य बत्तीस वर्ष की आयु में चले गये, लेकिन गुरुजी ने तैंतीस बार भारतवर्ष की परिक्रमा की । कैसी अद्‌भुत बात थी । उनके मूल विचार में अद्वैत वेदांत था । स्वामी विवेकानंद जो रामकृष्ण परमहंस के शिष्य थे, अध्यात्म उनकी आधारशिला थी । कार्य करने की दृष्टि से उनका सामाजिक जीवन था । मन में संकल्प राष्ट्र को परम वैभव के स्थान पर बैठाने का था । जब अच्छा काम करते हैं तो साधनों की कमी होती है, पर मुझे ऐसा लगता है कि जीवन में यदि सब साधन एक साथ नहीं आये तो आदमी अपने कर्तव्य का पालन नहीं कर पाता, क्योंकि उसे पुरुषार्थ करने का अवसर ही नहीं मिलता । भगवान ने अपने भीतर जो शक्ति दी है उसका परीक्षण करने का अवसर ही नहीं मिलता ।

यह परमात्मा की बड़ी कृपा रही कि साधनों के अभाव में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य प्रारंभ हुआ ! सब लोगों ने इस बात को सिद्ध करके बता दिया कि -

'क्रियां सत्त्वसिद्धि भवति नोपकरणे ।'

क्रिया की सिद्धि किसी उपकरण के द्वारा नहीं, संकल्प के द्वारा होती है, महान विचार और विश्वास के द्वारा होती है । बाद में उपकरण मिलते चले जाते हैं । बिना उपकरण के भी लोग निश्चित रूप से इतिहास में अपना नाम अंकित कराते हैं । उपकरणों के अभाव में महाराणा प्रताप को बहुत बड़ी सफलता नहीं मिल पाई । मुगलों को वे पराजित नहीं कर पाये, लेकिन उनके भीतर जो राष्ट्रभक्ति थी उसने सिद्ध कर दिया कि उपकरण के अभाव में भारतवर्ष का केवल एक क्षत्रिय ही नहीं, भारतवर्ष का एक अश्व भी, जिसे हम चेतक के नाम से जानते हैं, वह भी उपकरण के अभाव में इतिहास का एक ऐसा व्यक्तित्व बनता है जिसकी समाधि पर जाकर लोग फूल चढ़ाते हैं ।

सफलता प्राप्त करने के बाद किसी को श्रेय मिलता है यह एक अलग बात है, लेकिन एक असफल व्यक्ति भी यदि उसका आत्मविश्वास अपने लक्ष्य के प्रति हो, और वहां तक न पहूंच पाये, लेकिन जहां तक जितना पहूंचता हैं वह भी अपने आप में अभिनंदनीय है । प्रमाण है चौराहों पर बने हुए अश्व पर राणा प्रताप की वह मूर्ति, जिसके हाथ में भाला है और हल्दीघाटी में बनी हुई चेतक की वह समाधि, जिसमें स्वतंत्रता के लिये अपने प्राण अर्पित किये हैं । अच्छे लोग किसी कार्य को प्रारंभ करते हैं तो उसे छोडते नहीं हैं :

"प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयैंन नीचैः
प्रारम्भविघ्नविहिता विरमन्ति मध्याः ।।"
विघ्नैः पुनःपुनरपि प्रतिहन्यमाना
प्रारभ्य चोत्तमजनाः न परित्यजन्ति ।।"

साधारण व्यक्ति प्रारब्ध के भय से कि बड़ी तकलीफ होगी, कौन शुरू करे ? - अच्छा कार्य प्रारंभ ही नहीं करते । मध्यम लोग विघ्न आने पर काम छोड़ देते हैं । उत्तम लोग बार-बार गंगाजी की भांति शिलाओं पर प्रहार करते हुए अपना नया मार्ग बनाते हैं । मध्यममार्गी लोग रुक जाते हैं, कार्य प्रारंभ ही नहीं करते । उत्तम लोग अपने कार्य को अंतिम रूप तक पहूंचाते हैं ।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य निरंतर आगे बढ़ता जा रहा है । उस कार्य को बढ़ाने में बहुत लोगों ने सहयोग किया । गुजरातकी धरती पर बहुत अच्छे अच्छे लोग हुए, जिन्होंने अपने जीवन की चिन्ता न करते हुए कार्य का विस्तार किया । परम पूजनीय श्री गुरुजी से प्रेरणा प्राप्त की । उनके संबंध में मैं बहुत कुछ नहीं कहूंगा, क्योंकि श्री गुरुजी को सब लोग जानते हैं ।

गुजरात में जिन लोगों ने कार्य किए उनमें हम लोगों को सदा याद रखना पड़ेगा श्री वकील साहब को । मुझे भी उनसे दो तीन बार मिलने का अवसर मिला । अहमदाबाद के टाउन होल में मेरे एक कार्यक्रम की रचना उनके द्वारा हुई थी । उन्होंने आग्रह कर मुझे बुलाया और मैं गया था । इसलिए हम सब लोग वकील साहब को कभी भूल नहीं सकते । जैसा उनका नाम था - लक्ष्मण, वे उसी तरह भारत की भक्ति करते, मानो रामराज्य स्थापित करना बड़ा कार्य है । इस प्रकार से वे मार्गदर्शक केवल संघ के लिये ही नहीं रहे, समाज के अन्य लोगों को लेकर उन्होंने पूरे गुजरात में बहुत बड़ा कार्य किया ।

केशवराव देशमुख, डॉ. वणिकरजी बड़े सरल व्यक्ति थे । मुझे उनके घर में ठहरने का अवसर मिला । लन्दन से पेथोलोजिस्ट की बड़ी डिग्री प्राप्त की और पदवी प्राप्त करने के बाद भी इतनी सरलतापूर्वक रहते थे । कोई कह नहीं सकता कि वे इतने पढ़े-लिखे व्यक्ति थे । कम से कम बोलना और ज्यादा से ज्यादा काम करना उनके जीवन का ध्येय था । वनवासियों के भीतर जो कार्य डॉ. वणिकर ने किया प्रायः कोई कर पायेगा ऐसा कहना कठिन है ।

बाबूभाई ओझा ने बहुत बड़ा कार्य किया । अंतिम क्षणों तक वे सक्रिय रहे । संघ के अनेक कार्यक्रमों को उन्होंने गति और प्रेरणा प्रदान की । श्री मधुरकरजी संगठनशास्त्र के जीवन्त विद्यापीठ के समान थे । अपनी उपस्थिति मात्र से ही लोगों को प्रेरणा देते थे । सभी स्वयंसेवक उन्हें अपना मानने के कारण अपने को बहुत भाग्यशाली समझते ।

श्री वसंतरावजी निरंतर अपने कार्य में संलग्न ही रहे । वैसे तो वे लॉ कॉलेज के प्राध्यापक थे, परन्तु उनका सारा जीवन पवित्र विचार, निरन्तर उनकी जीवनसाधना का मार्ग रहा । इतना आदर प्राप्त किया कि उनकी अन्तिम यात्रा में हजारों लोग उनके लिए रो रहे थे । सब लोगों की आंखों में आंसू थे । सबके हृदय में उनके प्रति श्रद्धा थी । बचूभाई भगत ने संघकार्य करते हुए सभी के साथ अपना विश्वसनीय संबंध रखा और बहुत बड़ा कार्य किया । नाथाभाईजी ने अनेक भूमिकाएं निभाते हुए बहुत लोगों को प्रेरणा दी । वे स्वभाव से सौम्य थे । गुजरात में कौन कहाँ-कहाँ अच्छा डाक्टर है उसकी तलाश कर अपने कार्यकर्ताओं के स्वास्थ्य की चिंता कर उनके पास भेज देते थे । उनका सारा जीवन लोकनिर्माण में संलग्न रहा । श्री अन्तरावजी काले, मैं कड़ी में गया, तब कई दिन तक वे मेरे साथ रहे । मैंने उनके कर्मठ स्वभाव को देखा । बड़ा सादा जीवन, सादे कपड़ों में रहते और इतनी योग्यता और संगठन का सारा भार होते हुए भी सादा जीवन जीते थे । मराठीभाषी होते हुए भी गुजरात आने के बाद अपने प्रान्त को भूल गये ।

संघ का प्रत्येक व्यक्ति अपने प्रांत को भूल जाता है । वह केवल अपनी भारतमाता को ही याद रखता है । यह उसकी विशेषता है । डॉ. प्राणलाल दोशीने सौराष्ट्र में खूब काम किया । उन्हें कौन भूल सकता है ? छोटी-छोटी बातों के द्वारा बहुत अच्छी तरह से बड़े-बड़े संदेश देते थे । बड़े आनंद के साथ अपने कार्यकर्ताओं को, जिनमें कम उत्साह होता था, उन्हें बड़ी शक्ति देते थे । जैसे पारसमणि के स्पर्श से लोहा भी सोना हो जाता है ऐसे अनेक कार्यकर्ताओं का उन्होंने निर्माण किया । माननीय काशीनाथजी ने महाराष्ट्र से आकर बहुत बड़ा कार्य किया । उस समय खेड़ा जीले में प्रचार कर पाना बड़ा कठिन कार्य था । दूसरे विचारधारा के लोग वहाँ सक्रिय थे, लेकिन कर्मठ कार्यशैली के द्वारा जो कार्य उन्होंने किया उसे सब लोग जानते हैं । श्री तलवलकरजी महाराष्ट्र से आये और उन्होंने भी बड़ा कार्य

किया। समाज को बड़ी दिशा और शक्ति दी। अपने शरीर की चिंता किये बिना गुजरात के हर गाँव में टोली बनाकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य का विस्तार किया।

पूज्य के. का. शास्त्रीजी को सारे सद्‌गुणों का समुच्चय-स्वरूप कहें तो भी अतिशयोक्ति नहीं होगी। इतने बड़े विद्वान होने पर भी उनके भीतर की विनम्रता स्मरण में आती है। दो विद्वानों को मैंने निकट से देखा है। विद्वत्ता होने पर भी उनकी नम्रता मनुष्य के हृदय को छू जाती थी। एक थे के. का. शास्त्रीजी और दूसरे थे कृष्णशंकर शास्त्रीजी महाराज। यहाँ मैं के. का. शास्त्रीजी का वर्णन केवल इसलिए कर रहा हूँ कि उन्होंने किसी प्रकार की चिन्ता न करते हुए "विश्व हिन्दू परिषद" और "राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ" के साथ अपना संबंध निभाया। बहुत लोग चाहते थे कि आप स्वयं इतने बड़े विद्वान हैं, किसी विश्वविद्यालय का चांसलर बनवा देंगे, यदि संघ से अपना नाता तोड़ें। उन्होंने कहा कि संघ तो मेरे रक्त में समाया हुआ है। संसार का पद नहीं, परमात्मा का पद चाहिये। श्री कृष्ण भगवान की आराधना करते हुए पुष्टिमार्गीय पूजा में संलग्न रहे। प्राचीन परम्परा का जीवन जीया। किसी के घर में भोजन न करना, अपने आचारशास्त्र का पालन करते हुए हरिजनों को अपने घर बुलाकर उन्हें तोष देते, उनके भीतर भी आत्मीयता का जागरण करने वाले के. का. शास्त्रीजी को कौन भूल सकता है ? वे प्रतिदिन लिखते रहते थे। जब भी मैंने उन्हें देखा लिखते हुए पाया। एक दो बार उनके घर जाने का अवसर भी मिला। तब मैं शंकराचार्य- पद पर था - देखा कि उनके आसपास केवल पुस्तकें ही पुस्तकें होती थीं। उनकी सबसे बड़ी मित्र वही होती थीं। उनके साथ ही सो जाना और उन्हीं से बात करना, यह उनके जीवन का आदर्श था। वास्तव में यह व्यसन जिसे पड़ जाये उसे बड़ा आनंद आता है। दुनिया के मित्र मित्रता निभाते हैं और नहीं भी निभाते, पुस्तकों के साथ मित्रता होने पर दुश्मनी कभी नहीं होती। न पढ़ना चाहें तो चिह्न लगाकर पुस्तक रख दो। बीस वर्ष के बाद भी खोलो तो पुस्तक चिह्न वहीं लगा होगा। वह कभी रोकर नहीं कहती कि इतने दिनों के बाद मिले हो। जब चाहो तब मिलो। सबसे बड़ी मैत्री पुस्तकों के साथ है। ऐसे थे महामहोपाध्याय माननीय के. का. शास्त्रीजी।

मुझे बड़ा आनंद हो रहा है कि राजनीति में रहते हुए अपने प्रेरणा-स्रोतों का स्मरण करना प्रायः कठिन काम है, लेकिन जिनके द्वारा प्रेरणा मिली है, जीवन का निर्माण हुआ है, उनका स्मरण सदा रहना चाहिये। एक सामान्य कार्यकर्ता से प्रचारक, प्रचारक से समाज के प्रतिनिधि, उसके बाद में गुजरात प्रान्त के मुख्यमंत्री पद पर रहकर माननीय श्री नरेन्द्र मोदी ने ईन सब सात्त्विक महापुरुषों का वर्णन किया है, समाज को प्रेरणा देने वाले लोगों का स्मरण किया है। श्री नरेन्द्रभाई मोदी से मेरा पुराना परिचय है। वे मेरे प्रति बड़ा आदरभाव रखते हैं और मैं भी उनके प्रति सद्‌भाव रखता हूँ, क्योंकि राजनीति में रहते हुए भी वे अच्छे प्रमाण है। प्रायः लोग अपने दो चार वर्ष के काल में अपने वैभव के प्रासाद में ही रमण करते हैं। लेकिन नरेन्द्र मोदीजी के व्यक्तिगत जीवन से सिद्ध होता है कि वर्तमान काल में भी प्रामाणिकता के चिह्न उपस्थित किये जा सकते हैं, उन्हें प्रगट करने में वे बड़े सावधान हैं। जब कोई व्यक्ति सत्य के मार्ग पर चलता है तो असत्य के मार्ग पर चलने वाले लोगों को कष्ट होता ही है।

सूर्य का उजाला होगा तो उल्लू को तकलीफ होगी ही। उल्लूओं को प्रसन्न करेंगे तो सूर्य भगवान प्रसन्न नहीं होंगे। इसलिए मुझे अच्छा लगता है कि सूर्य भगवान को प्रसन्न करने के लिए वे सूर्य के साथ मैत्री रखते हैं। कुछ उल्लू उनसे अप्रसन्न हो इस बात की वह चिंता नहीं करते, क्योंकि उल्लू का काल बहुत थोड़ा होता है। सूर्य का काल सदा होता है। उल्लू का काल क्षेत्रीय होता है, लेकिन सूर्य सर्वदेशीय है। जब हम मानते हैं कि भारत में अंधेरा है तो अमरिका में सूर्य प्रकाश देता है। सूर्य कभी अंधकार को स्वीकार करता नहीं। नरेन्द्र मोदीजी भी प्रकाश के पक्के पथिक है। साहसपूर्वक आगे बढ़ रहे हैं।

बड़ा अच्छा ही यह ग्रंथ उन्होंने निर्मित किया है। इस पुस्तक के लेखक श्री नरेन्द्र मोदीजी को अपनी अनन्त शुभकामनाएं देता हूँ। परमात्मा करे उनका साहित्यकार भी जीवित रहे, उनकी राजनीति देश को प्रभावित करते करते एक छोर से दूसरे छोर तक पहूंचे। जो दायित्व उन्हें दिया गया है, उससे भी बड़ा दायित्व परमात्मा उन्हें समर्पित करें, जिससे देश को दिशा मिले, समाज को बल मिले, दुष्टों को भय मिले और सज्जनों को संरक्षण मिले।

श्री नरेन्द्र मोदीजी की पुस्तक की भूमिका लिखने में मुझे प्रसन्नता हुई। श्रेष्ठ पुरुषों के जीवनचरित्र का स्मरण करना मेरे लिए भी आनंद की बात है। भूमिका वे किसी से भी लिखवा सकते थे, उन्होंने मुझे आग्रह किया, आदर दिया। मैं उन्हें अपनी शुभकामनाएं देता हूँ।

परमात्मा उन्हें स्वस्थ रखे और उन्हें गुजरात की ही नहीं, पूरे राष्ट्र की सेवा करने का अवसर प्रदान करे, ऐसी परमात्मा से प्रार्थना है।

बहुत-बहुत धन्यवाद।

- **स्वामी सत्यमित्रानन्दगिरि**

પત્રમ્.... પુષ્પમ્

ભારતની ઓળખ અહીંની
રાજવ્યવસ્થા,
રાજપ્રણાલી
કે
રાજશક્તિ
થકી નથી થતી.

ભારતની ઓળખ તેની સાંસ્કૃતિક
વિરાસતને આધારે થાય છે.

આ અર્થમાં ભારતના નિર્માણમાં
ઋષિ-મુનિઓ,
સંતો-મહંતો,
આચાર્યો-ધર્માચાર્યો,
દાર્શનિકો, જ્ઞાની-વિજ્ઞાની,
શિક્ષકો,
સેવાના ભેખધારીઓ....
જેવા લક્ષ્યાવધિ
મહાપુરુષો રહ્યા છે.

હજારો વર્ષથી એક યા બીજા સ્વરૂપે
આ પરંપરા ચાલતી આવી છે.

પેઢી દર પેઢી સમયાનૂકૂલ પરિવર્તન સાથે નવા રંગરૂપ સાથે
આજે પણ આપણા દેશમાં
એ પવિત્ર પ્રવાહની અનુભૂતિ થતી રહે છે.

ભારતના દરેક ખૂણે સેંકડોની
સંખ્યામાં એવા ભેખધારીઓ આજે પણ
ત્યાગ-તપસ્યાની ઉજ્વળ પરંપરા સાથે
સમાજહિતના કોઈને કોઈ પવિત્ર કાર્યમાં
ખૂંપી ગયેલા જોવા મળે છે.

૨૦મી સદીના ભારતમાં ભારતની સાંસ્કૃતિક
વિરાસતની સેવામાં સમર્પણ માટેનો એક
સંગઠિત પ્રયાસ થયો.
એ પ્રયાસ એટલે રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘ,
પ.પૂ. ડૉ. હેડગેવારજીએ
માતૃભૂમિની સેવા માટે વ્યક્તિ નિર્માણ
દ્વારા સમાજ સંગઠનનું ભગીરથ કાર્ય ઉપાડ્યું.

આજે વિશ્વમાં Leadership માટેની,
શ્રેષ્ઠ મેનેજમેન્ટ માટે



IIM,
HARVARD,
STANFORD જેવી
સેંકડો સંસ્થાઓ ચાલે છે. વિશિષ્ટ ગૂણો
વાળા વ્યક્તિત્વના વિકાસ માટેના તેમાં
પ્રયાસ થયા છે. તેની નામના પણ છે.

પરંતુ ક્યારેક Leadership માટેના આ
પશ્ચિમના મોડેલ સામે R.S.S.
દ્વારા વિકસાવેલા ભારતીય મોડેલનો
તુલનાત્મક અભ્યાસ કરવા જેવો છે.

રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની વિશેષતા એ રહી છે કે તેમાં
ઝાકઝમાળ, પ્રભાવ પાડવા જેવી
બાબતો કરતાં
ત્યાગનું,
તપસ્યાનું,
નિષ્ઠાનું,
પ્રતિબદ્ધતાનું
અદકેરું
મહત્ત્વ રહ્યું છે.

રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના સ્વયંસેવક તરીકે
મને આ પરંપરામાં સંસ્કાર મેળવવાનું
સૌભાગ્ય મળ્યું છે. વ્યક્તિગત રીતે
મારી પોતાની ક્ષમતાને અભાવે તે
સંસ્કાર ગ્રહણ કરવામાં મારી
ઉણપ પણ રહી હોય.... ઘણું બધું
ખૂટતું પણ હોય.... પરંતુ મારી પાસે
જે ઉત્તમ છે તેમાં આ સંસ્કાર સરિતાના
આચમનનું ઘણું ઉંચું મહત્ત્વ છે.

મારી આ સંસ્કારયાત્રા દરમ્યાન
દુનિયાની નજરે તદ્દન નાના, છતાંય ઘણા
ઊંચા જીવનોની નિકટ આવવાનો
અવસર મળ્યો. તેમનો પ્રેમ, તેમની
હૂંફ મારી સંસ્કારયાત્રાના પ્રેરકબળ
રહ્યાં. આ જીવનોની યાદી ઘણી
લાંબી છે. પરંતુ ઉપલબ્ધ સમય
મર્યાદામાં કેટલાકનું પૂણ્યસ્મરણ કરવાનું
શક્ય બન્યું છે.

કશાયની અપેક્ષા વગર જીવન
ખપાવી દેવાની આ ઉજ્વળ પરંપરા
વિષે સમાજમાં બહુ ઓછાને ખબર છે.

જીવનની પ્રત્યેક ક્ષણ અને શરીરનો
પ્રત્યેક કણ માતૃભૂમિની સેવામાં
આહુત કરી દેનાર આવા સમાજ શિલ્પીઓની
ભાગ્યે જ નોંધ લેવાઈ છે.
પરંતુ તેમની સુવાસ આજે પણ
પ્રસરી રહી છે.

ક્યારેક આવા જીવનોની સ્મૃતિઓ
વાગોળવાથી પણ નવી પ્રેરણા મળતી
હોય છે. અને તેથી જ
અંતરમનના આનંદ ખાતર,
સ્વાન્તઃ સુખાય....
આ સમાજશિલ્પીઓના જીવન કાર્યની સુવાસને
શબ્દબદ્ધ કરી
પુસ્તક રૂપે પ્રગટ કરવાનો નમ્ર પ્રયાસ કર્યો છે.

આવા શ્રેષ્ઠ જીવનોનું મૂલ્યાંકન
કરવાની ન તો મારી યોગ્યતા છે કે
નતો મારી ક્ષમતા છે. દરેક વ્યક્તિના જીવનનાં અનેક
ઉજ્જ્વળ પાસાં હોય છે. દરેક વિરાટ
વ્યક્તિત્વમાંથી માત્ર આચમન ભર લઈને
વાચકોને પીરસી રહ્યો છું.

વ્યક્તિગત રીતે એક સ્વયંસેવક
તરીકે આ પુસ્તક દ્વારા
R.S.S.ની મહાન ઉજ્જ્વળ પરંપરાને
આદરાંજલિ આપું છું. ઋણ સ્વીકાર કરું છું.

વાચક મિત્રોને આ પુસ્તક દ્વારા
R.S.S.ને સમજવાનો પણ અવસર
મળશે એવો મને વિશ્વાસ છે.

આ પુસ્તકના નિર્માણમાં
પ્રવીણ પ્રકાશન પ્રા. લિ.ના ઉમંગની
સહર્ષ નોંધ લઉં છું.

નરેન્દ્ર મોદી



અનેરો આનંદ...

આપણા મહાન રાષ્ટ્રને વિશ્વમાં ઉન્નતમસ્તકે અને ઉચ્ચસ્થાને બિરાજમાન કરવા માટે પોતાના જીવનનું સર્વસ્વ મા-ભારતીને ચરણે અર્પણ કરી, જીવનના અંત સુધી... છેલ્લા શ્વાસ સુધી અવિરત પરિશ્રમ કરનાર ચારિત્રસંપન્ન તપસ્વી વ્યક્તિઓની એક લાંબી પરંપરા ધરાવતું શ્રેષ્ઠ સંગઠન એટલે રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘ.

આ વિશ્વવ્યાપી મહાન સંગઠનના એક ભાગરૂપે ગુજરાત પ્રાંતમાં આપણી આઝાદી પહેલાના સમયથી શરૂ કરીને વર્તમાન સમય અને પરિસ્થિતિ સુધીમાં અનેક નામી-અનામી વ્યક્તિઓએ પરપ્રાંતમાંથી આવીને ગુજરાતને પોતીકું બનાવીને સવાઈ ગુજરાતી બનીને પોતાનું જીવન રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના આ મહાન કાર્યને સમર્પિત કરી દીધું.

આ પરંપરાના કેટલાક મહાન વ્યક્તિઓ વિશે આપણા ગુજરાત રાજ્યના લોકપ્રિય મુખ્યમંત્રી મા. શ્રી નરેન્દ્રભાઈ મોદીએ સ્મૃતિગાથા રૂપે આલેખીને એક અદ્ભુત કાર્ય સંપન્ન કરેલ છે. મા. શ્રી નરેન્દ્રભાઈના જીવનનો મહત્તમ ભાગ સંઘકાર્ય અને આવા મહાન વ્યક્તિઓ વચ્ચે પસાર થયો છે. તેઓએ આ વ્યક્તિઓ સાથે ઘણો સમય કાર્ય પણ કરેલ છે. અને ખૂબ નજીકથી નીરખ્યા પણ છે... પરિણામે હૃદયના ભાવો સાથે શ્રી નરેન્દ્રભાઈએ આ સ્મૃતિગાથાઓ આલેખી છે.

વર્તમાન વિકટ સમયમાં કોઈપણ જાતની અપેક્ષા વગર પોતાનું સંપૂર્ણજીવન રાષ્ટ્રના ચરણે ધરી દેવાની આ મહાન પરંપરાની બહુ ઓછા વ્યક્તિઓને જાણ હશે.

આ ગ્રંથમાં જે સ્મૃતિગાથાઓ મા. શ્રી નરેન્દ્રભાઈએ આલેખી છે તેમાંના મોટાભાગના વ્યક્તિઓનો મને વિદ્યાર્થીજીવનમાં સંસર્ગ અને સંસ્પર્શ થયો છે તે મારા જીવનનું યાદગાર પાસું છે. ૧૯૬૭માં મેં પ્રથમ વર્ષ - સંઘશિક્ષા વર્ગ સમયે એક મહિના સુધી આ બધાને ખૂબ નજીકથી નિહાળવાની તક મળી હતી... તે આજે પણ સ્મૃતિપટ પર સ્પષ્ટરૂપે અંકિત થયેલ છે. આ ઋષિતુલ્ય માનવોને હૃદયપૂર્વક શ્રદ્ધાસુમન...

આ ગ્રંથના પ્રકાશનમાં અમને ઘણા વ્યક્તિઓનો સહકાર પ્રાપ્ત થયો છે. દુર્લભ ફોટોગ્રાફ્સ મેળવવાનું કામ ખૂબજ કપરું હતું... પરંતુ તેમાં 'સાધના' સાપ્તાહિક તથા મા. શ્રી ભાસ્કરભાઈ પંડ્યાએ ખૂબ પ્રેમથી સહકાર આપ્યો છે. 'રાષ્ટ્રસાધના' તથા 'ચિત્રાંજલિ' વગેરે પણ ઉપયોગી બન્યા તે સૌનો હૃદયપૂર્વક આભાર ! આ ગ્રંથ તૈયાર કરવામાં અમારા સ્નેહીશ્રી દિનેશભાઈ ટીલવા તથા ભાઈ મિતેષ ઘેટીયાએ ખૂબ જહેમત ઉઠાવી છે તે માટે તેઓનો પણ ખૂબ આભાર.

રાષ્ટ્રયજ્ઞના આ કાર્યમાં નિમિત્તરૂપ બનવાનો પ્રવીણ પ્રકાશન પ્રા. લિ.ને અનેરો આનંદ છે.

- ગોપાલ એમ. માકડિયા
પ્રવીણ પ્રકાશન પ્રા. લિ.

અ-નુ-ક્ર-મ

અત્યારે જરૂર છે, પ્રબળ કર્મયોગની અને સાથોસાથ
હૈયામાં અખૂટ હિંમત અને અદમ્ય બળની.

–સ્વામી વિવેકાનંદ

૧

વિવેકાનંદજીને ડૉક્ટરજીની જીવનાંજલિ





સ્વામી વિવેકાનંદ

વિવેકાનંદ કહેતા હોય કે "હિન્દુ કહેવડાવવામાં શરમ શાની ?" કે ડૉક્ટરજી કહેતા હોય કે "હું કહું છું આ હિન્દુ રાષ્ટ્ર છે." વિવેકાનંદજી કહેતા હોય કે "દરિદ્રનારાયણની સેવા એ જ માનવધર્મ છે" કે ડૉક્ટરજી કહેતા હોય કે "દેશ કે લિયે જીના શીખો." જાણે પોતપોતાની રીતે બન્ને મહાપુરુષોએ સમાજને સમાન દિશા જ ચીંધી છે.

ધ્યેય આયા દેહ લેકર
શૂન્ય પથ પર બઢ રહી થી
દેશ કી ઉગતી જવાની
શૂન્ય મેં લય હો રહી થી
રાષ્ટ્ર જીવન કી કહાની
તેજ પ્રકટા થા ઉસી ક્ષણ
શક્તિ કા નવસૃજન કરને



સ્વામી રામકૃષ્ણ પરમહંસ



મા શારદામણિ દેવી



બેલુર મઠ – કોલકતા

વિવેકાનંદજી ૧૮૮૧માં શ્રી રામકૃષ્ણદેવના પરિચયમાં આવ્યા. માત્ર પાંચ જ વર્ષના ટૂંકા ગાળામાં રામકૃષ્ણદેવે વિદાય લીધી હતી. એક વાર રામકૃષ્ણદેવે શક્તિપાત દ્વારા વિવેકાનંદજીને સઘળું આપી દીધું અને કહ્યું કે હવે હું ફકીર થઈ ગયો છું. ડૉક્ટરજીના જીવનમાં આનાથી વિપરીત પણ આવી જ ઘટના બને છે. મૃત્યુનાં પાંચ જ વર્ષ પહેલાં જેના માથે આ મહાન કાર્યોનો ભાર મૂકવાનો છે એ પ્રા. માધવરાવ – શ્રી ગુરુજીનો ભેટો થાય છે અને પાંચ જ વર્ષમાં જાણે શક્તિપાત કરી પોતે રામકૃષ્ણદેવની જેમ ખાલી થઈ જાય છે, વિદાય લઈ લે છે.

જીન્સનું પેન્ટ પહેર્યું હોય, આધુનિક કેશસજ્જા હોય અને મિત્રવર્તુળમાં નાસ્તિક હોવા અંગે ગૌરવ લેવાની ફૅશનનો ભોગ બન્યો હોય એવો યુવાન પણ એક વ્યક્તિત્વ સામે માથું ઝુકાવ્યા વગર રહી શકતો નથી. માત્ર ભારતના જ નહીં પરંતુ ભારતને થોડેઘણે અંશે જાણનારા અન્યો પણ જેમની સામે નતમસ્તક થઈ જાય છે એવું આ સદીનું પ્રેરક નામ એટલે સ્વામી વિવેકાનંદ.

દેશ જ્યારે ડૉ. હેડગેવાર જન્મશતાબ્દી ઊજવી રહ્યો છે ત્યારે સ્વાભાવિક રીતે જ વિવેકાનંદ યાદ આવ્યા વગર રહેતા નથી. આવું અમસ્તું જ નથી થતું. વિવેકાનંદજીનું ચિંતન અને ડૉક્ટરજીનું કાર્ય એક અદ્‌ભુત સામ્ય ધરાવે છે. સૂક્ષ્મતાથી આ બન્ને તરફ નજર નાખીએ તો એમ લાગે કે ડૉક્ટર હેડગેવારે પોતાના જીવનને આહુત કરી દઈ વિવેકાનંદને એક અનોખી અંજલિ – જીવનાંજલિ અર્પી દીધી.

ડૉક્ટર હેડગેવાર જન્મજાત દેશભક્ત હતા. બાળપણમાં મીઠાઈ ફેંકી દેવાનું કૃત્ય હોય કે 'વંદે માતરમ્'નો જયઘોષ કરી નિશાળમાંથી બરતરફી વહોરવાનું સાહસ હોય, બાલ્યકાળમાં તેમનામાં તીવ્રપણે પ્રગટતી દેશભક્તિનું એ દ્યોતક છે. વિવેકાનંદનું જીવન પણ બાળપણથી જ કશુંક શોધવામાં, માનવજાત માટે કંઈક પ્રાપ્ત કરવા વ્યગ્ર રહેતું. ૧૫ વર્ષની નાનકડી ઉંમરે વિવેકાનંદ ૧૮૭૮માં કેશવચંદ્ર સેન પાસે પહોંચી જાય છે અને બ્રહ્મસમાજ દ્વારા સમાજસેવાનું કામ આરંભી દે છે.

બાલ્યકાળથી જ વિવેકાનંદજી અને ડૉક્ટરજીની અંતિમ લક્ષ્ય માટેની શોધ સતત ચાલતી રહી. ધર્મવેત્તાઓ, આચાર્યગણ, સમાજસેવકો, સંતો-મહંતો પાસેથી સત્ય જાણવા વિવેકાનંદ સતત મથામણ કરતા રહ્યા. ડૉક્ટરજી પણ દેશની આઝાદી માટે કંઈક ને કંઈક કરવાની તાલાવેલીમાં જાતજાતના અને ભાતભાતના માર્ગેથી પસાર થયા. ક્યારેક ટિળકજી, તો ક્યારેક ક્રાંતિકારીઓ, ક્યારેક સુભાષ તો ક્યારેક અરવિંદ. ડૉક્ટરસાહેબ સત્યની શોધ માટે, કશુંક પરિણામકારી કરી બતાવવાના હેતુથી દોડતા જ રહ્યા.

બંનેની કૌટુંબિક પરિસ્થિતિ તદ્દન કંગાળ હતી. નરેન્દ્રનાથનાં માતુશ્રી નરેન્દ્રને ધક્કા મારીમારીને કાલીમાતા પાસે માગણી કરવા મોકલતાં. ક્યાંક કામ- ધંધો મળી જાય તેવી આશા રાખતાં. એવી કંગાળ સ્થિતિમાં પણ વિવેકાનંદનું મન તે તરફ ન જ વળ્યું. ડૉક્ટરજીના પણ એવા જ હાલ. ઘરે મહેમાન આવે, રાષ્ટ્રને સમર્પિત શ્રેષ્ઠ જીવનો સાથે મળવાનું થાય, તેમના સ્વાગત માટે ઘરમાં એક કપ ચાની પણ સુવિધા નહીં. પણ આવી વ્યવહારુ જગતની અડચણો આ બંને મહાપુરુષોને વિચલિત ન કરી શકી.

પ્રારંભથી જ વિવેકાનંદની ઉત્કૃષ્ટ ઇચ્છા હતી પરમાત્માને પામવાની, જગતને – તેના મૂળરૂપે જાણવાની; અને પોતાની વૃત્તિ-પ્રવૃત્તિને એ દિશામાં જ તેઓ ઢાળતા રહ્યા હતા. પરંતુ જીવનનાં છેલ્લાં ૧૫ વર્ષમાં તેમના જીવનનું લક્ષ્ય



બદલાઈ ગયેલું હતું. વ્યક્તિગત મોક્ષની કામના મરી પરવારી હતી. ઈશ્વરના સાક્ષાત્કારની કડાકૂટ છોડી દરિદ્રનારાયણની સેવા જ સાચી છે તેવું સ્વીકારી તે માર્ગ એમણે ધારણ કરી લીધો હતો. ડૉક્ટરજીના જીવનમાં પણ પ્રારંભિક કાળ માત્ર દેશને આઝાદ કરવા માટે ખપી જવાની ઉત્કટ ભાવનાઓથી ભરેલો હતો. દેશને ગુલામ બનાવનારાઓ સાથે સંઘર્ષ એ જાણે પ્રવૃત્તિ બની ગયો હતો. પરંતુ વિવેકાનંદજીની જેમ તેમના જીવનમાં પણ છેલ્લાં ૧૫ વર્ષ દરમ્યાન જીવનનું લક્ષ્ય

વધુ વ્યાપક બની ગયું. આઝાદી નહીં, માત્ર ગુલામી લાવનારાઓનો વિરોધ નહીં, પણ રાષ્ટ્રની પરમોન્નતિ તેમનું જીવનધ્યેય બની ગઈ. સમાજપુરુષનો સાક્ષાત્કાર કરવાની ઉદાત્ત પ્રક્રિયામાં સમાજની પ્રત્યેક વ્યક્તિ તેમને મન પરમાત્મા બની ગઈ. વિવેકાનંદની જેમ જ એકમાત્ર ભારતમાતા તેમની આરાધ્યદેવી બની ગઈ.

વિવેકાનંદજી ૧૮૮૧માં શ્રી રામકૃષ્ણદેવના પરિચયમાં આવ્યા. માત્ર પાંચ જ વર્ષના ટૂંકા ગાળામાં રામકૃષ્ણદેવે વિદાય લીધી હતી. એક વાર રામકૃષ્ણદેવે શક્તિપાત દ્વારા વિવેકાનંદજીને સઘળું આપી દીધું અને કહ્યું કે હવે હું ફકીર થઈ ગયો છું. ડૉક્ટરજીના જીવનમાં આનાથી વિપરીત પણ આવી જ ઘટના બને છે. મૃત્યુનાં પાંચ જ વર્ષ પહેલાં જેના માથે આ મહાન કાર્યોનો ભાર મૂકવાનો છે એ પ્રા. માધવરાવ – શ્રી ગુરુજીનો ભેટો થાય છે અને પાંચ જ વર્ષમાં જાણે શક્તિપાત કરી પોતે રામકૃષ્ણદેવની જેમ ખાલી થઈ જાય છે, વિદાય લઈ લે છે.

પોતાના મૃત્યુનાં ૧૫ વર્ષ પહેલાં વિવેકાનંદજીએ રામકૃષ્ણ મિશનની સ્થાપના કરી, જીવનની સઘળી પ્રવૃત્તિઓ તેમાં કેન્દ્રિત કરી દે છે. તે જ રીતે પોતાના મૃત્યુનાં ૧૫ વર્ષ પૂર્વે ડૉ. હેડગેવારે પણ રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની સ્થાપના કરી, જીવનની સઘળી પ્રવૃત્તિઓ તેને સમર્પિત કરી દે છે. બંને મહાપુરુષોની આ પ્રવૃત્તિઓની અડચણો પણ સમાન હતી. વિવેકાનંદજી દક્ષિણેશ્વર અને કલકત્તાની મધ્યમાં બારાનગરમાં એક જૂના મકાનમાં મઠ બનાવે છે. મઠની પ્રવૃત્તિમાં સંકળાયેલા સહુને પેટભર ભોજન પણ મળતું નહીં. આર્થિક કંગાલિયત, જરૂરી સાધનોનો સદંતર અભાવ – આવી વિકટ પરિસ્થિતિમાં રામકૃષ્ણ મિશનની શરૂઆત થાય છે. રા. સ્વ. સંઘની શરૂઆત પણ આવી જ નિર્ધન અવસ્થામાં થઈ. સાથીઓને અનેક દિવસ ચણા ખાવાનાં પણ ફાંફાં પડતાં હતાં. શ્રી રામકૃષ્ણદેવના મૃત્યુ પછી વ્યથિત રહેતા વિવેકાનંદ આત્મકલ્યાણને માર્ગે જવા હિમાલયવાસી પવહારી બાવા પાસે હઠયોગ શીખવા પહોંચ્યા. બેત્રણ વાર પ્રયત્નો કર્યા, પણ દરેક વખતે રામકૃષ્ણદેવનો સૂક્ષ્મ આત્મા આવી તેમને તેમ કરતાં રોકતો અને તેમને કોઈ અલગ ધ્યેય તરફ વાળતો. આખરે વિવેકાનંદ એ બધું પડતું મૂકી પાછા વળી ગયા. ડૉક્ટરસાહેબના જીવનમાં પણ રામકૃષ્ણદેવ જેવું જ કામ કરવાની ઘડી આવી હતી. આધ્યાત્મિક દુનિયામાં ગળાડૂબ, આત્મકલ્યાણના માર્ગે ગયેલ, યોગ અને સાધનાની દુનિયામાં વળી ગયેલા શ્રી ગુરુજીને સમાજકલ્યાણના માર્ગે વાળવાનું અદ્‌ભુત કાર્ય ડૉક્ટર- સાહેબે કર્યું હતું.

રામકૃષ્ણ મિશન દ્વારા વિવેકાનંદે દરિદ્રનારાયણ માટે પોતાનું જીવન સમર્પિત કરી દીધું. આ કાર્યને યશસ્વી રીતે પાર પાડવા તેમણે પોતાની જાતને યોગ્ય બનાવવાનો સંકલ્પ કર્યો. મા શારદાદેવીના આશીર્વાદ લેવા ગયા અને પછી પોતાના ગુરુભાઈઓને કહ્યું : "I shall not return until I acquire such realisations that my very touch will transform a man." અર્થાત્ મારા સ્પર્શમાત્રથી વ્યક્તિમાં પરિવર્તન આવે એવું દર્શન પ્રાપ્ત કર્યા વિના હું પાછો નહીં ફરું.

અહીં તેમની વ્યક્તિ માટેની ભક્તિ વ્યક્ત થાય છે. આવા દિવસોમાં બીજી એક જગ્યાએ એમણે કહ્યું : "I am going away; but I shall never come back until I can burst on society like a bomb, and make it follow me like a dog." અર્થાત્ અત્યારે તો હું જાઉં છું, પણ સમાજમાં બૉંબના ધડાકાની જેમ તૂટી પડી ન શકું અને લોકોને મને અનુસરતા ન કરી શકું ત્યાં સુધી પાછો નહિ ફરું.

અહીં સમાજની દુરવસ્થા પ્રત્યેનો તેમનો આક્રોશ અને જવાબદારી બન્ને પ્રગટે છે. ડૉ. હેડગેવારજીના જીવનમાં પણ રા. સ્વ. સંઘ દ્વારા વ્યક્તિનિર્માણ એકમાત્ર પ્રવૃત્તિ બની ગયું. શાખા દ્વારા સમાજ અને રાષ્ટ્રને યોગ્ય માનવજીવનો તૈયાર



કરવા તેમણે પોતાની જાતને ખર્ચી દીધી. પ્રતિષ્ઠા આપનારી, મોભાવાળી સઘળી પ્રવૃત્તિઓને આટોપી લઈ માત્ર વ્યક્તિઘડતર માટે જિંદગીને સીમિત કરી દેવાનું કામ લાગે છે તેટલું સરળ નહોતું. પોતાના આ નિર્ધારિત કાર્યને માટે શરીરનો પ્રત્યેક કણ અને જીવનની પ્રત્યેક ક્ષણ ખર્ચી દેવાની તમન્ના સાથે તે મહાન કાર્યમાં તલ્લીન થઈ ગયા. વિવેકાનંદ પણ રાષ્ટ્રકલ્યાણના ધ્યેય સાથે લગાતાર ભ્રમણ કરવા નીકળી પડ્યા. હિમાલયની મધ્યે આવેલું અલમોડા હોય કે અલકનંદા, તેહરી હોય કે રાજપુર, હરિદ્વાર હોય કે હૃષીકેશ, સંતો-મહંતો-ગૃહસ્થીઓ સાથે વિવેકાનંદે એક જ રટ આદરી – રાષ્ટ્રકલ્યાણની.

બાલ્યકાળથી જ વિવેકાનંદજી અને ડૉક્ટરજીની અંતિમ લક્ષ્ય માટેની શોધ સતત ચાલતી રહી. ધર્મવેત્તાઓ, આચાર્યગણ, સમાજસેવકો, સંતો-મહંતો પાસેથી સત્ય જાણવા વિવેકાનંદ સતત મથામણ કરતા રહ્યા. ડૉક્ટરજી પણ દેશની આઝાદી માટે કંઈક ને કંઈક કરવાની તાલાવેલીમાં જાતજાતના અને ભાતભાતના માર્ગેથી પસાર થયા. ક્યારેક ટિળકજી, તો ક્યારેક ક્રાંતિકારીઓ, ક્યારેક સુભાષ તો ક્યારેક અરવિંદ. ડૉક્ટરસાહેબ સત્યની શોધ માટે, કશુંક પરિણામકારી કરી બતાવવાના હેતુથી દોડતા જ રહ્યા.

વિવેકાનંદ કહેતા હોય કે "હિન્દુ કહેવડાવવામાં શરમ શાની ?" કે ડૉક્ટરજી કહેતા હોય કે "હું કહું છું આ હિન્દુ રાષ્ટ્ર છે." વિવેકાનંદજી કહેતા હોય કે "દરિદ્રનારાયણની સેવા એ જ માનવધર્મ છે" કે ડૉક્ટરજી કહેતા હોય કે "દેશ કે લિયે જીના સીખો." જાણે પોતપોતાની રીતે બન્ને મહાપુરુષોએ સમાજને સમાન દિશા જ ચીંધી છે.

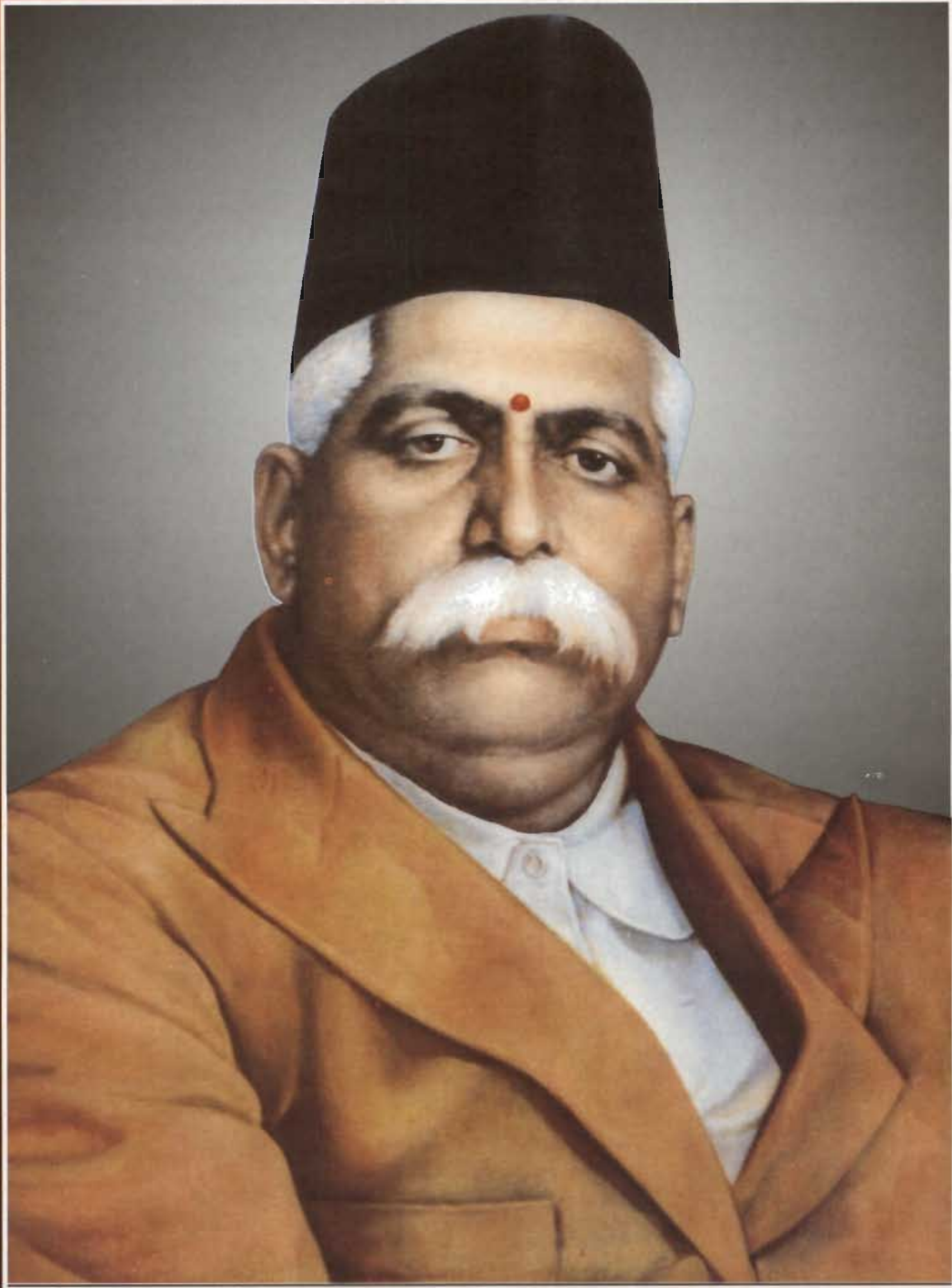
ડૉક્ટરજીના જીવનની મહત્તા એ બાબતમાં છે કે તેમણે ઘોષણા કર્યા વગર વિવેકાનંદજીની બે મહત્ત્વાકાંક્ષાઓ પૂર્ણ કરવાનું બીડું ઝડપ્યું અને આજે ૬૦ વર્ષ પછી એમ કહ્યા વગર ચાલે નહીં કે તેમણે વિવેકાનંદના સ્વપ્નને સાકાર કરી બતાવ્યું. રાષ્ટ્રની ચિંતા વ્યક્ત કરતાં વિવેકાનંદે એક વાર કહ્યું હતું, "અગર મારી પાસે લોખંડી સ્નાયુવાળા ધ્યેય-સમર્પિત સો યુવકો હોય તો હું હિન્દુસ્થાનની રોનક બદલી નાખું." ડૉક્ટરજીના કાર્ય તરફ નજર કરીએ તો શાખાપદ્ધતિ દ્વારા તેમણે વિવેકાનંદની કલ્પના મુજબના લોખંડી સ્નાયુવાળા, અભયને ધારણ કરેલા, રાષ્ટ્રપુરુષને સમર્પિત સંસ્કારી યુવાનોની હારમાળાનું નિર્માણ કરી દીધું અને રાષ્ટ્ર- જીવનના પ્રત્યેક ક્ષેત્રનો કાયાકલ્પ કરવા તેમણે સર્વસ્વ હોડમાં મૂકવાની સ્પર્ધા આદરી. હા, તેના મૂળમાં ડૉક્ટરજીની દીર્ઘદૃષ્ટિ, ત્યાગ અને તપસ્યા જ મુખ્ય છે.

વિવેકાનંદે તત્કાલીન સમાજની મનઃસ્થિતિ જોઈ આક્રોશપૂર્ણ રીતે એક વાર કહ્યું હતું : "આવનારાં પચાસ વર્ષ માટે ભારતની પ્રજાએ પોતાનાં બધાં જ દેવી-દેવતાઓને ડુબાડી દેવાં જોઈએ અને એકમાત્ર ભારતમાતાને આરાધ્યદેવી ગણી તેની જ આરાધના કરવામાં સર્વસ્વ ન્યોછાવર કરી દેવું જોઈએ." અહીં પણ વિવેકાનંદની આ હૃદયેચ્છાને ડૉક્ટરસાહેબે ચરિતાર્થ કરી બતાવી. પોતાની આગવી કાર્યશૈલી દ્વારા ડૉક્ટરસાહેબે ભારતમાતાને જ પોતાની આરાધ્યદેવી માનનાર સમાજપુરુષની રચના કરી દીધી. વ્યાપક રીતે સમાજમાં ભારતમાતાની આરાધના કરવાની પ્રવૃત્તિ વિકસી. "ભારતમાતાની જય" તો જાણે આઝાદી પહેલાંના "વંદે માતરમ્"ની જેમ પ્રેરક ઘોષવાક્ય બની રહ્યું છે.

આપણા દેશમાં સંન્યાસીની એક પરંપરાગત કલ્પના રહી છે. વિવેકાનંદે સંન્યાસીની આખી વ્યાખ્યા જ બદલી નાખી. વ્યક્તિગત સાધનામાં લીન સંન્યાસીને તેમણે સમાજસેવાનો ભેખધારી બનાવી દીધો. રામકૃષ્ણ મિશનના સંન્યાસી માટે દરિદ્રનારાયણની સેવા જ તેની આરાધના છે. ડૉક્ટરસાહેબે પણ આવી જ એક મહાન ક્રાંતિ સર્જી દીધી. તેમણે સંઘમાં પ્રચારક-પરંપરા શરૂ કરી. વ્યક્તિગત જીવનની સઘળી આકાંક્ષા છોડી માત્ર રાષ્ટ્ર અને સમાજ માટે જીવનાર વ્યક્તિઓની આ પ્રચારક-પરંપરા અંગે ચિન્મય મિશનના પૂ. સ્વામી ચિન્મયાનંદજી કહે છે, "ડૉક્ટરસાહેબે આ દેશને સફેદ-વસ્ત્રધારી સંન્યાસીઓની મોટી ભેટ આપી છે."

આવી તો અનેક બાબતો છે કે જેમાં વિવેકાનંદના વિચાર અને ડૉક્ટરસાહેબની કૃતિમાં અદ્ભુત સામ્ય જોવા મળે છે. એમ લાગે છે કે ડૉક્ટરસાહેબે પોતાના કર્તવ્ય દ્વારા વિવેકાનંદનાં સ્વપ્નોને સાકાર કરવા જીવનને હોમી દીધું. એક પ્રકારે વિવેકાનંદજીને તેમની આ જીવનાંજલિ જ છે.





પ. પૂ. ડૉ. કેશવરામ બલીરામ હેડગેવાર

જલતે ગયે, જલાતે જલાતે

આંધિયોં કે બીચ
જલ ચુકે
કભી
બુઝ ચુકે કુછ દીપ થે.

ઑર ભી કુછ દીપ થે
તિમિર સે લોહા લિયે થે
બહાતે બહાતે
પ્રકાશ
યૂં તો અંધકાર મેં સમા ગયે થે,
પર એક દીપ
જો આપ થે
જલતે ગયે,
જલાતે જલાતે.

આંધી આયે
તિમિર છાયે
ફિર ભી જલે,
જલાતે જલાતે.

અંધકાર સે ઝૂઝતા થા
સંકલ્પ જો ઉર મેં ભરા થા
સૂરજ આને તક જલના થા
બસ, જલતે ગયે,
જલાતે જલાતે.

જો જલે થે
જો જલે હૈં
જો જલ રહે હૈં
બન કિરણ ફહરા રહે હૈં
રોશની બરસા રહે હૈં
તભી તો
સિદ્ધિયોં કા સૂરજ નિકલ પડા હૈ
ચહું ઓર રોશની હી રોશની
રોશની હી રોશની મેં
સમાયા વહ દીપ જો.

(રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના આદ્યસ્થાપક
પ. પૂ. ડૉ. કેશવ બલિરામ હેડગેવારને અંજલિરૂપ વ્યક્તભાવ.)



 પ. પૂ. ડૉ. હેડગેવાર સ્મૃતિ મંદિર – નાગપૂર 



"હું આપને આજે
કોઈ નવી વાત બતાવી
રહ્યો નથી.
પ્રત્યેક સ્વયંસેવકે
સંઘકાર્યને જ પોતાના
જીવનનું મુખ્ય કાર્ય
સમજવું જોઈએ.
હું આજે આપને એવા
દઢ વિશ્વાસ સાથે વિદાય
આપી રહ્યો છું કે
આપ આ મંત્રને
આપના હૃદયમાં ધારણ
કરીને અહીંથી જશો કે
એકમાત્ર સંઘકાર્ય જ મારું
જીવનકાર્ય છે."

('અંતિમસંદેશ'માંથી)



ભારત માતા

૨

પૂજનીય શ્રી ગુરુજી



 પ. પૂ. માધવરાવ સદાશીવરાવ ગોળવલકર (શ્રી ગુરુજી) 



તેઓનું જીવન વૈવિધ્યસભર હતું. એમના જીવનને સમજવું એક કોયડા સમાન છે. તેઓ જેના અંતરને સ્પર્શ કરતા એમને લાગતું કે આ તો કોઈ આધ્યાત્મિક પુરુષ છે. પરંતુ દુનિયાએ જે આધ્યાત્મિક પુરુષોને જોયા છે એ બધાની જેમ તેઓ જનસમૂહથી દૂર ભાગતા નહોતા. તેઓ હજારો લોકોની વચ્ચે રહેતા હતા અને લોકોમાં સમાજબોધ અને રાષ્ટ્રભક્તિ જગાડતા હતા.



જ્ઞાન મેં તો આપ ઋષિવર દીખતે થે આદ્યશંકર
ઔર ભોલા ભાવ શિશુસા ખેલતા મુખ પર નિરંતર
દીન દુખિયોં કે લિયે થી દ્રવિત કરુણાધાર મન મેં
શત નમન માધવ ચરણ મેં









ડૉ. હેડગેવાર ભવન, નાગપુર

ભારતના કરોડો નાગરિકોની પ્રતિનિધિરૂપ હિન્દુસ્થાનની સંસદે એક મહાપુરુષને શ્રદ્ધાંજલિ આપી હતી. આ મહાપુરુષે સંસદનાં દ્વાર ક્યારેય જોયાં ન હતાં, છતાં સંસદનાં બંને ગૃહોએ પોતાની પરંપરા છોડી, બંને ગૃહમાંથી કોઈ પણ ગૃહના સભ્ય નહોતા એવા આ મહામાનવને શ્રદ્ધાંજલિ આપી. ભારતનાં પ્રધાનમંત્રી શ્રીમતી ઈન્દિરા ગાંધીએ કહ્યું હતું, 'સંસદના સભ્ય નથી એવા એક પ્રતિષ્ઠિત સજ્જન શ્રી ગોળવલકર આપણી વચ્ચે નથી રહ્યા. તેઓ વિદ્વાન હતા, શક્તિશાળી હતા, આસ્થાવાન હતા. પોતાના પ્રભાવી વ્યક્તિત્વ અને વિચારો પ્રત્યેની અતૂટ નિષ્ઠાને કારણે રાષ્ટ્રજીવનમાં એમનું મહત્ત્વપૂર્ણ સ્થાન હતું.'

દેશભરનાં સમાચારપત્રોએ આ મહાપુરુષને શ્રદ્ધાંજલિ આપી હતી. હૈદરાબાદના 'ધી ડેક્કન ક્રોનિકલ'એ લખ્યું : 'સ્વામી વિવેકાનંદ સમાન તેઓ પણ ભારતના આત્માની સાકાર મૂર્તિ હતા.' 'નવભારત ટાઈમ્સ'એ લખ્યું હતું : 'વિચાર અને આદર્શોમાં મતભેદ ધરાવનારા લોકો પણ સ્વર્ગીય ગુરુ ગોળવલકરજીના જીવનની નિઃસ્પૃહતા, તેજસ્વિતા, ત્યાગ અને તપસ્યાનો હાર્દિક રીતે સ્વીકાર કરે છે. આ ગુણોનો આપણા રાષ્ટ્રીય જીવનમાંથી લોપ થઈ રહ્યો છે. આદર્શોની વ્યક્તિગત સાધના આજના સેંકડો વિચારકોના હાથમાં ઉપહાસનો વિષય બની રહી છે, પરંતુ એ એક ઐતિહાસિક નિર્વિવાદ તથ્ય છે કે કોઈ પણ રાષ્ટ્રનું એક શક્તિશાળી રાષ્ટ્રમાં ત્યાં સુધી નિર્માણ નથી થઈ શકતું, જ્યાં સુધી તેમાં એ ગુણોનો સમાવેશ ન થાય કે જે શ્રી ગોળવલકરજીના જીવનમાં દૃષ્ટિમાન થતા હતા. આ મહાન ગુણો સમક્ષ ધર્મનિરપેક્ષતા અને લોકતંત્રવાદી જીવનદર્શનની ચમક ફીકી પડી જાય છે.'

'ધી મધરલૅન્ડ' લખે છે : 'આજે શ્રી ગુરુજી હયાત નથી, પરંતુ અસંખ્ય જીવનોમાં જે પ્રકાશ તેમણે પેટાવ્યો છે તે જ્યારે-જ્યારે અંધકાર આ દેશને ગળી જવા મથતો હશે ત્યારે–ત્યારે દેશને વિધવિધ રીતે અજવાળશે. એમના નિધન પ્રત્યે અમે શોક વ્યક્ત કરીએ છીએ, પરંતુ હજુ સુધી નહીં જન્મેલી ભવિષ્યની પેઢીઓ હર્ષપુલકિત થશે કે આવો એક ફિરસ્તો એક વાર આ ધરતી ઉપર પદાર્પણ કરી ગયેલો. તેમની પવિત્ર સ્મૃતિને અમારી ભાવભીની અંજલિ.'

'હિન્દુસ્તાન'એ લખ્યું : 'ગુરુ ગોળવલકરજીનું જીવન શ્રેષ્ઠ સમપર્ણનું એક ઉજ્જ્વળ ઉદાહરણ હતું. ધ્યેય માટે જીવવા અને મરવા માટે દૈનંદિન જીવનમાં જે સંયમ, સંકલ્પશક્તિ અને કષ્ટ સહન કરવાની શક્તિ અપેક્ષિત હોય છે – ગુરુજીમાં એ ગુણો સંસ્કારગત હતા. ભારતના પ્રાચીન ઋષિમુનિઓની માફક પોતાની સંપૂર્ણ સાર્થકતામાં નિચોવીને એમણે કુશળ રસાયણશાસ્ત્રીની પેઠે એનો ઉપયોગ કર્યો. સાધના અને સિદ્ધિ વચ્ચે એમણે સાધના જ પસંદ કરી, કારણ કે એમનો નિષ્કર્ષ હતો કે સાધના જ ધ્રુવશક્તિ છે. ગુરુ ગોળવલકરનું જીવન અને એમની રાષ્ટ્રસેવા શુદ્ધ સુવર્ણ જેવા પુરુષાર્થની છે. સચ્ચરિત્ર એમની તપશ્ચર્યા હતી અને રાષ્ટ્રભક્તિ એમની નિષ્ઠા. એમની પ્રત્યે ચારિત્રિક સંદેહને કોઈ અવકાશ નથી.'

મુંબઈના એક માસિકે લખ્યું : 'એમનું વ્યક્તિત્વ વ્યાસ, વાલ્મીકિ, રામદાસ, તુકારામ, વિવેકાનંદ અને બીજા હજારો ઋષિઓની પરંપરામાં ઢળેલું હતું.'

ગુજરાતનાં સમાચારપત્રોએ એમને શ્રદ્ધાંજલિ આપી હતી. દૈનિક 'ગુજરાત સમાચાર'એ લખ્યું : 'શ્રી ગુરુજીનું દેહાવસાન થતાં દેશે રાષ્ટ્રવાદનો એક પ્રબળ પુરસ્કર્તા ગુમાવ્યો છે.'

'સંદેશ' લખે છે : 'છેક ૧૯૪૦થી રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના પ્રમુખસ્થાને રહેલા માધવરાવ સદાશિવરાવ ગોળવલકર કે જેઓ ગુરુજીના હુલામણા નામથી પરિચિત થયા હતા, તેમના અવસાનથી આર. એસ. એસ. સંસ્થાએ એક પ્રખર અને પ્રેરણાદાયી નેતા ગુમાવ્યા છે. હિન્દુ રાષ્ટ્રનો એમનો આગવો અને અનોખો ખ્યાલ હતો. આર. એસ. એસ. સંસ્થાની એની શિસ્ત અને તાલીમની દૃષ્ટિએ વિશિષ્ટ ભાત પડતી હતી. શ્રી ગોળવલકરના અવસાનથી આર. એસ. એસ. અને જનસંઘને ના પુરાય એવી ખોટ પડશે, જ્યારે દેશને પ્રખર રાષ્ટ્રવાદીની ખોટ પડશે.'

'જનસત્તા'એ લખ્યું : 'સ્વામી વિવેકાનંદ અને મદનમોહન માલવિયાએ ભારતીયત્વ વિશે જે પ્રકારે ઉપદેશો આપ્યા એ થાપણની પરંપરા ચાલુ રાખનારા તેમ જ સ્વદેશી અને ભારતીયત્વ સંબંધી દેશના વર્તમાન નેતાઓમાં તેઓ એકલા જ એક જ્યોતિર્ધર હતા.'

દેશના અનેકાનેક શ્રેષ્ઠ પુરુષોએ આ પુરુષને શ્રદ્ધાંજલિ આપી હતી. સર્વોદયના એક શ્રેષ્ઠ ચિંતક દાદા ધર્માધિકારીએ કહ્યું હતું કે, 'તેઓ અખંડ રાષ્ટ્રીયતાના પ્રતીક હતા.' સ્વર્ગીય વિનોબાજીએ કહ્યું હતું કે, 'શ્રી ગુરુજીનો દૃષ્ટિકોણ વ્યાપક, ઉદાર અને રાષ્ટ્રીય હતો. તેઓ પ્રત્યેક

વાતનો રાષ્ટ્રીય દષ્ટિએ જ વિચાર કરતા. એમનો અધ્યાત્મમાં અતૂટ વિશ્વાસ હતો. સૌ ધર્મો માટે એમના હૃદયમાં આદરભાવ હતો. એમનામાં લેશમાત્ર સંકુચિતતા નહોતી. તેઓ હંમેશાં રાષ્ટ્રીય – ઉચ્ચ રાષ્ટ્રીય વિચારોથી કાર્ય કરતા.'

લંડનની બી.બી.સી.એ જ્યારે આ મહામાનવ ૪૦ વર્ષની ઉંમરના હતા ત્યારે કહ્યું હતું કે, 'ભારતની ક્ષિતિજ ઉપર દેદીપ્યમાન એક સિતારો છે.' મહારાષ્ટ્રના એક મુખ્ય મંત્રીશ્રીએ કહ્યું હતું કે, 'તેઓ એક સંતપુરુષ છે.'

રાષ્ટ્રમાલિકાના એક મોતી :

હિન્દુસ્થાનના ગણમાન્ય લોકોએ જેના જીવનને આટઆટલા પ્રકારે નવાજ્યું હતું એ વ્યક્તિ આ દેશની એક અખંડ રાષ્ટ્રમાલિકાનો મણકો છે. ઇતિહાસની ધરોહર પર નજર કરતાં એક પછી એક મહાનુભાવોનું સ્મરણ થાય છે.

શંકરાચાર્યનું નામ લેતાં અદ્વૈતવાદ યાદ આવે...

બુદ્ધનું નામ લેતાં જ કરુણાની યાદ આવે...

મહાવીરની સાથે અહિંસા જોડાયેલી છે...

રાણા પ્રતાપની સાથે એમની ટેકની વાત...

શિવાજી મહારાજની સાથે તેમની હિંદવી સ્વરાજ્યની ગર્જના...

ગુરુ ગોવિંદસિંહના પંજ પ્યારા...

ગુરુ તેગબહાદુરનું શીશ-સમર્પણ...

રામકૃષ્ણદેવ પરમહંસદેવનો ઈશ્વર-સાક્ષાત્કાર...

સ્વામી વિવેકાનંદની વિશ્વમંચ ઉપરની વીરગર્જના અને દરિદ્રનારાયણની સેવા...

ટિળકનો 'સ્વરાજ્ય મારો જન્મસિદ્ધ અધિકાર છે'નો ઘોષ...

આધુનિક મનુ તરીકે ડૉ. આંબેડકર...

સ્વામી શ્રદ્ધાનંદનું બલિદાન...

ભગતસિંહની શહાદત...

સરદારની મક્કમતા...

ગાંધીની ફકીરી...

કોઈ ને કોઈ ગુણના કારણે વ્યક્તિનું જીવન આ રાષ્ટ્રની સેવામાં અમર થઈ ગયું. એવી જ આ રાષ્ટ્રમાલિકાના એક મોતી હતા માધવરાવ સદાશિવરાવ ગોળવલકર - પરમ પૂજ્ય શ્રી ગુરુજી – રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના દ્વિતીય સરસંઘચાલક. રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘ અને સમગ્ર રાષ્ટ્રમાં 'ગુરુજી'ના નામે ઓળખાતા હતા.

તેઓનું જીવન વૈવિધ્યસભર હતું. એમના જીવનને સમજવું એક કોયડા સમાન છે. તેઓ જેના અંતરને સ્પર્શ કરતા એમને લાગતું કે આ તો કોઈ આધ્યાત્મિક પુરુષ છે. પરંતુ દુનિયાએ જે આધ્યાત્મિક પુરુષોને જોયા છે એ બધાની જેમ તેઓ જનસમૂહથી દૂર ભાગતા નહોતા. તેઓ હજારો લોકોની વચ્ચે રહેતા હતા અને લોકોમાં સમાજબોધ અને રાષ્ટ્રભક્તિ જગાડતા હતા.

> 'ગુરુ ગોળવલકરજીનું જીવન શ્રેષ્ઠ સમપર્ણનું એક ઉજ્જ્વળ ઉદાહરણ હતું. ધ્યેય માટે જીવવા અને મરવા માટે દૈનંદિન જીવનમાં જે સંયમ, સંકલ્પશક્તિ અને કષ્ટ સહન કરવાની શક્તિ અપેક્ષિત હોય છે – ગુરુજીમાં એ ગુણો સંસ્કારગત હતા.

પૂજનીય ગુરુજી હિમાલયની કંદરામાં બેસી નાક પકડીને આધ્યાત્મિકતાની સાધનામાં નહોતા બેઠા. આવા વખતે આપણને મૂંઝવણ થાય કે શું ખરેખર તેઓ આધ્યાત્મિક પુરુષ હતા ? ક્યારેક આપણને લાગે કે તેઓ કોઈ બહુ મોટા નેતા હતા. ક્યારેક એમ લાગે કે ના-ના, આપણી કંઈક ભૂલ થાય છે. ભૌતિકવિજ્ઞાનના ગૂઢ રહસ્યની ચર્ચા કરતા હોય ત્યારે કોઈ મહાન વૈજ્ઞાનિક તરીકેનું જીવન વ્યતીત કરવા માટે એમણે જન્મ લીધો છે, એવો આપણને વિચાર આવે. પરંતુ જીવનના દરેક અંશને જોડીએ ત્યારે એમ લાગે કે નહીં, આ બધાથી કાંઈક જુદું જ છે.

અખંડ સ્વયંસેવકત્વ :

એમનું જીવન કેટલું વૈવિધ્યસભર હતું ! અરે ! એમનું એક જ વ્યક્તિત્વ પકડમાં આવે એવું હતું; અને આ પકડમાં આવે એવું વ્યક્તિત્વ એટલે સ્વયંસેવકત્વ.

જીવનનાં બાકી બધાં પાસાં આપણી આંખની સામે તરવરે ખરાં, પરંતુ પકડમાં ન આવે. પણ પૂ. ગુરુજીને મળીએ

ત્યારે લાગે કે એમને સ્વયંસેવકત્વથી ઓછું કશું જ ખપતું નહોતું. સ્વયંસેવકત્વ કરતાં એમની વધારે કોઈ જ આકાંક્ષા નહોતી.

હિન્દુસ્તાનના કમ્યુનિસ્ટ પાર્ટીના એક ગણમાન્ય નેતાએ ગુરુજી માટે કહ્યું હતું :

'You know what is wrong with your Guruji ?'

અને પછી એમણે પોતે જ જવાબ આપ્યો :

'His unambitiousness.' (અનએમ્બીશિયસનેસ)

અર્થાત્ આ માણસને કોઈ મહત્ત્વાકાંક્ષા નથી. માણસનું મહત્ત્વાકાંક્ષી ન હોવું એ પણ બહુ મોટી સિદ્ધિ છે.

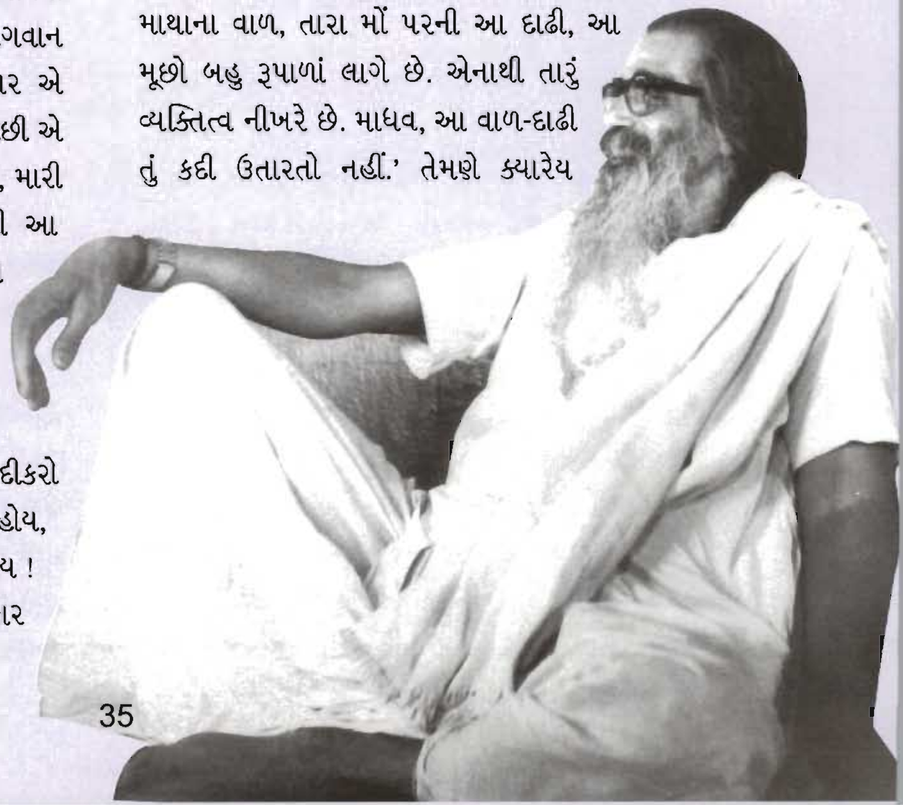
એમની એક જ આકાંક્ષા હતી – 'પૂર્ણ સ્વયંસેવક.' સ્વયંસેવકનો મતલબ થાય છે - સ્વનું સમર્પણ, સ્વની આહુતિ, સંપૂર્ણ જીવનને એક આદર્શ માટે લગાવી દેવું. પ. પૂ. ગુરુજીનું જીવન અખંડ સ્વયંસેવકત્વની જ્યોતથી ઝળહળતું હતું. એના માટે એમણે વિશ્રામ અને વિરામને તિલાંજલિ આપી દીધી હતી.

એક જગ્યાએ પ. પૂ. ગુરુજીએ પોતાની સાધનાની વાત કરતાં લખ્યું હતું કે, 'મને ક્યારેક પ્રભુભક્તિની આકાંક્ષા હતી. મને ભગવાનની પ્રાપ્તિનો એક ઉમંગ હતો. જ્યારે ભગવાનની પ્રાપ્તિ માટે હું નીકળ્યો ત્યારે મને કહેવામાં આવ્યું : જાઓ, વાસણ સાફ કરો. જાઓ, ઝાડુ લગાવો. જાઓ, બગીચામાં સાફ-સફાઈ કરો. જાઓ, ગાયોને ચરાવવા માટે લઈ જાઓ.' ગુરુજીને લાગ્યું હતું કે, 'મારી ભગવાન મેળવવાની જિજ્ઞાસા માટે હું કોઈ પણ અપેક્ષા વગર એ કામમાં લીન થઈ જતો હતો.' સંઘનું જીવન શરૂ કર્યા પછી એ કહેતા, 'મારી સામે પ. પૂ. ડૉ. હેગડેવારનો આદર્શ છે, મારી સામે ડૉ. હેડગેવારજીનું જીવન છે.' પૂર્ણ સમર્પણની આ કલ્પનામાંથી જ એક અખંડ સ્વયંસેવકત્વનું વ્યક્તિત્વ એમના જીવનમાંથી નીખરતું.

પૂ. ગુરુજીના જીવનમાં અનેક ઉતાર-ચઢાવ આવ્યા હતા. માબાપનાં આઠ-આઠ સંતાનોમાંથી એકમાત્ર જીવિત સંતાન હતા. જ્યારે એકનો એક દીકરો જીવતો હોય, સાત-સાત બાળકો મૃત્યુને શરણ થયાં હોય, ત્યારે માબાપની પોતાના દીકરા માટે કેટલી આકાંક્ષા હોય ! માના હૃદયમાં કેટલાં સ્વપ્નો હોય અને આ સ્વપ્નો સાકાર કરવા માટે કેટલી મથામણ હોય ! પરંતુ આ બધી આકાંક્ષા અને સ્વપ્નોની વચ્ચે જ્યારે દીકરો જીવનના કોઈ જુદા જ માર્ગે ચાલ્યો જાય ત્યારે મા-બાપને દુઃખ થવું સ્વાભાવિક છે. આ દીકરો તો સિતાર અને બંસીના નાદ વગાડવામાં પાવરધો હતો, લોકહૈયાને આંદોલિત કરવાની શક્તિ ધરાવતો હતો. એ દીકરો અધ્યાત્મના નાદ સાથે જીવન જોડવા લાગે ત્યારે માને દુઃખ થાય તે સહજ હતું. માને વધારે દુઃખ ના થાય તે કલ્પનાથી પૂજનીય ગુરુજી - માધવરાવ - મધુ એક વાર પોતાનું ઘર છોડી અધ્યાત્મના પંથે ચાલ્યા જાય છે. હિમાલયની કંદરાઓ ખૂંદે છે. એમને પ્રભુપ્રાપ્તિની ઇચ્છા છે, આધ્યાત્મિક જીવનની ટોચે પહોંચવાની મનઃકામના છે. હિમાલયની કૂખને ખૂંદતો-ખૂંદતો આ મધુ સારગાછી આશ્રમમાં જઈને સ્થિર થાય છે.

એમ. એસસી. સુધીનો અભ્યાસ કર્યો હતો. વિજ્ઞાનનાં રહસ્યોને જાણ્યાં હતાં. એમના વિચારોમાં વિજ્ઞાન, ધર્મ અને સંસ્કૃતિનું એક સુંદર મિશ્રણ હતું. આથી આ અધ્યાત્મપુરુષે એક વાર કહ્યું હતું, 'વિજ્ઞાનના વિકાસ પર જ માનવીની પ્રગતિ નિર્ભર છે.'

તેમના જીવનમાં અધ્યાત્મની જિજ્ઞાસા પૂરી કરનાર એમના ગુરુ હતા સ્વામી અખંડાનંદજી. રામકૃષ્ણદેવ પરમહંસદેવના અગિયાર પટ્ટશિષ્યો પૈકી એક હતા સ્વામી વિવેકાનંદ અને બીજા સ્વામી અખંડાનંદ. તેઓ સારગાછી આશ્રમમાં રહેતા હતા. એક વાર સ્વામીજી અખંડાનંદે ગુરુજીના માથે હાથ ફેરવતાં કહ્યું, 'માધવ, આ તારા માથાના વાળ, તારા મોં પરની આ દાઢી, આ મૂછો બહુ રૂપાળાં લાગે છે. એનાથી તારું વ્યક્તિત્વ નીખરે છે. માધવ, આ વાળ-દાઢી તું કદી ઉતારતો નહીં.' તેમણે ક્યારેય





દેવદુર્લભ સાથીઓ : (ડાબી બાજુથી) શ્રી બાબાસાહેબ આપ્ટે, પં. રામનારાયણ શાસ્ત્રી, સ્વા. અમૂર્તાનંદજી, શ્રી ગુરુજી, શ્રી બાળાસાહેબ દેવરસ, શ્રી માધવરાવ મૂળે, (ઊભેલા) શ્રી બાપુરાવ મોઘે, શ્રી રજ્જુભૈયા, શ્રી એસ. જી. સુબ્રહ્મણ્યમ્, શ્રી એકનાથજી રાનડે, શ્રી એ. દક્ષિણામૂર્તિ, શ્રી યાદવરાવ જોષી, શ્રી સૂર્યનારાયણ રાવ, શ્રી મોરોપંત પિંગલે, શ્રી ભાઉરાવ દેવરસ, શ્રી ભાવસાહેબ ભુસ્કુટે

પોતાના ગુરુજીની આ ઇચ્છાનો અનાદર ન કર્યો. જીવનના અંત સુધી એ કેશ એમણે સાચવી રાખ્યા. એટલે જ તો એમનું વ્યક્તિત્વ એક આધ્યાત્મિક પુરુષ તરીકે છેવટ સુધી ઝળકતું હતું.

વાત તો બહુ સહેલી છે. મને ને તમને કોઈ કહે કે 'ભાઈ, બહુ સારા લાગો છો ! આ વાળ વધારજો.' આપણને પણ થાય કે હવે કપાવવા નથી. પરંતુ ગુરુજીનું જીવન આટલેથી જ અટક્યું નહોતું. અખંડાનંદજીએ જેટલી સહજતાથી કહ્યું હતું કે વાળ વધારજો, એટલી જ સહજતાથી ગુરુજીએ વાળ વધાર્યા. એક વાર ડૉ. કેશવરાવ બલિરામ હેડગેવારજીએ કહ્યું હતું, 'માધવરાવ, આ સંઘકાર્યની ધુરા સંભાળજો.' પ. પૂ. ડૉ. હેડગેવારજી મરણશય્યા ઉપર પોઢ્યા હતા. જીવનના અંતિમ શ્વાસ લઈ રહ્યા હતા. મૃત્યુ નિશ્ચિત હતું. ૧૯૨૫માં રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની સ્થાપના કરી હતી. એનો વ્યાપ ૧૯૪૦ સુધીમાં તો સમગ્ર દેશમાં થયો હતો. ૩૪ વર્ષના એક નવયુવાનના હાથમાં આ રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની ધુરા સોંપવાની હતી. આ પળે બહુ સહજતાથી એમણે પ. પૂ. ગુરુજીને કહ્યું હતું કે 'માધવ, તમે આ કામ સંભાળજો.' એક જ વાક્ય ૧૯૪૦માં કહ્યું હતું.

ડૉ. હેડગેવારજીનો વિશ્વાસ :

રાતભર ઉજાગરો કરીને ડૉ. હેડગેવારજીએ ગુરુજીને કહ્યું નહોતું કે આ દેશની પરિસ્થિતિ કેવી છે. ૧૦૦૦ વર્ષની ગુલામીથી હિંદુ સમાજમાં કેટ-કેટલા કુસંસ્કાર આવ્યા છે, તેની ચર્ચા નહોતી કરી; રાત્રી કઠણ કરીને ગુરુજીએ ઉજાગરા નહોતા કર્યા. ડૉક્ટરસાહેબે કોઈ દેશભક્તિનાં ગીતો નહોતાં શિખવાડ્યાં; સહજ રીતે કહ્યું હતું કે 'માધવરાવ, આ કામને તમે સંભાળજો.'

ઘડીભર કલ્પના કરીએ કે એ પળ કેવી હશે ? ગુરુજીને આટલી મોટી જવાબદારી આપતાં ડૉક્ટરજીએ કેવા-કેવા વિચારો કર્યા હશે ? કેટકેટલી માહિતી મંગાવી હશે ? કેટલા બધા લોકોનાં પારખાં કર્યાં હશે ? જાણે કલ્પનાની વણજાર ચાલે... ક્યારેક એમ પણ લાગે કે ડૉક્ટરજીએ ગુરુજીને રાતોની રાતો બેસાડીને હિન્દુત્વના પાઠ પઢાવ્યા હશે ? હિન્દુ સમાજના પતનની ઝીણી-ઝીણી વાતોથી એમને અવગત કર્યા

હશે ? અધ્યાત્મ, પ્રભુપ્રાપ્તિ અને મોક્ષની કામનાને બદલે સમાજદેવતાનાં ચરણોમાં આહુત થવાની પ્રેરણા જગાવવા શું કર્યું હશે ? ૧૯૪૦માં સંઘનું સ્વરૂપ, સંઘની ચર્ચા, સંઘનો પ્રભાવ હજુ તો પ્રારંભિક અવસ્થામાં હતાં. તેના નિર્માતાની વિદાય પછી તેનું ભાવિ કેવું હશે ? – તેવા હજારો પ્રશ્નો સામાન્ય માનવીના મનમાં પણ ઊઠે. ડૉક્ટરજી અને ગુરુજી વચ્ચે એવો તે કેવો સેતુ બંધાયો હશે ? ભાવિના ગર્ભમાં પડેલી સેંકડો અનિશ્ચિતતાઓ વચ્ચે ભવિષ્યમાં સંઘના ઐતિહાસિક નિમિત્ત બનવાની બાબતે કેટલો બધો વિશ્વાસ હશે ? નવયુવાન માધવના ખભા ભાવિ ભારતનો ભાર ઉપાડવા સમર્થ હશે તેવો પાકો વિશ્વાસ ડૉક્ટરજીને હશે. ડૉક્ટરજીની વ્યક્તિ-પરખની શક્તિ અને ગુરુજીના પારદર્શી વ્યક્તિત્વની કેવી વિશેષતા હશે કે અધ્યાત્મના રંગે રંગાયેલા ગુરુજી એ માર્ગને બદલે સમાજ-સાક્ષાત્કાર માટે આજીવન ખપી જઈ, ખૂંપી જશે... અને ગુરુજીએ શરીરનો પ્રત્યેક કણ અને જીવનની પ્રત્યેક ક્ષણ ડૉક્ટરજીએ સોંપેલ જવાબદારી પૂર્ણ કરવા ખાતર હોમી દીધી. ડૉક્ટરજીનું એક નાનકડું વાક્ય : 'માધવ, હવેથી આ બધું તમારે સંભાળવાનું છે.' કેવી અદ્ભુત ઘટના ! કેવી અપ્રતિમ પરખ ! કેવી દીર્ઘદૃષ્ટિ ! કેવો ભરોસો ! હા... આ જ તો ગુરુજીની વિશેષતા હતી.

જેટલી સહજતાથી સ્વામી અખંડાનંદે કહ્યું હતું કે આ કેશ સાચવજો, એટલી જ સહજતાથી ડૉ. હેડગેવારજીના આ શબ્દો સાંભળનાર માધવરાવે જીવનના અંત સુધી, ૧૯૪૦થી ૧૯૭૩ સુધી ભારતવર્ષનું અખંડ ભ્રમણ કરીને, એકનિષ્ઠ પુરુષાર્થ કરીને, એકધ્યેય જીવન જીવીને, 'पतत्वेष कायो नमस्ते नमस्ते' ચરિતાર્થ કરતાં-કરતાં રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના વટવૃક્ષનો વિસ્તાર કર્યો હતો.

અખંડ સંઘસાધના :

ગુરુજીનાં મન-હૃદય આધ્યાત્મિકતાને વરેલાં હતાં. આપણને થાય કે આવા આધ્યાત્મિક પુરુષે સંઘજીવનનો સ્વીકાર કેમ કર્યો હશે ? સંપૂર્ણ જીવન ભગવા ધ્વજની નિશ્રામાં શા માટે સમર્પિત કરી દીધું હશે ? એ સંદર્ભમાં એમણે થોડો-ઘણો પ્રકાશ જરૂર પાડ્યો છે. દૈનિક 'તરુણ ભારત'ના તંત્રી રહી ચૂકેલા સ્વર્ગસ્થ ગં. ત્ર્યં. માડખેલકર ભાઉસાહેબ સાથે પૂજનીય ગુરુજીને લાંબી વાતચીત થઈ હતી. આ પ્રસંગે ડૉક્ટરસાહેબ સ્વયં ઉપસ્થિત હતા. પુસ્તક વિશે ચર્ચા પૂરી થઈ એ પછી ગુરુજીની અનુમતિ લઈ ભાઉસાહેબે ગુરુજીને વ્યક્તિગત સવાલ પૂછ્યો. ગુરુજીના અવસાન પછી નાગપુરના 'તરુણ ભારત' દૈનિકમાં (૧૬ જૂન, ૧૯૭૩) 'ત્રિકોણીસંગમ' શીર્ષક હેઠળ ભાઉસાહેબે લખેલા એક લેખમાં આ વ્યક્તિગત સવાલ અને તે અંગે ગુરુજીએ આપેલા જવાબનો ઉલ્લેખ છે. આ લેખમાં માડખેલકર લખે છે : ''મેં ગુરુજીને પૂછ્યું : 'મેં સાંભળ્યું છે કે આપ વચ્ચે સંઘનું અહીંનું કામ છોડી બંગાળના રામકૃષ્ણ આશ્રમમાં ગયેલા અને ત્યાં આપે સ્વામી વિવેકાનંદના ગુરુબંધુ પાસે દીક્ષા લીધી હતી; પરંતુ એ પછી આપ રામકૃષ્ણ આશ્રમ છોડી ફરી સંઘમાં કેવી રીતે આવી ગયા ? આપને નથી લાગતું કે આશ્રમની ભૂમિકા કરતાં સંઘની ભૂમિકા બિલકુલ અલગ છે ?' મારો આ સવાલ સાંભળી ગુરુજી એકદમ સ્તબ્ધ થઈ ગયા. એમણે થોડી પળ માટે અધખુલ્લી આંખે વિચાર પણ કર્યો. જાણે તેઓ કોઈ બીજા મનોજગતમાં પહોંચી ગયા. થોડા સમય પછી એમણે ધીમેધીમે બોલવાનું શરૂ કર્યું.

ગુરુજીએ કહ્યું : 'આપે આ તદ્દન અણધાર્યો સવાલ પૂછ્યો છે; પરંતુ આશ્રમની અને સંઘની ભૂમિકામાં અંતર છે કે નહીં એ તો મારા કરતાં ડૉક્ટરસાહેબ જ વધુ અધિકારપૂર્વક કહી શકશે. મારું વલણ પ્રારંભથી જ અધ્યાત્મની સાથે-સાથે રાષ્ટ્ર-સંગઠનના કાર્ય પ્રત્યે પણ જોડાયેલું રહ્યું છે. આ કામ સંઘમાં રહી વધુ ફળદાયી રૂપે કરી શકીશ એવો અનુભવ મને મારા બનારસ, નાગપુર અને કોલકાતાના વસવાટ દરમિયાન થયો. આથી મેં સંઘકાર્યમાં મારી જાતને સમર્પિત કરી દીધી છે. મને લાગે છે કે સ્વામી વિવેકાનંદનાં તત્ત્વજ્ઞાન, ઉપદેશ કે કાર્યપદ્ધતિ સાથે મારું આ આચરણ સુસંગત છે. મારા પર એમનો જેટલો પ્રભાવ છે એટલો બીજી કોઈ વિભૂતિનાં જીવન કે ઉપદેશનો નથી. મને વિશ્વાસ છે કે સંઘમાં રહીને જ સ્વામી વિવેકાનંદના કાર્યને હું આગળ વધારી શકીશ.' આ રીતનો વિશદ તર્ક કરતી વખતે ગુરુજીનાં નેત્રોમાં આત્મવિશ્વાસની જે ચમક રમતી જોઈ, એ હું ક્યારેય ભૂલી શકીશ નહીં. ડૉક્ટરસાહેબ પણ એકદમ ગંભીર બની ગયા હતા.'' તો આ હતી ગુરુજીની પૂર્ણ સમર્પણ પાછળની મનઃકલ્પના. ડૉક્ટરજીએ કહેલા એક નાનકડા વાક્યથી એમના જીવનમાં અખંડ સ્વયંસેવકત્વ જાગેલું રહ્યું તેનો જીવનના અંતભાગ સુધી અમલ કર્યો હતો. ૩૩ વર્ષ સુધી એના આધાર પર તેઓ અખંડ સંઘસાધના કરતા રહ્યા.

શ્રી ગુરુજીનો શ્રદ્ધાભાવ ક્યારેય ક્ષીણ ન થયો, તે ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ જ પામતો ગયો. ડૉ. હેડગેવારજી સાથેની પ્રારંભિક મુલાકાતોમાં સિવાય સંશય કંઈ જોવા ન મળે. ધીરેધીરે જિજ્ઞાસાનું તત્ત્વ ઉમેરાયું. શ્રી ગુરુજી સ્વયં કહેતા : "તેમનાં ભાષણોની મારી બુદ્ધિ પર કોઈ અસર ન થતી, પણ કાળક્રમે એ જ ભાષણ, એ જ શબ્દો, એ જ ચહેરો બુદ્ધિનાં પટલો ચીરીને હૃદયના ઊંડાણમાં ઊતરી જતાં. ડૉક્ટરસાહેબે બુદ્ધિનો નહીં, આખાયે ભાવવિશ્વનો કબજો કરી લીધો હતો. શ્રદ્ધાભાવથી આ પ્રક્રિયા નિરંતર ચાલતી રહી, જે ડૉક્ટરજીના દેહાવસાન પછી પણ અટકી નહીં..." અને આગળ જતાં આ ભાવ એટલી ઉચ્ચતમ કોટિએ પહોંચ્યો કે પોતાના માટે ગુરુજી કહેતા કે "જ્યારે-જ્યારે મને મૂંઝવણ થાય ત્યારે ડૉક્ટરજીનું જીવન મને પ્રેરણા આપે છે, રસ્તો સુઝાડે છે." સ્વયંસેવકોને પણ હંમેશાં ડૉક્ટરસાહેબના જીવનનો અભ્યાસ કરવા આગ્રહ કરતા.

અવિરામ રાષ્ટ્રયાત્રા :

૩૩ વર્ષ સુધી અખંડ પરિભ્રમણ કરવું એ કોઈ નાની-સૂની વાત નથી. એમને શું બીમારી નહીં આવી હોય ? શું રસ્તામાં એમની ગાડી નહીં બગડી હોય ? એમનું વિમાન મોડું નહીં પડ્યું હોય ? ટાઢ, તાવ, તડકો, ઠંડી – હવામાનનાં પરિવર્તન – કશું જ એમને નહીં નડ્યું હોય ? ન જાણે કેટકેટલી મુસીબતો આવી હશે ! પરંતુ પૂ. ગુરુજીએ જીવનની અંદર કોઈ પણ જાતની અપેક્ષા વગર સંપૂર્ણ સમર્પણની ભાવના ચરિતાર્થ કરવાનો મક્કમ નિર્ધાર કર્યો હતો. એટલા માટે ૩૩-૩૩ વર્ષ સુધી, શરીરનો પ્રત્યેક કણ, રક્તનું પ્રત્યેક બિંદુ, જીવનની પ્રત્યેક ક્ષણ આ માતૃભૂમિના કલ્યાણ માટે, આ ભારતમાતા પરમ વૈભવ પ્રાપ્ત કરે, પોતાનાં કરોડો સંતાનોને વિશ્વના મંચ ઉપર તેજસ્વી રૂપે મૂકે એ પ્રકારની હૃદયની અદમ્ય ઇચ્છા લઈને માધવરાવ જીવનપર્યંત રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના દ્વિતીય સરસંઘચાલક રૂપે કઠોર પરિશ્રમ કરીને ઘૂમતા હતા. એક વાર કોઈએ પૂજનીય ગુરુજીને પૂછેલું કે, 'તમારું નિવાસસ્થાન ક્યાં છે ?' અને તેમણે સાવ સહજભાવે કહ્યું : 'રેલવેનો ડબ્બો.' ૩૩ વર્ષ સુધી અખંડ, અવિરામ યાત્રા ચાલતી રહી. કૅન્સર જેવા વ્યાધિએ જકડી લીધા પછી પણ એમનાં ચરણ અટક્યાં નહીં. દેશભરનો પ્રવાસ ચાલતો રહ્યો. ૧૯૪૩નો એક પ્રસંગ છે. પૂનામાં પ્રાંત-સ્તરના કાર્યકર્તાઓની બેઠક હતી. ગુરુજી પણ એ બેઠકમાં ઉપસ્થિત હતા.



સરદાર પટેલ જયંતિ સમારોહ, લાલકિલ્લા - દિલ્હી. શ્રી ગુરુજી (પાછળ બેઠેલા) ડૉ. સર્વપલ્લી રાધાકૃષ્ણન્, શ્રી સી. ડી. દેશમુખ.

સરસંઘચાલક બન્યા પછી એમનો દેશવ્યાપી અખંડ પ્રવાસ ચાલી રહ્યો હતો. કોઈ વિરામ નહીં, ક્યાંય વિશ્રામ નહીં. કાર્યકર્તા એમને લાગણીથી ક્યારેક આરામ કરી લેવાની સલાહ આપતા. એ બેઠકમાં આવી જ સલાહનો ઉલ્લેખ એમણે એમના પ્રવચનમાં કર્યો અને કહ્યું : "વિશ્રામ ? હવે કેવો વિશ્રામ ? હવે વિશ્રામ તો ત્યારે જ સંભવિત છે, જ્યારે હાથમાં લીધેલું કાર્ય પૂર્ણ થશે અથવા ચિતા પર..."

આત્મજાગૃતિના સ્વયંસેવક :

લોકોની નજરે કદાચ એ સરસંઘચાલક હતા, પરંતુ પોતે સતત આત્મજાગૃતિના સ્વયંસેવક હતા. મધ્યભારત પ્રાંતનો સંઘશિક્ષાવર્ગ ગ્વાલિયરમાં હતો. એમાં પૂ. ગુરુજી આવેલા. એક વાર તેઓ ભોજનની પંગતમાં બેઠા હતા. ભોજનની વ્યવસ્થા જોનાર કાર્યકર્તાએ સૂચના આપી કે વચ્ચેની પંગતમાં જે મહેમાનો બેઠા છે, તેઓ ભોજન કરીને જાય ત્યાં સુધી સ્વયંસેવકોએ ઊઠવાનું નથી. શિબિરાર્થીઓની ભોજનની વચ્ચેની પંગતમાં પૂ. ગુરુજી, રાજમાતા સિંધિયાજી, અટલબિહારી વાજપાઈજી સહિત અનેક લોકો બેઠા હતા. જ્યારે અધિકારીએ સૂચના આપી ત્યારે વચ્ચેની પંક્તિના બધા જ લોકો ઊઠી-ઊઠીને ચાલવા લાગ્યા, પરંતુ ગુરુજી ઊઠ્યા નહીં. ત્યારે અધિકારીએ વિનંતી કરી કે આપે પણ જવાનું છે. તે વખતે ગુરુજીએ કહ્યું કે "તમે તો સૂચના એવી આપી હતી કે સ્વયંસેવકોએ જવાનું નથી, મહેમાનોએ જવાનું છે. અને હું તો સ્વયંસેવક છું. હું કેવી રીતે જાઉં ?" વિચાર કરીએ તો આ ઘટના સાવ સામાન્ય લાગે. પરંતુ આ સામાન્ય ઘટના સમયે પણ પૂ. ગુરુજીનું સ્વયંસેવકત્વ જાગૃત હતું. એક નાનકડી સૂચના પણ એમને સ્વયંસેવક માટે દેખાઈ. તેઓ છેવટ સુધી ન ઊઠ્યા. બધા જ સ્વયંસેવકો ભોજન કરીને ઊઠ્યા ત્યારે ગુરુજી પણ ઊઠ્યા. ગુરુજીના મનમાં પોતે સરસંઘચાલક હોવા છતાં પહેલાં સ્વયંસેવક છે, અને આથી એ સ્વયંસેવકના ભાવને સ્પર્શી શકતા હતા, એના મર્મને પામી શકતા હતા. એમનું આ ભાવવિશ્વ સતત જાગૃત રહેતું હતું.

ભાવનાઓનો વિસ્તાર :

એક વાર ગુરુજી અજમેરથી ઈન્દોર ટ્રેન દ્વારા જઈ રહ્યા હતા. એ વખતે ગાડી રસ્તામાં લગભગ બે કલાક રતલામમાં પડી રહેતી. રતલામમાં ગોપાલરાવ કરીને એક સ્વયંસેવક હતા. એમને ત્યાં ગુરુજીનું ભોજન હતું. પરંતુ રતલામ સ્ટેશને ગાડી મોડી આવી. કાર્યકર્તાઓએ બે કલાકના સમય માટે કાર્યક્રમ નક્કી કર્યા હતા : સ્થાનિક સ્વયંસેવકો સાથે વાતચીત અને ભોજન. ગુરુજી રતલામ પહોંચ્યા ત્યારે સમાચાર મળ્યા કે "ગાડી તો મોડી આવી છે અને જલદી ઊપડવાની છે, તો એમ કરો, પહેલાં ભોજન કરી લો." પરંતુ એમણે કહ્યું, "નહીં. સ્વયંસેવકો આવ્યા છે, તો પહેલાં એમની સાથે વાત કરીશ. સમય વધશે તો પછી ભોજન કરીશ, નહીં તો આજે ભોજન કેન્સલ." ગુરુજી સ્વયંસેવકો સાથે વાત કરવા બેઠા. એક વાર ગુરુજીની સામે સ્વયંસેવકો આવે એટલે ગુરુજી સર્વસ્વ ભૂલી જતા. ભોજન એક બાજુ રહી ગયું. ગાડીનો સમય થઈ ગયો હતો. જમ્યા વગર જવું પડે એમ હતું. ગુરુજી જતા હતા ત્યારે ગોપાલરાવની આંખમાં ઝળઝળિયાં આવી ગયાં : "ગુરુજી મારા આંગણે આવીને આજે ભૂખ્યા પાછા જશે ?" સ્વયંસેવક દુઃખી થઈ ગયા. ગુરુજી એમની ભાવનાને સમજી ગયા. ગુરુજીએ કહ્યું, "ભાઈ, હું સ્વયંસેવક છું, તમારા હૃદયને હું જાણું છું. હું ઈન્દોરથી જ્યારે અજમેર પાછો જઈશ ત્યારે સાંજના સમયે હું અહીંયાંથી જ પસાર થવાનો છું; ત્યારે સાંજના સમયે હું તમારે ત્યાં ભોજન લઈશ." ગુરુજી રાત્રે જમતા નહોતા. ઈન્દોરમાં એમણે સૂચના આપી કે 'આજે બપોરનું ભોજન કેન્સલ. રાત્રે ગોપાલરાવને ત્યાં જમવાનું છે.' એક નાનકડો સ્વયંસેવક ગોપાલરાવ... પરંતુ એની આંખમાં આંસુ જોયાં અને ગુરુજી એના મર્મને પામી ગયા. એક સ્વયંસેવકની ભાવનાને એ સ્પર્શી શકતા હતા, અનુભવી શકતા હતા, કારણ, સહસ્રો સ્વયંસેવકોનાં જીવન સાથે એમનું જીવન એકરૂપ બની ગયું હતું. એ સતત સ્વયંસેવક તરીકેની ભાવનાઓને વિસ્તારતા જતા હતા.

સ્વયંસેવક અને સ્વયંસેવક, સરસંઘચાલક અને સ્વયંસેવકની મર્યાદાનો લોપ થઈ જતો અને એ ભાઈ-ભાઈનું રૂપ ધારણ કરી લેતો. પ્રવીણચંદ્ર દોશી નામના રંગૂનના સ્વયંસેવક ૧૯૫૬માં સંઘશિક્ષા-વર્ગમાં ભાગ લેવા માટે એપ્રિલમાં ભારત આવ્યા. સંઘનો પ્રારંભ નાગપુરમાં થયો હતો. આથી દરેક સ્વયંસેવક નાગપુરની ભૂમિને તીર્થસ્થાન સમજે એ સ્વાભાવિક છે. ૨૩ એપ્રિલ, ૧૯૫૬ના રોજ પ્રવીણચંદ્ર દોશી નાગપુર પહોંચ્યા અને બૅગ-બિસ્તરા લઈને સીધા પરમ પૂજનીય ગુરુજીના નિવાસસ્થાને જ પહોંચી ગયા. ગુરુજીનાં દર્શન થયાં એટલે ધન્યતા અનુભવતા હતા. એ સમયે ગુરુજીની આસપાસ બીજા ૧૫-૨૦ પ્રૌઢ સ્વયંસેવકો પણ બેઠા હતા. એ સમયે પ્રવીણચંદ્રનો થોડોક પરિચય હતો

એવા એક ડૉક્ટર પણ ત્યાં બેઠા હતા. એમણે પ્રવીણચંદ્રને પૂછ્યું, 'અહીં તમારાં સગાં-વહાલાં કોણ છે ? અને નાગપુરમાં ક્યાં ઉતર્યા છો ?'

ડૉક્ટરનો પ્રશ્ન સાંભળી પ્રવીણચંદ્ર અસમંજસમાં પડી ગયા કે જવાબ શું આપવો ? ત્યાં જ ગુરુજીએ જવાબ આપ્યો, 'એ મારો સગો-વહાલો છે અને મારા ઘરે જ ઊતર્યો છે.'

ગુરુજીના મુખે આવા શબ્દો સાંભળતાં જ પ્રવીણચંદ્રનું રોમરોમ પુલકિત થઈ ઊઠ્યું, એમની આંખો પાણીથી ભરાઈ ગઈ. આ સ્નેહ ! આ આત્મીયતા ! એક સ્વયંસેવક બીજા સ્વયંસેવકને મળે છે ત્યારે બે સ્વયંસેવક નથી મળતા, પણ બે ભાઈ મળે છે – આ સહજ વ્યવહાર પરમ પૂજનીય ગુરુજીનો જીવનવ્યવહાર હતો. સંઘનો પ્રત્યેક સ્વયંસેવક પૂજનીય ગુરુજીને પુત્રવત્ પ્રિય હતો. સ્વયંસેવકની કીર્તિ સાંભળીને તેઓ પણ પુલકિત થઈ ઊઠતા. કોઈ પણ નવા માણસને ગુરુજીનું ઉત્તુંગ વ્યક્તિત્વ જોઈ 'ઈન-એક્સેસિબલ, અન-અપ્રોચેબલ' જરૂર લાગ્યું હશે. ઘણી વાર તો સરસંઘચાલક પાસે જતાં જ ઘણા સ્વયંસેવકો સંકોચ, મનમાં ગભરાટ અનુભવે. પરંતુ એક વાર ગુરુજીના સંપર્કમાં જે વ્યક્તિ આવતી એ ધન્યતા અનુભવતી. એનો ડર, સંકોચ સમાપ્ત થઈ જતા. ગુરુજીની નજીકમાં આવ્યા પછી ઉંમરના નાના-મોટા ભેદ મટી જતા. આથી જ ગુરુજી બાળ-સ્વયંસેવકોની પાસે બાળ જેવા બની જતા. એક વાર પ. પૂ. ગુરુજી નાગપુરની ગોરક્ષણ ઉપશાખામાં ગયા હતા. પ્રાર્થના પછી તેઓ કાર તરફ જઈ રહ્યા હતા. એમની સાથે બાલ-શિશુ પણ ધિંગામસ્તી કરતાં ચાલી રહ્યાં હતાં. કારની પાસે આવી ગુરુજીએ દરવાજો ખોલ્યો ત્યારે એક શિશુ સ્વયંસેવકે પૂછ્યું, 'કેમ રે, આ તારી મોટરકાર છે ?' અને શિશુના આ સવાલ સાથે જ બંને વચ્ચે મજેદાર પ્રશ્નોત્તરી શરૂ થઈ :

'હા, મારી છે.'.

'તું ચલાવે છે એને . . . ?'

'હા, હું ચલાવું છું.'

'તને મોટર ચલાવવાનું યાદ છે ?'

'હા, મને યાદ છે.'

'કમાલ છે તું તો. . .' શિશુ સ્વયંસેવકે આશ્ચર્ય પ્રગટ કર્યું. એક શિશુ સ્વયંસેવક સરસંઘચાલક પરમ પૂજનીય ગુરુજીને પ્રશસ્તિ-પ્રમાણપત્ર આપીને કહી રહ્યો છેઃ 'કમાલ છે તું તો...'

પ્રત્યેક હિન્દુ મારો ભાઈ

નાગપુરના હેડગેવાર ભવનમાં મંગળપ્રસાદ કરીને એક ભાઈ કેટલાંય વર્ષોથી રસોઈયા તરીકે ફરજ બજાવે. કાર્યાલયમાં રસોઈ બનાવવી એ એમનું કામ. એક વાર મંગળપ્રસાદ એમના બંધાવા ગામે એમના ભાઈનો સ્વર્ગવાસ થતાં ત્યાં ગયા હતા. પ. પૂ. ગુરુજીએ સાંત્વના આપતો પત્ર લખ્યો : 'પરમ મિત્ર મંગળપ્રસાદ'ના સંબોધનથી પત્ર શરૂ થતો હતો. મંગળપ્રસાદને પોતાના ભાઈનો સ્વર્ગવાસ થયો ત્યારે આંખમાં આંસુ નહોતાં આવ્યાં, પરંતુ પોતાના પર પૂ. ગુરુજી જેવા મહાપુરુષે પત્ર લખ્યો હતો, અને 'પરમ મિત્ર મંગળપ્રસાદ' સંબોધનવાળો એ પત્ર જોઈને મંગળપ્રસાદ ચોધાર આંસુએ રડી પડ્યા હતા, કારણ કે આવા મહામાનવ મને 'પરમ મિત્ર' કહીને સંબોધન કરે એ કેટલા મોટા સૌભાગ્યની વાત હતી !

મંગળપ્રસાદનો ગુરુજી પણ કેટલો ખ્યાલ રાખતા હતા! પૂ. ગુરુજી કેન્સરની વ્યાધિથી બીમાર હતા. જીવનના અંતિમ દિવસો નજીક હતા. દવા લેવામાં પણ તેમને તકલીફ પડતી હતી. એ દિવસોમાં મંગળપ્રસાદ એમને રોજ દવા આપતા. એક દિવસ ગુરુજીએ કહ્યું, 'હવે દવા લેવાની શું જરૂર છે ?' ગુરુજીએ ના કહી, છતાં બીજા દિવસે મંગળપ્રસાદ ગુરુજી માટે ચમચીમાં દવા લઈને આવ્યા. દવા જોતાં જ ગુરુજીએ કહ્યું, 'તમને ડૉક્ટર આબાજીએ મોકલ્યા લાગે છે. જાઓ, એમને કહી દો, મારે દવા લેવી નથી.' ત્યારે મંગળપ્રસાદે કહ્યું કે 'ના, ગુરુજી, આ હું પોતે બનાવીને લાવ્યો છું.' તરત જ એમણે દવા પી લીધી. મંગળપ્રસાદ રસોડાનો એક રસોઈયો હતો, પરંતુ આ હિન્દુ સમાજનો એ એક અંગ હતો. તે આ ભારતમાતાનો એક પુત્ર છે, તે મારો એક ભાઈ છે એ પ્રકારની અનુભૂતિ પ. પૂ. ગુરુજીના જીવનવ્યવહારમાંથી નિરંતર ટપકતી હતી.

'હિન્દુ સમાજનો પ્રત્યેક હિન્દુ મારો ભાઈ છે, એની પીડા મારી પીડા છે, એનું દુઃખ મારું દુઃખ છે' – આ ભાવ સદા પ. પૂ. ગુરુજીના હૃદયમાં રહેતો. મુશ્કેલી સ્વયંસેવકની હોય કે કોઈ સર્વસાધારણ વ્યક્તિની મુશ્કેલી હોય, એમને મન કોઈ ભેદ નહોતો અને એટલે જ રેલવે સ્ટેશન પર ભાર વેંઢારતો કૂલી હોય કે મિલનો મજૂર હોય, એને જોઈ પ.પૂ.ગુરુજીનું હૃદય કરુણાભાવથી છલકાઈ ઊઠતું, એ દુઃખી થઈ જતા, એમનું અંતઃકરણ પીડાથી છલકાઈ ઊઠતું. નાગપુરમાં પ. પૂ. ગુરુજીના ઘરે જવાના રસ્તે એક વૃદ્ધ ભિખારી રોજ સૂઈ રહેતો. એ તરફ પણ એમનું ધ્યાન હોય. ગુરુજી એની પણ ચિંતા કરતા. એક વાર પ્રવાસેથી પાછા આવ્યા. જોયું તો ત્યાં ભિખારી નહોતો. આસપાસના લોકોને પૂછ્યું ત્યારે ખબર પડી કે બે દિવસ પહેલાં જ એનું અવસાન થયું હતું.

ગુરુજી આ સમાચાર સાંભળીને દુઃખીદુઃખી થઈ ગયા. પેલા વૃદ્ધ ભિખારીનો ચહેરો સતત એમનાં મનોચક્ષુ સામે તરવર્યા કરતો હતો. થોડા સમય પછી પ્રાંત- પ્રચારકોની એક બેઠકમાં પણ એમણે આ વાતનો ખૂબ પીડા સાથે ઉલ્લેખ કર્યો. ગુરુજીની પીડા હતી – આટલી ઉંમરમાં એની દેખભાળ કરનારું કોણ હશે ? અંતિમ ક્ષણે એના મોંમાં પાણીનું બુંદ મૂકનાર મમતામય એક હાથ પણ નહીં હોય. આટલા વિશાળ હિન્દુ સમાજમાં આવા અભાગી આપણા કેટકેટલા ભાઈ હશે? એમની આંખનાં આંસુ કોણ લૂછશે ?

પરમ પૂજ્ય ગુરુજી સ્વયંસેવકોના જીવનઘડતર અને એમના વ્યક્તિત્વને નિખારવા ખૂબ કાળજી લેતા. પૂજનીય ગુરુજીના જીવનમાં આ ભાવ હંમેશાં પ્રગટ થતો રહ્યો. પરમ પૂજ્ય ગુરુજીનાં માતાજી કહેતાં હતાં, "મધુ પ્રાથમિક શાળામાં ચોથી ચોપડીમાં ભણતો ત્યારે એના ભણવામાં 'કેવડે ક્રૌર્ય હૈ' (આ કેટલી ક્રૂરતા) કવિતા ભણવામાં આવતી. એમાં શિકારીએ હણેલી પંખિણીનું 'ક્ષણો ક્ષણી ઊઠે પરિ પડે બાપુડી' (વારંવાર ઊડે છે પણ બિચારી પડી જાય છે.) આ પ્રકારનું અત્યંત કરુણામય વર્ણન કરવામાં આવ્યું હતું. આ કવિતા વાંચતાં મધુની આંખોમાંથી નિરંતર આંસુ વહેતાં હતાં. એનું અંતઃકરણ આટલું કોમળ હતું."

સ્વયંસેવકની પ્રામાણિકતા :

થોડાંક વર્ષો પહેલાંની એક નાનકડી ઘટના મેં સાંભળી હતી. મહેસાણામાં કથા ચાલતી હતી. આ કથાની અંદર દુષ્કાળ-રાહત માટે ફાળો ઉઘરાવાતો હતો. ફાળો ઉઘરાવવા માટે થેલીઓ ફરતી હતી. એક ખૂણામાં જ્યાં આગળ અમીર-ધનવાન લોકો બેઠા હતા, ત્યાં પણ એક ભાઈ થેલી લઈને પૈસાની ટહેલ માટે ફરતા હતા. ત્યાંના આયોજકોએ જોયું કે બધા માટેની થેલી એક રંગની છે, દરેકની થેલી ઉપર નંબર લખેલા છે, પરંતુ જ્યાં ધનાઢ્ય લોકો બેઠા છે, જ્યાંથી આ ભાઈ પૈસા ઉઘરાવે છે એ થેલી જુદા રંગની છે. જરૂર કોઈ બદમાશ લાગે છે અને એ પૈસા ભેગા કરીને ભાગી જશે, એટલે ચાલુ કથાએ આ આયોજકો દોડ્યા. પેલા ભાઈને પકડ્યો અને બહાર લઈ ગયા. આયોજકો ગુસ્સામાં હતા. એમને ખાતરી હતી કે આ કોઈ બેઈમાન માણસ છે. એની થેલી જુદા રંગની છે, એની ઉપર કોઈ નંબર લખ્યો નથી અને આ પૈસા કેમ ઉઘરાવે છે ? પેલા લોકો પાંચ મિનિટ સુધી બોલતા ગયા, પરંતુ આ ભાઈએ સ્વસ્થતા ગુમાવ્યા વગર, આયોજકો બહુ મોટા માણસો હતા છતાં તેમની આંખમાં આંખ પરોવીને કહ્યું, "હું રાષ્ટ્રીય સ્વયંસવક સંઘનો સ્વયંસેવક છું." આટલા શબ્દો બોલતાં જ કથાના આયોજકો બે ડગલાં પાછળ હટી ગયા. એમના ચહેરા ઊતરી ગયા. એમણે કહ્યું કે, "ભાઈ, અમારી ભૂલ થઈ ગઈ છે, અમને માફ કરજો. આજે અમે તમને કડવાં વેણ

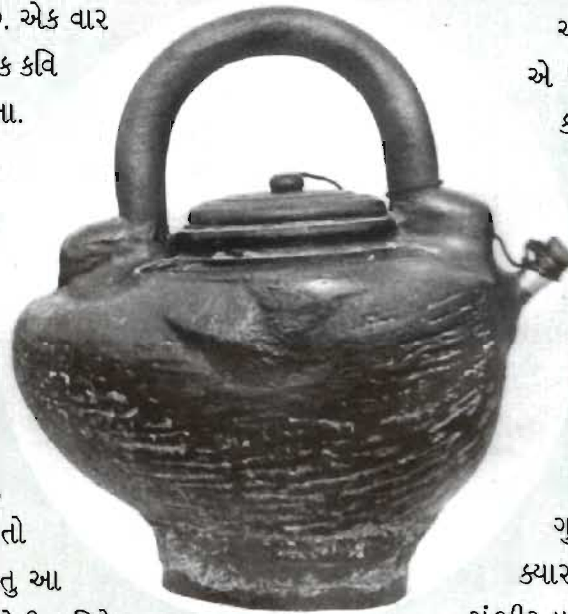
> **એમની એક જ આકાંક્ષા હતી – 'પૂર્ણ સ્વયંસેવક.' સ્વયં-સેવકનો મતલબ થાય છે - સ્વનું સમર્પણ, સ્વની આહુતિ, સંપૂર્ણ જીવનને એક આદર્શ માટે લગાવી દેવું. પ. પૂ. ગુરુજીનું જીવન અખંડ સ્વયંસેવકત્વની જ્યોતથી ઝળહળતું હતું. એના માટે એમણે વિશ્રામ અને વિરામને તિલાંજલિ આપી દીધી હતી.**

કહ્યાં છે." સામાન્ય સમાજજીવનની અંદર રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘનો સ્વયંસેવક અને પ્રામાણિકતા અભિન્ન બની ગયાં છે. એણે બચાવ કરવા માટે બીજું કશું જ કહેવું ન પડ્યું. તપાસ કરી તો ખબર પડી કે પૈસા ભેગા કરનાર ભાઈ સાચો હતો. થેલી અપાઈ એ પણ સાચી હતી અને પૈસા ભેગા કરવાની જવાબદારી એ યોગ્ય રીતે નિભાવતો હતો. આ કથા પૂર્ણ થઈ ત્યારે કામ કરનાર કાર્યકર્તાઓની એક બેઠક મળી હતી. કથાકાર સંત પણ તેમાં ઉપસ્થિત હતા. આયોજકોએ આ

બેઠકમાં રડતા ચહેરે, આંખમાં આંસુ સાથે ગદ્ગદિત હૈયે કહ્યું કે, ''આર. એસ. એસ.ના ભાઈની અમે બધા માફી માગીએ છીએ. અમે ભૂલથી એક સ્વયંસેવકનું અપમાન કર્યું હતું, તેની પ્રામાણિકતા માટે શંકા કરી હતી.'

તુમ નહીં, હમ કરે...

તમે કલ્પના કરો કે સંઘ-સ્થાપનાના આટલાં વર્ષના દીર્ઘકાળ પછી પણ એક દૂરના વિસ્તારમાં બેઠેલા સ્વયંસેવકની પ્રામાણિકતા અણીશુદ્ધ રહી છે, એનું કારણ શું ? આ અમસ્તી રહી હશે ? ના, સંઘના આ સ્વયંસેવકોના નિર્માણ માટે એક અખંડ જાગૃત પ્રયાસ કરવામાં આવ્યો છે, એની કાળજી લેવામાં આવી છે. પ. પૂ. ગુરુજી એ બાબતમાં બહુ સતર્ક હતા કે મારો સ્વયંસેવક કેવો નિર્માણ થવો જોઈએ. નાની-નાની બાબતોમાં કાળજી લેવામાં આવી છે. એક વાર એક કાર્યક્રમમાં ગીત ગવાતું હતું. એક કવિ નવું ગીત બનાવીને લાવ્યા હતા. આપણા સ્વયંસેવકો એ ગીત ગાતા હતા. ખૂબ સરસ મધુર કંઠે ગીતનો આરંભ થયો હતો : ''તુમ કરો રાષ્ટ્ર-આરાધના...'' ગીતની પહેલી પંક્તિ પૂરી થાય એ પહેલાં જ ચાલુ કાર્યક્રમમાં પૂ. ગુરુજીએ તેમને રોક્યા, ''અરે ભાઈ, ઊભા રહો, 'તુમ કરો રાષ્ટ્ર આરાધના' નહીં, 'હમ કરે રાષ્ટ્ર-આરાધના'...'' કવિએ તો ખૂબ સરસ શબ્દો લખ્યા હતા, પરંતુ આ શબ્દોમાંથી સંસ્કાર કયા મળશે એની કવિને કલ્પના નહોતી. પણ પૂ. ગુરુજીએ કલ્પના કરી કે 'તુમ કરો' નહીં, 'હમ કરેં.' આ 'હમ કરે'ની ભાવના. આ બધું 'તમારે કરવાનું છે', 'સરકારે કરવાનું છે' એમ નહીં, આ 'મારે કરવાનું છે.' સ્વયંસેવક તરીકે આ માતૃભૂમિના નિર્માણની, માતૃભૂમિના ઉત્કર્ષની, માતૃભૂમિના વિકાસની, માતૃભૂમિની ઉત્ક્રાંતિની, આ ભારતમાતા ફરી એક વાર જગજ્જનનીનું રૂપ ધારણ કરે એ માટેની જવાબદારી કોની ? –



'તુમ કરો રાષ્ટ્ર-આરાધન ?' ના, 'હમ કરેં રાષ્ટ્ર આરાધન...'

એક વાર પ. પૂ. ગુરુજી એક નાનકડી શાખામાં ગયા હતા. શાખામાં સ્વયંસેવકો રમત રમી લીધા પછી મંડલમાં બેઠા હતા. પૂ. ગુરુજીએ પૂછ્યું કે 'ભાઈ, આજે કઈ રમત રમ્યા ?' સ્વયંસેવકોએ કહ્યું, 'આજે અમે રમત રમ્યા... દીપ બુઝાના.'' પ. પૂ. ગુરુજીએ તરત જ કહ્યું કે, ''નહીં, હિન્દુ સંસ્કૃતિ મેં હમેં દીપ બુઝાના મંજૂર નહીં હૈ, હમ તો જ્ઞાન કા દીપ પ્રજ્વલિત કરનેવાલી એક પરંપરા કે વારિસદાર હૈં.'' ગુરુજીના શબ્દો હતા : 'દીપ બુઝાના' નામ રમતનું ન ચાલે. તરત જ એમણે રમતનું નામ બદલ્યું : ''આહ્વાન.'' કેટલી સજગતા !

એક વાર જબલપુર નગરમાં મહાકૌશલ પ્રાંતના મુખ્ય શિક્ષકો અને એથી ઉપરના અધિકારીઓની બેઠક હતી. સવારનો સમય. ગુરુજી બેઠકમાં અધિકારીઓ પાસેથી વૃત્ત લઈ રહ્યા હતા. પ. પૂ. ગુરુજીએ એક અધિકારીને પૂછ્યું : 'તમારા નગરમાં કેટલા સ્વયંસેવક છે ?'

અધિકારીએ તે વખતે જે સંખ્યા હતી એ અને સંપર્કિત સ્વયંસેવકોની સંખ્યા કહી.

ગુરુજીએ કહ્યું, 'તમારી તો ખૂબ જૂની શાખા છે. ત્યાં તો સ્વયંસેવકો વધારે હોવા જોઈએ. આમ કેમ છે ?'

અધિકારીએ કહ્યું : 'એમાંથી કેટલાક સ્વયંસેવકો શાખા છોડીને જતા રહ્યા છે.' ગુરુજીએ કહ્યું, 'આ છોડી જવાનું કાર્ય ક્યારથી ચાલી રહ્યું છે ?' ગુરુજીએ ખૂબ ગંભીરતાથી કહ્યું, 'સંઘકાર્ય સમાજના બંધુઓને છોડવાનું નહીં, જોડવાનું કાર્ય છે.'

કાર્ય પ્રત્યેની જાગૃતિ :

કાર્ય પ્રત્યેની કેટલી સતેજતા – જાગૃતિ ! આવા અખંડ જાગૃતિના પ્રયાસમાંથી જ સ્વયંસેવકોના વ્યક્તિત્વનું ઘડતર થયું હતું. ૧૯૫૭ની ઘટના છે. સતારા જિલ્લામાં સરકારી પ્રતિબંધને કારણે ખુલ્લા મેદાનમાં શાખા લગાવી શકાતી નહોતી. પરિણામે ત્યાંના સ્વયંસેવકોએ ગુરુદક્ષિણા-ઉત્સવ કરવા માટે એક સ્વયંસેવકના ઘરે સત્યનારાયણની કથાનું આયોજન કર્યું હતું. એમાં જૂના-નવા બધા સ્વયંસેવકોને સૂચના આપવામાં આવી હતી. પૂજાવિધિ કરાવનાર પંડિતને પણ કહેવામાં આવેલું કે જે ધન આવશે એ રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની ગુરુદક્ષિણામાં જમા થશે.

પંડિતજીએ પણ આનંદથી આ વાત સ્વીકારી પોતે પણ દક્ષિણા ન લીધી, ઉપરથી આપી અને સત્યનારાયણની કથા કરી. આવી રીતે સ્વયંસેવકોએ ગુરુદક્ષિણાનો કાર્યક્રમ કર્યો.

ઉત્સવ ઊજવાયો એના થોડા સમય પછી તરત જ આ વિસ્તારમાં ગુરુજીનો પ્રવાસ હતો. એમને ગુરુદક્ષિણા-ઉત્સવ કેવી રીતે થયો એનું અહેવાલ-કથન કરવામાં આવ્યું. પ.પૂ.ગુરુજીએ બેઠકમાં જ કહ્યું, 'સ્વયંસેવકોએ ભગવા ધ્વજનું પૂજન કરીને ધ્વજ સમક્ષ જે ધન સમર્પિત કર્યું છે એ જ માત્ર સંઘની દક્ષિણા હોઈ શકે. સ્વયંસેવકોએ સત્યનારાયણની પૂજામાં ધન અર્પણ કર્યું છે, તો એ ધન પૂજા કરાવનાર પંડિતજીનું છે. સૌથી પહેલાં એ ધન પંડિતજીને આપી દો અને તેની સૂચના મને તરત જ પહોંચાડો.' સંઘની પરંપરા સિવાયની કોઈ વાત એમને મંજૂર નહોતી. દરેક સ્વયંસેવકમાં સ્વયંસેવકત્વ જગાડવાનો એમણે અખંડ પ્રયાસ કર્યો.

નાના-નાના આગ્રહોમાંથી જ સ્વયંસેવકત્વનું નિર્માણ થાય છે, એ પૂજનીય ગુરુજી સારી રીતે જાણતા હતા અને એટલે જ શાખા, એમાં થતા કાર્યક્રમો, સ્વયંસેવકોના વ્યવહારમાં પૂર્ણતા નિખારવાનો એમણે પ્રયત્ન કર્યો. સ્વયંસેવકો પાસે પણ એમણે આગ્રહ રાખ્યો હતો.

કાનપુરમાં સંઘશિક્ષા-વર્ગ ચાલી રહ્યો હતો. પૂજનીય ગુરુજીની ઉપસ્થિતિમાં જ પૂર્ણ ગણવેશમાં સંચલન નીકળ્યું. સંચનલમાં સ્વયંસેવકો ગણશઃ શિસ્તબદ્ધ ચાલતા હતા. પ્રાંતભરના પ્રચારક અને અન્ય પ્રમુખ કાર્યકર્તાઓના ગણ પણ એમાં સામેલ હતા. શહેરના મુખ્ય માર્ગો પર સંચલન નીકળ્યું.

રાતના સમયે ભોજન પછી અનૌપચારિક વાતચીત માટે કાર્યકર્તા પ. પૂ. ગુરુજીની સામે મેદાનમાં બેઠા હતા. દિવસના પથ-સંચલનની વાતનો ઉલ્લેખ આ ચર્ચામાં થયો, એટલે ગુરુજીએ પૂછ્યું કે, 'તમારા અધિકારીઓના ગણમાં કોઈ એકના માથા પર ટોપી નહોતી. કોણ હતું એ ?'

સેંકડો સ્વયંસેવકોની વચમાં કોઈ એક સ્વયંસેવકે ટોપી નહોતી પહેરી એ ગુરુજીએ જોઈ લીધું હતું. સ્વયંસેવકોમાં સન્નાટો છવાઈ ગયો. એટલામાં એક અધિકારી ઊભા થયા. પૂજનીય ગુરુજી બોલ્યા, 'અરે, તો તમે ટોપી નહોતી પહેરી ?' અધિકારીએ 'હા' કહ્યું. 'તમારી ટોપી ક્યાં હતી ? સંચલન તો પૂર્ણ ગણવેશમાં હતું ?' એમણે કહ્યું, 'અમારા ક્ષેત્રમાંથી શિક્ષાવર્ગમાં આવેલા એક સ્વયંસેવકને આપી દીધી.' ગુરુજીએ પૂછ્યું, 'તો એની ટોપીનું શું થયું ?' અધિકારીએ કહ્યું, 'એની પાસે નહોતી.' ગુરુજીએ હસતાં-હસતાં કહ્યું : 'અચ્છા, તો એને લાંચ આપીને સાથે લાવ્યા છો.' અને ગુરુજીએ ઉમેર્યું, 'આ રીતે સુવિધાઓ કરી આપવાથી કોઈ સ્વયંસેવક બનતો નથી.'

હવે બીજું ઉદાહરણ જુઓ, જેમાં ગુરુજીને મન સ્વયંસેવકની સુવિધાની મનઃકલ્પના કેવી હતી ? તામિલનાડુમાં મદુરાઈમાં દક્ષિણ ક્ષેત્રના સ્વયંસેવકની બે દિવસની બેઠકનો સમારોપ પ. પૂ. ગુરુજી કરવાના હતા. ૫ વાગ્યે એમનું બૌદ્ધિક પૂરું થવાનું હતું. ચાલુ બેઠકે એક સ્વયંસેવક સાડાપાંચ વાગ્યે બસ પકડવાની હોવાથી નીકળી ગયા. કાર્યક્રમ પૂરો થયા પછી ગુરુજીએ પેલા સ્વયંસેવક બાબતે પૂછપરછ કરી. એક સ્વયંસેવકે કહ્યું કે એમને સાડાપાંચે બસ પકડવાની હોવાથી જલદી નીકળી ગયા. ગુરુજીને આશ્ચર્ય થયું. એમણે કહ્યું : 'અરે, કાર્યક્રમ શરૂ થયો એ પહેલાં એ સ્વયંસેવક સાથે મારી વાત થઈ હતી. મેં એમને કહ્યું કે મારું પ્રવચન બરાબર પાંચ વાગ્યે પૂરું થશે. બસ પકડવામાં મોડું નહીં થાય. એમણે હા પણ પાડી હતી.' આટલું કહી ગુરુજીએ સ્વયંસેવકોને ઘડિયાળ બતાવી. બરાબર પાંચ વાગ્યા હતા. પોતાના વ્યસ્ત કાર્યક્રમો વચ્ચે પણ સ્વયંસેવકોની સગવડ-અગવડનું કેટલું ધ્યાન રાખતા ! એક સ્વયંસેવકને એની બસ પકડવામાં મોડું ન થાય એ માટે પણ તેઓ સચેત હતા. સ્વયંસેવકની બસ ન છૂટી જાય એની એમને ચિંતા હતી.

એક બેઠકમાં સ્વયંસેવકોની બધી પૂછપરછ કરતા હતા કે ભાઈ, સંઘનું બધું કામ કેમનું ચાલે છે ? એક કાર્યકર્તાએ ઊભા થઈને શરૂ કર્યું કે 'કામનો વિસ્તાર થતો નથી.' પૂ. ગુરુજીએ પૂછ્યું કે 'કેમ, ભાઈ, કામ કેમ વધતું નથી?' પેલા કાર્યકર્તાએ તરત જવાબ આપ્યો કે, 'મેરે કાર્યકર્તા કુછ કામ નહીં કરતે હૈં.' પૂ. ગુરુજીએ કહ્યું કે, 'નહીં, યે કલ્પના ગલત હૈ. મેરે કાર્યકર્તા નહીં, આપ કહીએ, મેરે સાથીદાર, મેરે સહયોગી; મેરે કાર્યકર્તા નહીં.' આવી કોઈ જ ભેદરેખા એમને મંજૂર નહોતી. અધિકારી અને સ્વયંસેવક, નેતા અને તેની પાછળ ચાલનારા સમર્થકો - એ ભાવ એમને ખપતો નહોતો. એક અખંડ રૂપ એમને મંજૂર હતું. સંઘના વિકાસ અને સ્વયંસેવકોના ઘડતર પાછળ આવી સતત કાળજી રખાઈ છે. રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના પાયામાં આ પરિશ્રમ છે. પૂ. ગુરુજીના આ કાર્ય પ્રત્યેના સમર્પણભાવમાં એક તેજોવલય, એક પ્રકાશપુંજ આપણને જોવા મળે છે.

દીપ અનંત : પ્રકાશ એક

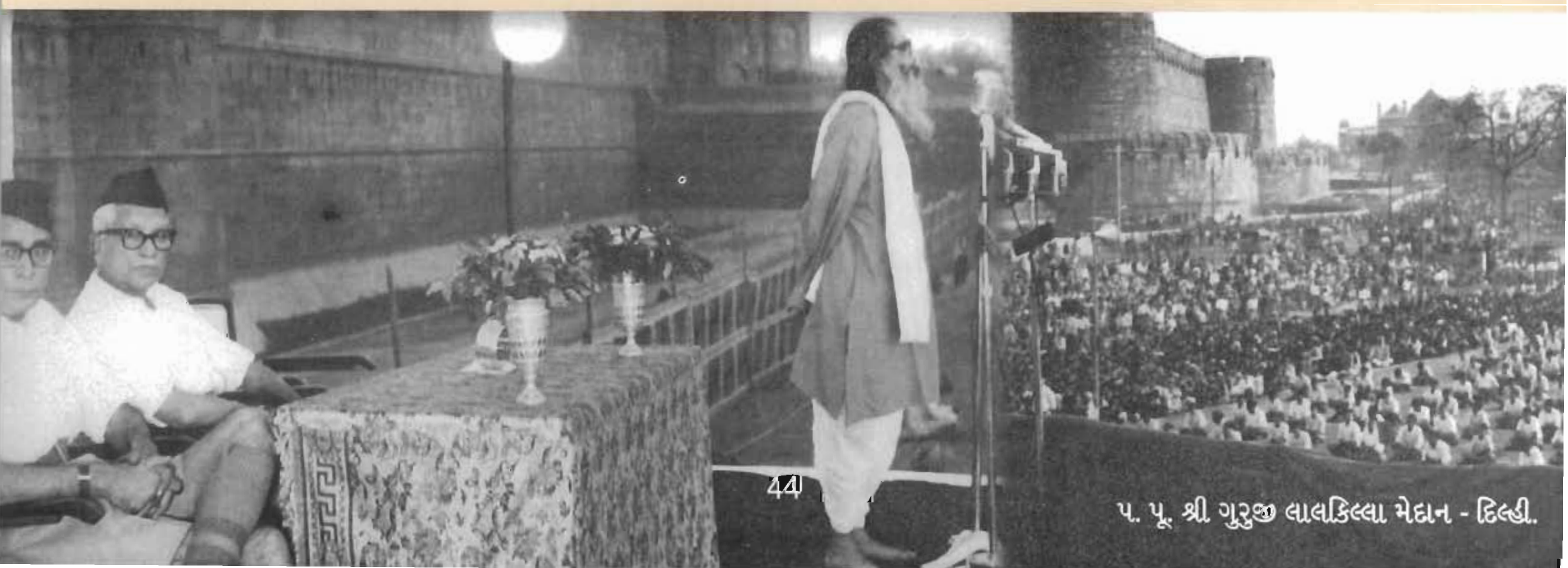
સંઘનું કામ કેવું ? આપણે દીપક પ્રગટાવીએ ત્યારે જ્યોતિ પ્રજ્વલિત થતી હોય છે. પૂ. ગુરુજી કહેતા, 'એક દીપ સે જલે દૂસરા, ઐસે અગણિત દીપ જલે.' એક દીપકથી બીજો દીપક પ્રગટાવવો, બીજાથી ત્રીજો પ્રગટાવવો, ત્રીજાથી ચોથો... એમ અખંડ દીપમાલિકાઓ જલતી રહે. શંકરાચાર્યના અદ્વૈતના તત્ત્વજ્ઞાનનું આ સાકાર રૂપ છે. આમાં ક્યાંય ભેદ નથી. તમે જુઓ તો ખરા, દીવો એક હોય કે દસ હોય, દીવા પ્રકાશિત હોય, પરંતુ વિજ્ઞાનનું હજુ કોઈ સાધન એવું પેદા નથી થયું કે દરેક દીવાના પ્રકાશની ભિન્નતા નક્કી કરી શકે કે આ પ્રકાશ આ દીવાનો છે, આ પ્રકાશ પેલા દીવાનો છે. તેલનો દીવો હોય, દિવેલનો દીવો હોય કે, ઘીનો દીવો હોય; દીવો કોડિયામાં સળગતો હોય કે દીવો ચાંદીની થાળીમાં સળગતો હોય, પરંતુ દીવાના પ્રકાશમાં કોઈ અંતર હોતું નથી. દીવા શેમાં પ્રગટ્યા એ ભિન્ન હોય છે, પણ પ્રકાશ અભિન્ન હોય છે. શતસહસ્ર રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના સ્વયંસેવકરૂપી દીપ કાશ્મીરથી કન્યાકુમારી, અટકથી કટક સુધી પ્રજ્વલિત થાય છે. સમગ્ર રાષ્ટ્રમાં તેનાથી એક તેજોવલય, એક પ્રકાશપુંજ પથરાયો છે. આ પ્રકાશપુંજમાં ક્યાંય કોઈ જ ભેદરેખા નથી. કલ્પના નથી કરી શકાતી કે આ અમદાવાદના સ્વયંસેવકનો પ્રકાશ છે કે આ ગૌહાટીના સ્વયંસેવકનો પ્રકાશ છે કે આ કન્યાકુમારીના સ્વયંસેવકનો છે. સર્વત્ર એક જ પ્રકાશ...પ્રકાશ...એક દીપમાંથી પ્રગટેલા અગણિત દીપ... દીપમાલિકાની અનંત હારમાળા...

આ પ્રકારનાં શતસહસ્રો જીવનનિર્માણ કરવાનું કામ પૂ. ગુરુજીની આ જાગૃત દૃષ્ટિ, અખંડ જાગૃતિ, સૂક્ષ્મ નિરીક્ષણનું પરિણામ હતું. આનું કારણ પૂ. ગુરુજીનું અખંડ સ્વયંસેવકત્વ હતું. એ સ્વયંસેવકત્વ સતત જીવતું હતું, જાગતું હતું. એક જ મન હતું. સ્વયંસેવક અને સરસંઘચાલકની કોઈ ભેદરેખા નહોતી. 'અહં બ્રહ્માસ્મિ - તત્ત્વમસિ'નું સાકાર રૂપ હતું. 'હું છું એ જ તું છે...' પરિણામે એમનું વ્યક્તિત્વ બીજામાં ચેતના જગાવવાનું સામર્થ્ય ધરાવતું હતું પારસમણિના સ્પર્શથી લોખંડ સોનું બની જાય છે, પરંતુ ગુરુજી કહેતા હતા કે પારસમણિની પણ મર્યાદા હોય છે. એ પારસમણિના સ્પર્શથી લોખંડને સોનું તો બનાવી શકાય છે, પણ પારસમણિ નથી બનાવી શકાતો. સંઘના સ્વયંસેવકના સ્પર્શથી સ્વયંસેવક પેદા કરાય છે. આ અખંડ માલિકા પ.પૂ.ગુરુજીના જીવનની અખંડ સાધનાને કારણે બની છે. ગુરુજીના જીવનની અંદર 'નિત્ય શાખા' એ શ્રદ્ધાનો વિષય હતો. શાખા માટેની એમની જબરજસ્ત પ્રતિબદ્ધતા હતી.

અનુશાસનનો આગ્રહ

પ. પૂ. ગુરુજીને પૂર્ણ સ્વયંસેવકત્વ અભિપ્રેત હતું. કાર્યમાં સંપૂર્ણ એકરૂપતા ખપતી હતી. એમાં અધૂરપ કે અપૂર્ણતાને સ્થાન નહોતું. વાત અનુશાસનની હોય કે વ્યવસ્થાની, એમણે પોતાના વ્યવહારથી સ્વયંસેવકો સામે એક આદર્શ રજૂ કર્યો. તેઓ અનુશાસનના પાલન પર ભાર મૂકતા હતા અને પોતે પણ પોતાના જીવનમાં તેનું પાલન કરતા હતા.

બારાબંકીમાં પૂજનીય ગુરુજીનો બૌદ્ધિક વર્ગ ચાલતો હતો. એ સમયે એક સ્વયંસેવક પેન્સિલથી કાગળ પર ગુરુજીનું ચિત્ર બનાવી રહ્યો હતો. બૌદ્ધિક પૂરું થયું ત્યાં સુધીમાં એણે માઈક પાસે ઊભેલા ગુરુજીનું આબેહૂબ ચિત્ર બનાવી નાખ્યું હતું. કાર્યક્રમ પૂરો થયા પછી પેલો સ્વયંસેવક રજ્જુભૈયા પાસે ગયો અને ચિત્ર દેખાડીને કહ્યું, 'આના પર પૂજનીય ગુરુજીના હસ્તાક્ષર કરાવી આપો.' રજ્જુભૈયા એને ગુરુજી પાસે લઈ ગયા. ગુરુજીએ ચિત્ર જોયું અને પૂછ્યું કે



પ. પૂ. શ્રી ગુરુજી લાલકિલ્લા મેદાન - દિલ્હી.

'તમે માત્ર ચિત્રકાર જ છો કે સ્વયંસેવક પણ છો ?' પેલા સ્વયંસેવકે કહ્યું, 'હું સ્વયંસેવક છું અને નિયમિત શાખામાં પણ જાઉં છું.' એટલે પૂજનીય ગુરુજીએ કહ્યું, 'જે સમયે હું મારી સંપૂર્ણ શક્તિથી મારા હૃદયના ભાવોને વાણી વડે વ્યક્ત કરી રહ્યો હતો, એ વખતે તમે એમાં ધ્યાન ન આપી ચિત્ર બનાવવામાં તલ્લીન હતા. એ સમય તો આ કામ માટે નહોતો. તમે કેવા સ્વયંસેવક છો ? આ ચિત્ર પર મારા હસ્તાક્ષર નહીં મળે.'

એક વાર પરમ પૂજ્ય ગુરુજી આંધ્રપ્રાંતના પ્રવાસે હતા. ગાડી સ્ટેશન પર લગભગ સવારે સાડાચાર વાગ્યે પહોંચતી હતી. સ્ટેશન જંકશન હોવાના કારણે ગાડી ત્યાં લગભગ પોણો કલાક રોકાતી. સ્વયંસેવકોએ એવું વિચાર્યું કે સાડા - ચારથી પાંચ વાગ્યાની વચ્ચે, અડધા કલાકમાં ગુરુજી પ્રાતઃવિધિ પતાવી લેશે. થરમોસમાં ચા તૈયાર રાખીશું. પૂ. ગુરુજી ચા પી લે એટલે ત્યાંથી સો માઈલ દૂર જે સ્થાન પર પહોંચવાનું છે ત્યાં કાર દ્વારા નીકળી જઈશું, જેથી એ સ્થાન પર રાખેલા કાર્યક્રમમાં નિયત સમયે પહોંચી શકાય.

રાતે ગાડીમાં બેઠા પછી ગુરુજીને બીજા દિવસના કાર્યક્રમની રૂપરેખા એમની સાથેના એક વરિષ્ઠ અધિકારી બાપુરાવ મોઘેએ કહી સંભળાવી. ગુરુજીએ રૂપરેખા સાંભળતાં જ બાપુરાવને પૂછ્યું, 'રેલગાડીના ડબ્બામાં પાયખાનામાં એક નાનકડી સૂચના લખેલી હોય છે, એ તમે વાંચી છે ?' બાપુરાવે કહ્યું : 'હા, વાંચી છે.' ગુરુજીએ કહ્યું : 'એમાં લખ્યું હોય છે કે ગાડી જ્યારે સ્ટેશન પર ઊભી હોય ત્યારે પાયખાનાનો ઉપયોગ કરવો જોઈએ નહીં. આ નિયમનું હું હંમેશાં પાલન કરું છું. આથી એ સમયે રેલના ડબ્બામાં પ્રાતઃવિધિ મારાથી કરવી શક્ય નહીં બને.' હવે તમે વિચાર કરો, લાખો લોકો રેલગાડીમાં પ્રવાસ કરે છે, આ સૂચના બધાએ વાંચી હશે, પણ એનું પાલન કેટલા લોકોએ કર્યું હશે ?

શાખા પ્રત્યેની શ્રદ્ધા :

પ. પૂ. ડૉ. હેડગેવારજીના સ્વર્ગવાસ પછી રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની ધુરા પ. પૂ. ગુરુજી સંભાળતા હતા. સંઘમાં ગુરુજી કરતાં અનેક જૂના અનુભવી કાર્યકર્તાઓ હતા. દેશની સામે આઝાદીનો પ્રશ્ન ઊભો હતો. ચારે તરફ આંદોલનોનું વાતાવરણ હતું. આવા સમયે આવેશમાં આવીને કેટલાક કાર્યકર્તાઓ ગુરુજીને પ્રશ્નો પૂછતા હતા. એક વાર બેઠકમાં એક કાર્યકર્તાએ કહ્યું કે : 'ગુરુજી, આ શાખા-શાખા કરવાથી દેશમાં કાંઈ થશે નહીં. આપણે હવે કોઈ નવી પદ્ધતિનો વિચાર કરવો જોઈએ. નહીં તો આપણો સંઘ પણ ડૂબશે અને સાથે આ દેશ પણ ડૂબશે.' પેલા કાર્યકર્તાએ કહેલું કે બધું તૂટી જશે, ફૂટી જશે, સંઘ વેરણછેરણ થઈ જશે. નિરાશાનો સૂર વ્યાપ્ત થયો હતો. પૂ. ગુરુજી સ્વયંસેવકનો આક્રોશ શાંતિથી, સ્વસ્થતાથી સાંભળી રહ્યા. પૂજનીય ગુરુજીની ૩૫-૩૬ વર્ષની તેજસ્વી ઉંમર અને એમણે સ્વસ્થતાથી કહ્યું : "ઈફ ઈટ વીલ કોલેપ્સ ડાઉન, આઈ વીલ બીગીન ઈટ ફ્રોમ ધ બીગીનીંગ–"

વિનાશ થઈ જશે તો હું ફરી એક વાર નાગપુરના મોહિતે વાડાના સંઘસ્થાન ઉપર પાછો જઈશ. આ જ લોકોને ભેગા કરીને ડૉ. હેડગેવારજીની જેમ ફરીથી શાખા શરૂ કરીશ અને ભારતમાતાનો જયજયકાર કરીને જ જંપીશ." શાખા માટે તેમની આવી અપાર શ્રદ્ધા હતી. શાખા પ્રત્યે એમનો વિશ્વાસ અને શ્રદ્ધાની ઊંચાઈ કેવી હતી ! શારદાપીઠના શંકરાચાર્યનું દેહાવસાન થયું તે સમયની ઘટના છે. શંકરાચાર્યના દેહવિલય પછી દ્વારિકાપીઠના શંકરાચાર્ય અભિનવ સચ્ચિદાનંદજીએ પ. પૂ. ગુરુજીને કહેણ મોકલ્યું હતું કે 'ગુરુજી, શંકરાચાર્યજીની જગ્યા ખાલી થઈ છે અને આ વિશ્વમાં જગદ્‌ગુરુનું સ્થાન શોભાવે તેવું વ્યક્તિત્વ તમારા સિવાય બીજું કોઈ નથી.' કોઈ પણ વ્યક્તિને આ 'દક્ષ-આરમ્' કરવાના બદલે જો જગતગુરુનું સ્થાન મળતું હોય તો શા માટે ના ગમે ? પ. પૂ. ગુરુજીએ દ્વારિકાના શંકરાચાર્ય શ્રી અભિનવ સચ્ચિદાનંદજીને પૂર્ણ નમ્રતા સાથે કહેવડાવ્યું કે, "જગદ્‌ગુરુ ! આપની આજ્ઞા મને શિરોધાર્ય છે. પરંતુ આ પૂર્વે જ એક મહાન કામનો મેં સ્વીકાર કરી લીધો છે. શાખા એ મારા જીવનની શ્રદ્ધા છે. શંકરાચાર્ય-પદ કરતાં પણ શાખા દ્વારા સમાજની હું વધારે સેવા કરીશ. એટલા માટે આ જગતગુરુના કામઠામાંથી આપ મારો વિચાર છોડી દેજો." પૂજનીય ગુરુજીમાં નમ્રતા તો હતી જ, પણ એની સાથેસાથે આ બે તરુણ, બે બાલ, બે શિશુ સ્વયંસેવકોવાળી અભિનવ શાખાની રચનામાં તેમને કેટલી જબરદસ્ત શ્રદ્ધા હતી ! જગદ્‌ગુરુના સ્થાન કરતાં આ શાખાપદ્ધતિ સમાજજીવનમાં એક મોટું સાધન બની શકે છે એવી પૂરી શ્રદ્ધા સાથે ગુરુજી ભાવપૂર્વક કાર્યરત રહ્યા. સંઘ-શાખા પ્રત્યેની શ્રદ્ધા અને સ્વયંસેવકથી મોટું બીજું કોઈ પદ પૂજનીય ગુરુજીને આંબી શક્યું નહીં. જગજ્જનની મા ભારતીની સેવા સિવાય બીજી કોઈ જ એમની આકાંક્ષા નહોતી.

આધ્યાત્મિકતાની ઊંચાઈ :

એક વાર પૂજનીય ગુરુજીનો મદ્રાસ પ્રાંતનો પ્રવાસ હતો. તેમણે કાંચીકામકોટિપીઠના શંકરાચાર્ય શ્રી ચંદ્રશેખરેન્દ્ર સરસ્વતીજીનાં દર્શનની ઇચ્છા વ્યક્ત કરી. પૂજનીય શંકરાચાર્યજીને સંદેશો કહેવડાવ્યો. તેમણે કહ્યું કે 'ગુરુજી એમની સુવિધા પ્રમાણે અહીં આવી શકે છે.' ગુરુજી કાંચીકામકોટિ ગયા. પરંતુ જે સમયે શ્રી ગુરુજીનું શાંકરમઠમાં આગમન થયું તે સમયે પૂજનીય શંકરાચાર્યજી સ્નાન વગેરે પતાવી, પવિત્ર વસ્ત્ર ધારણ કરી, પૂજાગૃહમાં આસન પર બેસી, ભગવદ્- અર્ચના કરી રહ્યા હતા. ત્યાંનો એક નિયમ છે કે પૂજાગૃહમાં પૂજાવિધિ શરૂ થાય પછી કોઈ પ્રવેશી ન શકે, ભલે પછી તેમનો શિષ્ય કેમ ન હોય. પરંતુ પૂ. શંકરાચાર્યને ખબર પડી ગઈ કે ગુરુજી પધાર્યા છે, એ જ ક્ષણે એમણે પૂજનીય ગુરુજીને પૂજાખંડમાં આવવા જણાવ્યું. ગુરુજી હાથ-પગ ધોઈ, પૂજાગૃહની અંદર ગયા. ત્યાં આસન પર બેઠા. બંનેએ સાથે પૂજા કરી, વાતો કરી. એ પછી ગુરુજીએ વિદાય લીધી. આ બધું જોઈ શંકરાચાર્યજીના એક શિષ્યથી રહેવાયું નહીં. એણે શંકરાચાર્યજીને પૂછ્યું, 'સ્વામીજી, તમે તો પૂજાગૃહમાં પૂજન વખતે કોઈને પ્રવેશવા દેતા નથી, તો પછી ગુરુજીને કેમ અંદર આવવા દીધા ?'

પૂજનીય શંકરાચાર્યજીએ જવાબ આપ્યો : 'એ સામાન્ય નિયમ સર્વ- સાધારણ લોકો માટે છે. શ્રી ગુરુજી તો પ્રત્યક્ષ ચંદ્રમૌલીશ્વર છે.' આવા ગુરુજીને શાખા – સંઘકાર્યથી મોટું બીજું કોઈ પદ માન્ય નહોતું.

પૂ. ગુરુજી મૈસૂરનું રામકૃષ્ણ મિશન અને તેનું વિદ્યામંદિર જોવા ગયા હતા. તે સમયે સ્વામી અમિતાભ મહારાજે ગુરુજીના સ્વાગત-પ્રવચનમાં કહ્યું હતું, 'શ્રી ગુરુજીએ અત્યંત પરિશ્રમથી અને ધૈર્યપૂર્વક સારગાછી આશ્રમમાં રહી સાધના કરી હતી. તે સમયે એમના સહવાસના આધારે જ હું કહી શકું છું કે રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘે તેના નેતા-સ્વરૂપે 'નરેન્દ્ર' જ પ્રાપ્ત કર્યો છે.'

પૂજ્ય ગુરુજી ગુજરાત આવવાના હતા. એ જ સમયે ગુરુ મહારાજ પૂ. શ્રી રંગ અવધૂત પણ વડોદરામાં પધાર્યા હતા. તેમને ખબર પડી એટલે પૂજ્ય ગુરુ મહારાજે કહ્યું કે, 'મારે ગુરુજીને મળવા આવવું છે.' સંઘના સ્વયંસેવકોએ કહ્યું કે 'ગુરુજીને મળવા માટે ગુરુ મહારાજ પધારે એ બરાબર નહીં.' ગુરુજીએ કહ્યું કે 'હું આવીશ.' ગુરુ મહારાજે કહ્યું કે 'નહીં, હું આવીશ.' મડાગાંઠ પડી. આખરે ગુરુજીએ ગુરુ મહારાજનો આદેશ માન્યો અને ગુરુ મહારાજ પોતે એમને મળવા આવ્યા. એ દૃશ્ય કેવું બન્યું હતું ! બાજવામાં હિંમતભાઈ ઠક્કરના ઘરે ગુરુ મહારાજ પધાર્યા હતા અને વિશ્વના વિશાળ સંગઠનના વડા અને પોતે પણ જીવનની આધ્યાત્મિકતાને વરેલા ગુરુજી બાળકની જેમ દોડતા-દોડતા નીચે આવ્યા. એમણે જ ગાડીનો દરવાજો ખોલ્યો. ગુરુ મહારાજ નીચે ઊતર્યા. શ્રી ગુરુજીએ એમને સાષ્ટાંગ પ્રણામ કર્યા, ગુરુજીએ એમને ઊંચકી લીધા. બંને એકબીજાને ભેટી પડ્યા અને એક વાક્ય બોલ્યા. એ વાક્ય આધ્યાત્મિક્તાને વરેલા લોકો જ સમજી શકે. ગુરુજીએ કહ્યું કે : "આમ તો આપણે વારંવાર મળીએ છીએ, પણ સશરીર આપણે પહેલવહેલા મળ્યા છીએ." સદંતર મૌન હતા છતાંયે એમનો વાર્તાલાપ ચાલી રહ્યો હતો. આધ્યાત્મિક સ્પંદનોથી એમનાં ભાવ, વિચાર, વાણી – સઘળાંની આપ-લે થતી હતી. બધા સ્તબ્ધ બનીને જોઈ રહ્યા હતા. બંને એકબીજાને છોડે નહીં. અને કહેવાય છે કે ગુરુ મહારાજ બીજાની જોડે ક્યારેય ફોટો પડાવતા નહીં. પૂજ્ય ગુરુ મહારાજે બધાને આશ્ચર્યમાં ગરકાવ કરી દીધા. એમણે ફોટોગ્રાફરને બૂમ પાડી, 'આવો, ગુરુજી સાથે મારો ફોટો પાડો.' એમને બાથમાં લઈને ફોટો પડાવ્યો. આજે પણ એ ફોટો અસ્તિત્વમાં છે. પૂજનીય ગુરુજીનું કેવું ભાવવિશ્વ હતું, આધ્યાત્મિકતાની કઈ ઊંચાઈએ આ મહાપુરુષ પહોંચ્યા હશે એની સ્વાભાવિક કલ્પના થઈ શકે છે.

શાખા એ જ જીવનમંત્ર :

આવી બધી જ આધ્યાત્મિકતાની ઊંચાઈને આંબી ગયેલા પરમ પૂજ્ય ગુરુજીને મન શાખા એ જ જીવનમંત્ર હતો, ધ્યેય હતું. શાખાતંત્રમાં એમનો કેવો અડગ વિશ્વાસ હતો, એમાં એમની શ્રદ્ધા કેટલી પ્રબળ હતી તેની પ્રતીતિ કરીએ. ૧૯૪૬ના ફેબ્રુઆરી મહિનામાં પૂ. ગુરુજી કલકત્તા શહેરના પ્રવાસે હતા. એક દિવસ સાંજે નગરના કેટલાક પ્રતિષ્ઠિત નાગરિકો સાથે પૂજનીય ગુરુજીનો ચા-પાણીનો કાર્યક્રમ હતો. એમાં એક પ્રૌઢ ડૉક્ટરસાહેબે શ્રી ગુરુજીને કહ્યું : 'તમારા સંઘના ધ્યેય સાથે હું સહમત છું, પરંતુ હજુ સુધી મને એ સમજણ નથી પડી કે આટલા વિશાળ ધ્યેયની સિદ્ધિ આવાં તુચ્છ સાધનો વડે કેવી રીતે પ્રાપ્ત થશે ? દક્ષ-આરમ્-દંડ-ખડ્ગ-શૂળ-કબડ્ડી વગેરે જેવા ક્ષુદ્ર કાર્યક્રમોના માધ્યમથી આટલું ઉચ્ચ અને શ્રેષ્ઠ ધ્યેય ક્યારે પ્રાપ્ત થઈ શકશે ?'

પૂજનીય ગુરુજીએ હસતાં-હસતાં પૂછ્યું : 'ડૉક્ટરસાહેબ ! હાલ તમારી એલોપથીની માસ્ટર ડ્રગ કઈ છે?' ડૉક્ટરે કહ્યું, 'પેનીસીલીન.' ગુરુજીએ સામે પ્રશ્ન કર્યો, 'આ પેનીસીલીન કઈ વસ્તુમાંથી બનાવવામાં આવે છે?' ડૉક્ટરસાહેબે કહ્યું, 'સૌ કોઈ જાણે છે કે જે સડેલા અન્નની દુર્ગંધ આપણે સહન કરી શકતા નથી, એવા અન્નમાંથી આ ડ્રગ બનાવવામાં આવે છે.' પ. પૂ. ગુરુજીએ કહ્યું : 'એનો અર્થ એ થયો કે યોગ્ય લોકોના હાથમાં આવ્યા પછી ખરાબ વસ્તુનો પણ સદુપયોગ થઈ શકે છે' (Does it mean that even the worst thing can yield the best results at the hands of experts ?) ડૉક્ટરસાહેબે કહ્યું, 'હા.' ગુરુજીએ તરત જ એમાં એક વાક્ય બીજું જોડી દીધું : 'અને એ જ અમે છીએ સંગઠનવિજ્ઞાનના વિશેષજ્ઞ.' (And here we are the experts in the science of organisation.)

એક વખત વર્ધા પાસેના સિન્દીમાં સંઘના બધા પ્રચારકોનો શિબિર હતો. આ શિબિરમાં પં. દીનદયાળ ઉપાધ્યાય સહિત સંઘના અનેક પ્રચારકો ભાગ લઈ રહ્યા હતા. યોજના એવી બની કે વારાફરતી એક દિવસ બધા વરિષ્ઠ પ્રચારકો ભોજન પીરસવાનું કામ કરશે. એક દિવસ પં. દીનદયાળજીએ પીરસવાનું હતું. એમના હાથમાં રોટલી પીરસવાની જવાબદારી હતી. એ રોટલીની ટોપલી લઈને ચાલતા હતા. ગુરુજીની પંક્તિમાં જ એમનો પીરસવાનો વારો આવ્યો અને અચાનક ગુરુજી પાસે પહોંચ્યા ત્યાં તેમના હાથમાંની રોટલીની ટોપલી પડી ગઈ. દીનદયાળજી થોડા અસ્વસ્થ થઈ ગયા. એમણે ફટાફટ રોટલીની ટોપલી ઉઠાવી લીધી, ત્યારે ગુરુજીએ હસતાં-હસતાં કહ્યું કે ''ક્યોં, પંડિતજી, આજકલ શાખા મેં જાના બંદ હૈ ક્યા !'' ક્યાં રોટલીનું પડી જવું, ક્યાં દીનદયાળજીનું વ્યક્તિત્વ અને ગુરુજીના શબ્દો કયા હતા ? 'ક્યોં, પંડિતજી, આજકલ શાખા મેં જાના બંધ હૈ ક્યા !' જીવનની અંદર જે ચુસ્તી છે એ ચુસ્તી તમે ગમે ત્યાં જાઓ, શાખા સિવાય એનો કોઈ આરો નથી, એવી પ.પૂ.ગુરુજીની જે શ્રદ્ધા હતી એ પ્રગટ થયા વગર રહેતી નથી.

સંઘ : એક પરિવાર :

સંઘના અધિકારીની નૈતિક જવાબદારીઓ બાબતે પણ એમની દૃષ્ટિ અને અપેક્ષાઓ સ્પષ્ટ હતી. પ.પૂ. ગુરુજીએ એક વાર એક ગામના પ્રતિષ્ઠિત અને વયોવૃદ્ધ સજ્જનને સંઘચાલકનું પદ સ્વીકારવા વિનંતી કરી. વૃદ્ધ સજ્જને કહ્યું, 'સંઘચાલક તરીકે મારી પાસે આપની શી અપેક્ષા છે ?'

'આપ કલ્પના કરો. આપ સંયુક્ત પરિવારના મોભી છો. આપના પરિવારમાં દીકરા-દીકરી, ભાણા-ભાણી, પૌત્ર-પૌત્રીઓ છે. પરિવારના વડીલ તરીકે આપનું કામ શું રહેશે?' ગુરુજીએ સહજપણે એમને પૂછ્યું. વડીલ સજ્જને કહ્યું, 'એમનાં પાલન-પોષણ પ્રત્યે ધ્યાન આપીશ. સુખ-શાંતિથી જીવે એવો પ્રયત્ન કરીશ.' ગુરુજીએ પૂછ્યું : 'આપ એમને પરસ્પર ઝઘડવા દેશો ?' 'ના-ના, ક્યારેય નહીં.' વડીલે કહ્યું, 'હું એમને પરસ્પર લડવા તો ન જ દઉં. આપસમાં સ્નેહ-મમતા વધે એવો જ પ્રયત્ન કરીશ.'

'આપના પરિવારમાં દીકરા-દીકરી ભણી-ગણી મોટાં થાય એ તરફ આપનું ધ્યાન રહેશે કે નહીં ?' ગુરુજીએ પૂછ્યું. 'જરૂર.' વૃદ્ધે કહ્યું, 'એમના ભવિષ્યની ચિંતા કરીશ.' ગુરુજીનો બીજો પ્રશ્ન હતો, 'એમના જીવનમાં સ્થિરતા આવે એ માટે ધ્યાન આપશો ને ?' વડીલે કહ્યું, 'હા, એ તરફ પણ ધ્યાન આપીશ.' 'આપના દીકરાઓ ગુણવાન-ચારિત્ર્યવાન બને એ તરફ લક્ષ્ય આપશો કે નહીં ?' 'જી...' વડીલે કહ્યું, 'એ તો મારું સ્વાભાવિક કર્તવ્ય બની રહે છે.' ગુરુજીએ અંતે કહ્યું, 'સંઘને આપ આપનો પરિવાર જ માનો. આપે સંઘચાલક-પદે રહીને સંઘ માટે આ બધું જ કરવાનું છે.'

નાત-જાત, ભાષા-પ્રાંત, નાના-મોટા, સ્વયંસેવક-અધિકારી – આવા કોઈ જ ભેદ એમને મંજૂર નહોતા, અને એટલે જ વખતોવખત એમણે પોતાના આચરણથી આવી દીવાલો ધ્વસ્ત કરી હતી. નાગપુરમાં સંઘશિક્ષા-વર્ગ ચાલી રહ્યો હતો. વર્ગના સમારોહનો દિવસ હતો. પરમ પૂજ્ય ગુરુજી વર્ગમાં જ હતા. બપોરના સમયે સ્વયંસેવકો સાથે પરિચય-બેઠક ચાલી રહી હતી. બેઠકમાં પરિચય દરમિયાન એક સ્વયંસેવકે પરિચય આપ્યો, 'હું બેલગાઁવથી આવ્યો છું.' ગુરુજીએ પૂછ્યું, 'જેના માટે આજકાલ વિવાદ ચાલી રહ્યો છે એ જ બેલગાઁવ... ?' સ્વયંસેવકે જવાબ આપ્યો, 'હા.' ગુરુજીએ કહ્યું, 'તો પછી તમે ક્યા વાદી છો ?' સ્વયંસેવકે જવાબ આપ્યો, 'જી, હું તો મહારાષ્ટ્રવાદી છું.' પ. પૂ. ગુરુજીએ કહ્યું, 'ભાઈ, સંઘનો સ્વયંસેવક તો માત્ર એક જ વાદી હોય છે... અને એ રાષ્ટ્રવાદી. રાષ્ટ્રવાદીને બાદ કરતાં જો અન્ય કોઈ વાદી સંઘમાં આવે છે તો એ એની ભૂલ છે. આથી કૃપા કરી, તમે તમારા બિસ્તરા-પોટલાં બાંધી પાછા ચાલ્યા જાઓ. હું માનનીય સર્વાધિકારીજી પાસે આ

અનધિકાર ચેષ્ટા માટે પરવાનગી લઈ લઉં છું. સંઘ તથા રાષ્ટ્ર સાથે આવા લોકોની કોઈ સમજૂતી થઈ જ ન શકે.'

મહાપુરુષની નમ્રતા :

લોકોની નજરે ગુરુજી શ્રેષ્ઠત્વને વર્યા હતા. એ અત્યંત નમ્ર હતા, પરંતુ હિન્દુસ્થાનના કેટલાક બૌદ્ધિકો તેમના જીવતા-જીવ પૂ. ગુરુજીને ઓળખી શક્યા ન હતા. સંઘનો ગણવેશ, સંઘની શિસ્ત, પ્રચારથી દૂર રહી માતૃભૂમિની સેવા કરવાની સંઘની પરંપરાને કારણે સંઘ વિશે અને પરિણામે ગુરુજી વિશે અનેક ભ્રમણાઓ ફેલાવનારા સતત કાર્યરત રહેતા. એક એવી ભ્રમણા ફેલાવવામાં આવેલી કે ગુરુજીનું વ્યક્તિત્વ એટલે જાણે હિટલરશાહી, લેનિનશાહી, મુસોલિનીશાહી જેવું રૂપ પ્રચારિત કરવામાં આવતું. ગુરુજીને જાણ્યા સિવાય, મળ્યા સિવાય ગુરુજી વિશે લખનારાઓએ ક્યારેય ગુરુજીના વ્યક્તિત્વનાં સાચાં પાસાંનો ઉલ્લેખ કરવાનું ઉચિત ન માન્યું. સમાજને ભ્રમિત કરવા માટે વર્ષોવર્ષ પૂર્વગ્રહપીડિતો જે રીતે ગુરુજીને ચિત્રિત કરતા હતા તેમને માટે ગુરુજીની કરુણા, નમ્રતા, વિવેકને જાણવાં મુશ્કેલ હતાં. શ્રી ગુરુજી જેવા મહાપુરુષની એકાધિકારવાદી વ્યક્તિ તરીકે છાપ ઊભી કરનાર એ વ્યક્તિત્વની નમ્રતાનાં દર્શન આવા લોકોને તેમના મૃત્યુ પછી થયાં. પ. પૂ. ગુરુજીએ જીવનના અંત સમયે ત્રણ પત્રો લખ્યા હતા. પ. પૂ. ગુરુજીના એ ત્રણ પત્રો રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના પ્રત્યેક સ્વયંસેવક માટે અને જે લોકો ભારતમાતાના ઉત્થાનની આકાંક્ષા રાખે છે તેમના માટે પ્રેરણારૂપ છે. એ પત્રમાં ગુરુજીએ લખ્યું હતું કે, 'ગયાં ૩૩ વર્ષથી મારી વચ્ચે કામ કરતાં-કરતાં મારા સ્વભાવની વિચિત્રતાઓના કારણે, મારા વ્યક્તિત્વના દોષોના કારણે, કદાચ મારાથી તમારું અપનાન થયું હશે, તમને ક્યારેક દુ:ખી કર્યા હશે, ક્યારેક વેદના થઈ હશે. મેં તમને અપમાનિત કર્યા હશે. તો પ્રિય સ્વયંસેવક-બંધુઓ, તમે બધા ઉદાર હૃદયે મને ક્ષમા કરશો. હું તમારા બધાની કરબદ્ધ ક્ષમાયાચના કરું છું. હાથ જોડીને હું તમારા બધાની માફી માગું છું.'

તમે કલ્પના કરો કે લાખો સ્વયંસેવકોનાં હૃદય ઉપર જેમનું શાસન ચાલતું હતું, જેમના એક શબ્દ ઉપર લાખો સ્વયંસેવકો પોતાનું જીવન ન્યોછાવર કરવા માટે કટિબદ્ધ હતા, એવા એ મહાપુરુષ જીવના અંતકાળમાં સંઘના સ્વયંસેવકો પાસે, હિન્દુસ્થાનની પ્રજા પાસે, જેમને-જેમને એ મળ્યા છે એ સૌની પાસે કરબદ્ધ ક્ષમાયાચના કરે છે ! જેમનું સ્વયંસેવકત્વ હરપળ જાગતું હતું એ મહામનીષીની કેટલી નમ્રતા હતી ! જીવનની અંદર કેટલી પ્રામાણિકતા હતી !

પ. પૂ. ગુરુજી પ્રસિદ્ધિથી વિમુખ હતા. એ કોઈને પોતાનો ફોટો પાડવા દેતા નહોતા. ક્યારેક તસ્વીર ન લેવા દે ત્યારે આપણને એમ લાગે કે હા, ભાઈ, ક્યારેક તસ્વીર નહીં લેવા દેતા હોય. પરંતુ ગુરુજીના સમગ્ર જીવનને જોઈએ ત્યારે લાગે કે એમની પ્રસિદ્ધિ-વિમુખતા કેટલી ઊંચાઈએ પહોંચી હતી !

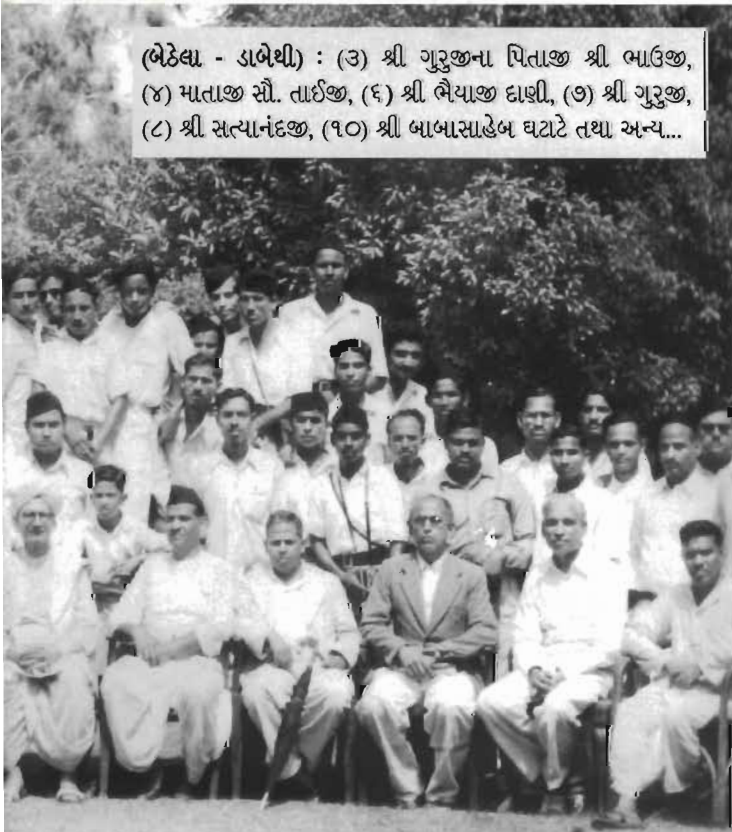
એક વાર પ્રયાગમાં ગોરક્ષા માટેનું સંમેલન મળ્યું હતું. પ. પૂ. ગુરુજી ત્યાં પહોંચ્યા. સંમેલનમાં દેશના ગણમાન્ય સંતો, ઋષિ-મુનિઓ, તપસ્વીઓ બિરાજમાન હતા. લાખો નાગરિકો ઉપસ્થિત હતા. પ. પૂ. ગુરુજી જેવા ત્યાં પહોંચ્યા કે તરત કેટલાક ઉત્સાહી લોકોએ 'પ. પૂ. ગુરુજી ઝિંદાબાદ', 'પ.પૂ. ગુરુજી અમર રહો', 'પ. પૂ. ગુરુજીની જય' એવો સૂત્રોચ્ચાર કર્યો. પ. પૂ. ગુરુજીના કાન ઉપર 'ગુરુજી અમર રહો' શબ્દો પડતાં જ જાણે કરંટ લાગ્યો હોય એમ ગુરુજી પાછા વળી ગયા, મોટરમાં બેસી ગયા. ડ્રાઈવરને કહ્યું કે ગાડી પાછી લઈ લો. પ્રભુદત્ત બ્રહ્મચારી એ જોઈ ગયા. મંચ ઉપરથી એ દોડ્યા. ગાડી ઊપડે એ પહેલાં જ એમણે ગુરુજીને રોક્યા. તેમણે ગુરુજીને પ્રાર્થના કરી કે 'ગુરુજી, પાછા ચાલો.' ગુરુજીએ કહ્યું કે "જે જગ્યા ઉપર 'ભારતમાતાની જય'નો નાદ થવો જોઈએ, જ્યાં જગન્નિયંતા માતૃભૂમિના



કલ્યાણની ચર્ચા કરવાની હોય ત્યાં તમે એક માણસનો જયજયકાર કરો છો, એ ભૂમિમાં 'ગુરુજી અમર રહો' એ મને માન્ય નથી. બધાએ ગુરુજીને વીનવ્યા કે 'ગુરુજી, અમારી ભૂલ થઈ ગઈ. આપ ચાલો.' બધાએ ભારતમાતાનો જયજયકાર કર્યો. ગુરુજી મંચ ઉપર આવ્યા. પૂજનીય ગુરુજી જીવનભર એક સ્વયંસેવક તરીકે જીવવા માગતા હતા. એમને પોતાનો જયજયકાર થાય એ સ્વીકાર્ય નહોતું. કોઈ એમની તસ્વીર ખેંચવા આવે તો ઇન્કાર કરી દેતા, એટલું જ નહીં, કોઈના ઘરમાં જાય અને ભૂલેચૂકે તેમનો ફોટો જુએ તો ઉતરાવી લેતા હતા. એ કહેતા હતા કે ડૉક્ટરસાહેબની તસ્વીર પ્રેરણા માટે પૂરતી છે. આ મહાપુરુષ જીવનના અંત સુધી આ ભાવને વળગી રહ્યા.

मैं नहीं तू ही :

એક વાર 'ધર્મયુગ'ના તંત્રીશ્રીએ હિન્દુસ્થાનના ગણમાન્ય લોકોને લખ્યું હતું કે તમારા જીવનનું ધ્યેય-વાક્ય લખી મોકલો. દેશના ઘણા ગણમાન્ય લોકોએ વાક્ય લખી મોકલ્યાં હતાં. કોઈએ બે પાનાં, કોઈએ પાંચ પાનાં લખ્યાં. જેવી જેમની શક્તિ, એ પ્રમાણે લખ્યું હતું. પ. પૂ. ગુરુજીએ અનેક વિનંતી છતાંય જવાબ નહોતો લખ્યો. આખરે એ સામયિકના તંત્રીએ પૂ. ગુરુજીનો રૂબરૂ સંપર્ક કર્યો, ખૂબ આગ્રહ કર્યો ત્યારે ગુરુજીએ ફક્ત ચાર જ શબ્દો લખ્યા હતા. પોતાના જીવનના ધ્યેયવાક્ય તરીકે એમણે લખ્યું હતું – 'मैं



(બેઠેલા - ડાબેથી) : (૩) શ્રી ગુરુજીના પિતાજી શ્રી ભાઉજી, (૪) માતાજી સૌ. તાઈજી, (૬) શ્રી ભૈયાજી દાણી, (૭) શ્રી ગુરુજી, (૮) શ્રી સત્યાનંદજી, (૧૦) શ્રી બાબાસાહેબ ઘટાટે તથા અન્ય...

नहीं तू ही.' 'હું નહીં, ફક્ત તું જ.' આ ફક્ત 'તું જ' કહેવું એ માત્ર શબ્દો નહોતા, એ એમના જીવનની શ્રદ્ધા હતી, તેમનો જીવનવ્યવહાર હતો. આ ચાર શબ્દોમાં શ્રી ગુરુજીનું સંપૂર્ણ જીવન સમાયેલું છે. આ 'તું' એટલે કોણ ? સંઘ, સમાજ, ઈશ્વર. તેઓ આ ત્રણેયને એકરૂપ કરીને ચાલતા. ત્રણેયની સેવામાં વિરોધ નહીં, વિસંગતિ નહીં. 'એક હિ સાધે સબ સધે' પ્રમાણે તેઓ સંઘની સાધના કરી સંપૂર્ણ સમાજ અને રાષ્ટ્રની સાધનામાં લાગેલા રહ્યા, અર્થાત્ એમનું જીવન જ સમાજ અને રાષ્ટ્રની સાધના બની ગયું હતું. અને એટલે જ જીવનના અંતકાળે ગુરુજીએ જે ત્રણ પત્રો લખ્યા હતા એ પૈકીના બીજા પત્રમાં એમણે લખ્યું હતું કે, 'સ્વયંસેવકોને મારો આદેશ છે કે મારા મૃત્યુ પછી મારું કોઈ સ્મારક બનાવવામાં ન આવે.' કેટલી હદે એ પ્રસિદ્ધિ-પરાઙ્મુખ હતા ! આ માતૃભૂમિના પુત્ર તરીકે એના કલ્યાણની જ વાત. કોણે કર્યું, કોણે નહીં એની ભેદરેખા ન જોઈએ. મેં કર્યું માટે મારું સ્મારક ન જોઈએ – આ પ્રકારનો સ્પષ્ટ વિચાર હતો. ન તો એમણે તસ્વીર ખેંચાવી, ન એમણે પોતાનો જયજયકાર સાંભળ્યો. 'मैं नहीं तू ही' કહેવાની એમની જીવનશ્રદ્ધા હતી. એ ઠાલા શબ્દો નહોતા, એ અખંડ સ્વયંસેવકનું એક સ્પષ્ટ સાકાર સ્વરૂપ હતું. પૂજનીય ગુરુજીને મન આ જીવનસાધના હતી. માતૃભૂમિ પ્રત્યેનો આવો સમર્પણભાવ સ્વયંસેવકમાં પણ જાગતો રહે એવી એમની આકાંક્ષા રહેતી. ગ્વાલિયરમાં મધ્યભારત પ્રાંતનો સંઘશિક્ષા-વર્ગ ચાલી રહ્યો હતો. વર્ગમાં પૂજનીય ગુરુજી બે દિવસ રહ્યા. એ વખતે કેટલાક સ્વયંસેવકો એમને 'રાષ્ટ્રીય સુરક્ષાના મોરચા પર' નામનું પુસ્તક ભેટ આપવા ગયા. આ પુસ્તકમાં ભારત-પાકિસ્તાન વચ્ચેના યુદ્ધ સમયે રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના સ્વયંસેવકોએ કરેલાં સેવાકાર્યોનો ઉલ્લેખ હતો. સ્વયંસેવકોએ પંજાબના મોરચે જે ત્યાગ અને બલિદાનની શૌર્યગાથા રચી હતી તેનું ટૂંકમાં વિવરણ એ પુસ્તિકામાં હતું. સ્વયંસેવકોને એમ હતું કે પૂજ્ય ગુરુજીને આ પુસ્તક જોઈને આનંદ થશે, અભિનંદન આપશે.

પરંતુ ભારતમાતાની સેવા, એની ભક્તિ પ. પૂ. ગુરુજીને મન પૂર્ણ સમર્પણભાવથી આલોકિત હતી. ગુરુજીએ પુસ્તક જોઈને આપેલી પ્રતિક્રિયા સાંભળી સ્વયંસેવકો દંગ રહી ગયા ! તેમણે કહ્યું, 'હું આવા પુસ્તકનો સ્વીકાર નહીં કરું.' કારણ, સંઘના સ્વયંસેવકોએ કરેલ સેવા, બલિદાન, ત્યાગનો આવી રીતનો પ્રચાર એમને મંજૂર નહોતો. પ. પૂ. ગુરુજીએ ધીરેથી સ્વયંસેવકોને કહ્યું, "ભાઈ, કોઈ પુત્ર પોતાની માની કરેલી સેવાના સમાચાર પ્રગટ કરે તો તેને

યોગ્ય ગણીશું ?' સ્વયંસેવકોએ ભારતમાતાની સેવામાં જે કંઈ કર્યું એ તો એનું સ્વાભાવિક કર્તવ્ય જ હતું. આથી એનો પ્રચાર કેવો ?''

સંઘના સ્વયંસેવક તરીકે જીવ્યા એનો જીવનભર એમને આનંદ હતો. સંઘના જીવનમાં પણ અનેક ઉતાર-ચઢાવ આવ્યા, ત્યારે પણ આ મહાપુરુષે ક્યારેય સંતુલન ગુમાવ્યું નહોતું, પોતાનું ધૈર્ય ગુમાવ્યું નહોતું.

માતૃભૂમિ સાથેનું તાદાત્મ્ય :

મહાત્મા ગાંધીજીની હત્યા પછી સંઘ ઉપર પ્રતિબંધ આવ્યો. તેમને જેલમાં બંધ કરવામાં આવ્યા. સંઘ નિર્દોષ પુરવાર થયો. ગુરુજી જેલમાંથી છૂટ્યા. સંપૂર્ણ માનવજાતને પ્રેમ કરવાની વાત કરનારા રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના આ સ્વયંસેવકનું દિલ્હીમાં જાહેર સન્માન હતું. ૪૦ વર્ષની ભરજુવાની હતી. લાખો સ્વયંસેવકો એમના શબ્દ ઉપર પોતાનું જીવન ન્યોછાવર કરવા કટિબદ્ધ હતા. દિલ્હીની જાહેરસભામાં લાખો કાન તેમને સાંભળવા માટે ઉત્સુક હતા. હિન્દુસ્થાનના અને વિશ્વના ગણમાન્ય પત્રકારો આ સભામાં ઉપસ્થિત હતા. તેઓ આતુર હતા કે આજે પ. પૂ. ગુરુજી શું આદેશ આપશે ? શું પંડિત નહેરુની સરકારને તોડી-ફોડી નાખવા આદેશ આપશે ? દેશની અંદર હિંસા ફેલાવવાનો આદેશ આપશે ? સાંભળવા માટે હિન્દુસ્થાન એકી-કાને તૈયાર બેઠું હતું. એ સમયે ૧૯ મહિનાનો કારાવાસ વેઠીને બહાર આવેલા આ મહામાનવે કહ્યું હતું, ''જે કાંઈ બની ગયું છે તેને ભૂલી જાઓ. જેમણે કર્યું છે તે સૌ આપણા જ છે. દાંત વચ્ચે જીભ આવી જાય અને જો જીભ કચરાઈ જાય તો આપણે દાંત તોડી નાખતા નથી, કારણ, દાંત પણ આપણા છે. ભૂલી જાઓ.'' તમે વિચાર કરો, ૪૦ વર્ષની ઉંમરે આવો સંતુલિત વ્યવહાર અને આટલા વિશાળ સંગઠનના નેતૃત્વ પાસે કેટલું સંયમિત જીવન હતું ! આવાં તો કેટકેટલાંય ઉદાહરણો છે. ૩૩ વર્ષનું અખંડિત તપસ્વી જીવન... આ માતૃભૂમિના કલ્યાણને માટે સ્વયંસેવક બની રહેવાની ખેવના અને એમની એ ખેવનાને પરિપૂર્ણ કરવા માટે પોતાની જાતને ઘસી નાખવાના અખંડ પ્રયાસ પ. પૂ. ગુરુજી કરતા રહ્યા. માતૃભૂમિ સાથેનું એમનું તાદાત્મ્ય અદ્‌ભુત હતું. જે દિવસે પૂ.ગુરુજીનું દિલ્હીમાં સન્માન થતું હતું, ચારે તરફ તેમનું ગૌરવગાન થતું હતું, ત્યારે સ્ટેજ ઉપર ગુરુજી બેઠા-બેઠા કંઈક લખી રહ્યા હતા. તેમને લખતા જોઈને લોકોને થતું હશે કે ગૌરવગાન થઈ રહ્યું છે તેમાંથી કોઈ મુદ્દા લઈને જવાબ આપવા નોંધ તૈયાર કરતા હશે. પણ સ્ટેજ ઉપરથી ગુરુજીનું ગૌરવગાન થતું હતું ત્યારે ગુરુજી એ સમગ્ર વાતાવરણથી અલિપ્ત હતા. એ કાગળ ઉપર 'વંદે માતરમ્' ગીત લખતા હતા. એમણે એ સમય દરમ્યાન આખું 'વંદે માતરમ્' ગીત લખી નાખ્યું હતું. 'વંદે માતરમ્' ગીત ગાનાર ગીતનાયકને પૂરક થાય માટે એ કાગળ તૈયાર હતો. ગીત આખું જ થવું જોઈએ એવો તેમનો આગ્રહ રહેતો.

અંતકાળ સુધી અખંડ પરિશ્રમ :

પ. પૂ. ગુરુજી જીવનના અંતકાળ સુધી અખંડ પરિશ્રમ કરતા રહ્યા. ૧૯૬૯માં કૅન્સરના વ્યાધિએ એમને ગ્રસી લીધા હતા. જીવન હવે અનિશ્ચિત બની ચૂક્યું હતું. મૃત્યુ નિશ્ચિત હતું. ફક્ત સમયનો સવાલ હતો. પરંતુ પ. પૂ. ગુરુજીએ ધૈર્ય ગુમાવ્યું ન હતું. સૂર્યનો ઉદય થતો હોય છે ત્યારે પણ રક્તવર્ણો હોય છે અને અસ્ત થતો હોય છે ત્યારે પણ રક્તવર્ણો હોય છે. સૂર્યને ઉદય અને અસ્તનો ન કોઈ શોક હોય છે, ન કોઈ હર્ષ હોય છે, તેમ પ. પૂ. ગુરુજીને ઉદયનો - અસ્તનો ન કોઈ હર્ષ હતો ન કોઈ શોક હતો. એ નિર્લેપ હતા.

શ્રી ગુરુજીને કૅન્સરની બીમારી છે એવું નક્કી થઈ જતાં ઑપરેશન કરાવવું જરૂરી હતું. કૅન્સરની સારવારમાં પ્રત્યેક પળનો વિલંબ મોતના મુખ તરફની ગતિને તેજ કરે છે એ વાત સુપરિચિત છે. શ્રી ગુરુજીનું ઑપરેશન તાકીદે કરવાની જરૂર હતી. સંઘના અધિકારીઓ, ડૉક્ટરો બધાએ નિર્ણય પણ કર્યો, પરંતુ ગુરુજીએ સ્પષ્ટ કહી દીધું, ઉનાળુ વૅકેશનમાં સંઘશિક્ષા-વર્ગમાં પ્રવાસ નક્કી થઈ ગયો છે. એ પ્રવાસ પૂર્ણ નહીં થાય ત્યાં સુધી ઑપરેશન કરાવવું ઉચિત નથી. પીડા અસહ્ય હતી. ભાવિ સંકટના સંકેત ધ્રુજાવી દે તેવા હતા. પણ ગુરુજીએ સંઘકાર્ય અને સ્વ-કાર્યમાંથી સંઘકાર્ય જ પસંદ કર્યું. લગભગ અઢી માસના નિરંતર પ્રવાસ-કાર્યક્રમો પૂરા ન થયા, દેશભરના ખૂણેખૂણે સ્વયંસેવકોને મળવાનું કામ પૂર્ણ ન થયું ત્યાં સુધી ઑપરેશન ન કરાવ્યું. બધા જ કાર્યક્રમ પૂર્ણ થયા પછી જ ઑપરેશન કરાવ્યું.

હૉસ્પિટલને પણ તેમણે સમાજભક્તિનું મંદિર બનાવી દીધી. ચાર કલાક લાંબા, ગંભીર ઑપરેશન બાદ તરત જ હૉસ્પિટલના અન્ય દર્દીઓનાં ખબર-અંતર પૂછવા નીકળી પડ્યા. ડૉક્ટરો માટે આ અજબ ઘટના હતી. દેહભાવથી મુક્ત કોઈ આધ્યાત્મિક આત્મા જ દેહથી પર થઈ સમાજનાં અન્ય બાંધવોની પીડામાં ભાગીદાર બની શકે. શ્રી ગુરુજીએ હૉસ્પિટલમાં મરણપથારીએ પણ સમાજભક્તિમાં કોઈ ઓટ આવવા ન દીધી.

શરીરના કણ-કણને, જીવનની ક્ષણ-ક્ષણને પૂ.ગુરુજીએ પવિત્ર-પુનિત માતૃભૂમિની સેવામાં સમર્પિત કરી દીધાં હતાં. એમણે આ નશ્વર દેહ અર્થે ભગવાન આગળ વધુ પ્રાર્થના પણ ન કરી. અહર્નિશ...નિરંતર માતૃભૂમિની સેવા-અર્ચના એ

જ એમનો જીવનમંત્ર બનેલો હતો. એમના જીવનકર્મની ઊંચાઈ જુઓ. જીવનના અંતિમ દિવસો હતા. એ દિવસોમાં કેરળના કોટ્ટાઈકલમાં ઉપચાર માટે ગુરુજી ગયેલા. ત્યાં તેલધારાસ્નાનની પ્રક્રિયા ચાલી રહી હતી. માધવ પરડકર નામના ડૉક્ટર એમની સેવામાં હતા. એક દિવસ ત્યાંના વૈદ્યજી આવ્યા. એમણે ધૂપદીપ પ્રગટાવ્યા, પ્રાર્થના કરી. એ પછી પૂ. ગુરુજીને કહ્યું, 'તમે પણ જલદી સાજા થઈ જાઓ એ માટે ભગવાનને પ્રાર્થના કરો.' ગુરુજી પ્રાર્થના માટે તૈયાર ન થયા, ચોખ્ખી ના પાડી દીધી અને કહ્યું : 'તમારે મારા સ્વાસ્થ્ય માટે જે કરવું હોય એ કરો, હું વચ્ચે નહીં આવું, પરંતુ મારા આ નશ્વર શરીર માટે ભગવાનને શું પ્રાર્થના કરવાની ? આ શરીર પાસે એ જેટલું કામ કરાવવા માગતા હશે, એટલું કરાવશે. અને એમને લાગશે કે હવે મારું કામ પૂર્ણ થઈ ગયું છે ત્યારે પાછો બોલાવી લેશે માત્ર મારા શરીરના લાભ માટે હું પ્રાર્થના નહીં કરું.'

પૂજનીય ગુરુજી પ્રત્યે શ્રદ્ધાભાવ ધરાવતા સહુ પોતાને સૂઝે તે રીતે તેમની પીડામાં સહભાગી થવા પ્રયાસ કરતા. કોઈ હવન-યજ્ઞ કરાવે, તો કોઈ પૂજા-પાઠ કરાવે. કોઈ મંત્રજાપ કરે, તો કોઈ અનુષ્ઠાન કરાવે. દરેકની પોતપોતાની શ્રદ્ધા હતી. પરંતુ મનમાં એક જ ભાવ હતો કે પૂ. ગુરુજી જલદી સ્વસ્થ થઈ જાય, તેમની પીડા ઓછી થાય.

આવા દિવસોમાં શ્રી ભાઉરાવજી દેવરસ અને શ્રી રજ્જુભૈયા અલાહાબાદ ગયા. ત્યાંના એક પ્રખર પંડિત પાસે અનુષ્ઠાન કરાવવાની ઇચ્છા હતી. પંડિતજીના દરવાજે પહોંચ્યા ત્યાં જ પંડિતજીએ સામેથી કહ્યું, "હું આપ મહાનુભાવોના આવવાનું પ્રયોજન જાણું છું. આપ એક સમર્થ વિદ્વાન, સમર્પિત સમાજસેવી મહાપુરુષ માટે અનુષ્ઠાન કરાવવા આવ્યા છો. પરંતુ ૭ જૂન પછી હું તેમનું જીવન જોતો નથી. તેઓ મહાત્મા છે. પુનર્જન્મ પણ નથી. મોક્ષના અધિકારી છે. પરમહંસ-અવસ્થા પામી ચૂક્યા છે."

શ્રી ગુરુજી દેહરૂપ નહીં, કર્મરૂપ હતા. એક પ્રકારે કાયા-માયાથી પર. તેમની બીમારીના દિવસોમાં પણ તેઓ આસપાસ પ્રસન્નતા પાથરતા રહેતા. જીવનની અંતક્ષણે પણ મળવા આવનાર વ્યક્તિ સાથે દેશ, સમાજ, સંઘની જ વાતચીત પ્રમુખ રહેતી.


આઝાદી બાદ સંઘ પરનો પ્રતિબંધ દૂર થતા
પ.પૂ. શ્રી ગુરુજીનું સ્વાગત...

૫ જૂન, ૧૯૭૩ની સવારે જ ડૉ. આબાજીને કહી દીધું, "ઘંટી બજ ગઈ હૈ..." મનમાં વિચાર આવે કે વિદાયની આ પળનો સંદેશો મળ્યા પછી "ઘંટી બજ ગઈ હૈ" એવું વાક્ય કેમ નીકળે ? આધ્યાત્મિક જીવનની ઊંચાઈ પછી જ આ સંભાવના છે. ઘંટી મંદિર અને મૂર્તિ સાથે જોડાયેલ છે. ઈશ્વરના ઘરે જવાનો સંકેત અને અલાહાબાદના પંડિતની વાત કે તેમનો મોક્ષ નિશ્ચિત છે તે બંને વાતનો અહીં સંયોગ જોવા મળે છે.



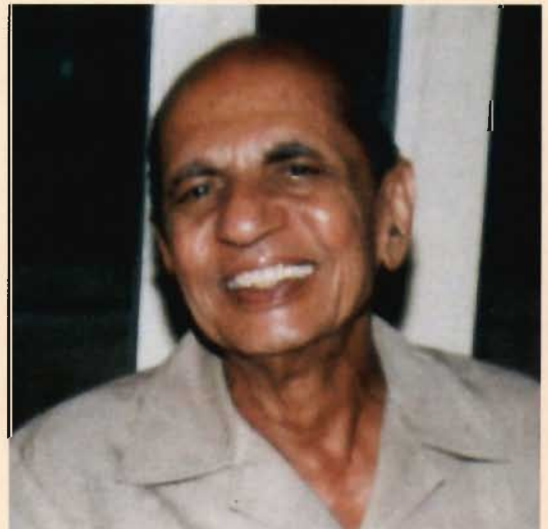
૨૦૦૬ પ. પૂ. ગુરુજીનું શતાબ્દીવર્ષ હમણાં જ વીત્યું. એક પરિવ્રાજકની અખંડ, એકનિષ્ઠ સાધનાની સુવાસ આજે પણ અનુભવાય છે. ગુરુજીના જીવનને પામવું કે જાણવું આપણી ક્ષમતા બહાર છે. આ તો એક નમ્ર પ્રયાસ છે, એ સુખદ પળોને માણવાનો. આ સુખદ પળો આપણા સહુની પળોને પુલકિત કરશે એવી અપાર શ્રદ્ધા છે.

• •

ले चलें हम राष्ट्र नौका को,
भंवर से पार कर



પારદર્શી પારસ – પપ્પાજી





ડૉ. પી. વી. દોશી

આર. એસ. એસ.ના પ્રથમ પ્રાંતસંઘચાલક તરીકે તેમણે ગુજરાતમાં સંઘકાર્યના વિસ્તાર અને વિકાસ માટે પોતાનાથી બનતું બધું જ કર્યું. તેમની હૂંફ, તેમનો સ્નેહ સહુને દોડતા રાખે. તેમની કાર્યશૈલીની એક વિશેષતા હતી. તેઓ કાર્યની પ્રગતિ કરતાં કાર્યકર્તાની ચિંતા વધુ કરે. તેઓ દૃઢપણે માનતા કે કાર્યકર્તાની ચિંતા કરો, કાર્યની ચિંતા કરવી જ નહીં પડે.

સ્વયં પ્રેરણા સે માતા કી સેવા કા વ્રત ધારા હૈ,
સત્ય સ્વયંસેવક બનને કા સતત પ્રયત્ન હમારા હૈ.





ડૉ. હેડગેવાર ભવન, રાજકોટ

ડૉ. પ્રાણલાલ વ્રજલાલ દોશી એ નામથી માનસપટલ પર કોઈ ખાસ ઓળખાણ ઊભી ન થાય. ડૉ. પી. વી. દોશી કહીએ તો ક્યાંક ઓળખનો અહેસાસ થાય. પરંતુ કાન પર ''પપ્પાજી'' શબ્દ પડે તો રાજકોટ જ નહીં, ગુજરાતના ખૂણે-ખૂણે એક મોટા વર્ગની આંખમાં ચમકારો અનુભવાય.

વિવિધતાઓથી સ-ભર વ્યક્તિત્વ અને છતાંય 'વ્યક્તિ' અનુભવાય જ નહીં, માત્ર તત્ત્વનો જ અહેસાસ થાય. હવાની લહેરખીનો સ્પર્શ કેવી તાજગી આપી જાય ! કંઈક એવું જ વ્યક્તિત્વ. નાનામોટા સહુનો એ જ અનુભવ.

મનમંદિરને ઢંઢોળ્યું કે પપ્પાજીનાં પ્રથમ દર્શન ક્યારે કર્યાં હતાં ? ખૂબ મથામણ કરી, પણ પ્રથમ મુલાકાત યાદ જ નથી આવતી. કદાચ તેનું કારણ વ્યક્તિને બદલે તત્ત્વરૂપ બની ગયેલ એ દેહની વિશેષતા જ હશે. હા... એટલું જરૂર લાગ્યા કરે છે કે જ્યારથી જોયા અને જ્યારે વિદાય આપી ત્યારે જોયા તે વચ્ચે દશકાઓ વીતી ગયા હતા. પરંતુ કોઈ ફર્ક જ નહીં. તનથી, મનથી, વાણીથી, વ્યવહારથી – સઘળી બાબતે સમ્યગ્ વ્યવહાર. બસ, એવા ને એવા જ. ઘટનાઓની ઘટમાળ હતી, પ્રશ્નોના પહાડો હતા. સંકટની છાયા આવી અને ગઈ. ક્યારેક વિચારની કસોટી તો ક્યારેક કાર્યની ગતિ, ક્યારેક કુદરતી તો ક્યારેક માનવીય આફતો. દરેક પ્રસંગે આ દૂબળા-પાતળા દેહે ઘટાટોપ વડલાની છાયાની અનુભૂતિ કરાવી, શીતળતા પણ બક્ષી અને વડલાની વિરાટતાનાં પણ દર્શન કરાવ્યાં.

પપ્પાજીએ સંઘના પાયાના કાર્યના વિકાસ અને વિસ્તાર માટે સ્વયંને નિત્ય શાખા સાથે અ-તૂટ રીતે બાંધી દીધા હતા. ૯૦ વર્ષની ઢળતી ઉંમરે પણ નિત્ય શાખા માટેની તેમની શ્રદ્ધા તેમના વ્યવહારમાં ઝળકતી હતી.

પપ્પાજી કલકત્તામાં દાંતના ડૉક્ટર બન્યા. કલકત્તાના જીવનમાં એક એવો ભદ્રવર્ગ, જેના ઉપર અંગ્રેજીયતનો પ્રભાવ આજે પણ છે. કલકત્તામાં યુવાની વિતાવી, અભ્યાસ કર્યો. ડૉક્ટર તરીકે રાજકોટ પરત આવી વ્યવસાયી જીવન આરંભ્યું. રાજકોટમાં પણ કલકત્તાની યુવાનીની છાયા ઝલકતી હતી. પશ્ચિમી રંગની છાંટ વરતાયા વગર ન રહે. સાંજની જિંદગીમાં ક્લબ કલ્ચર, બાજી-પત્તાંની જોડ અને સિગારેટના ગોટાઓથી જિંદગી હરીભરી રહેતી. સરદાર પટેલની જિંદગીમાં ડોકિયું કરીએ તો આવું જ કંઈક જોવા મળે. વકીલાતનો વ્યવસાય, બારમાં બેસવું, ક્લબમાં સાથીઓ સાથે પત્તાં રમવાં, સિગારેટના ગોટેગોટા વચ્ચે આઝાદીના દીવાનાઓની મજાક ઉડાવવી. મહાત્મા ગાંધી પ્રત્યે ક્યારેક મજાકભર્યાં ઉચ્ચારણો કરવાં. સરદાર પટેલના જીવનનો આ સ્વાભાવિક ક્રમ હતો. પરંતુ મહાત્મા ગાંધીના સ્પર્શ સાથે સરદાર પટેલે જીવન બદલી નાંખ્યું. આઝાદી માટે પોતાના 'સ્વ'ને હોમી દીધો. 'મહાત્મા ગાંધીનો શબ્દ આખરી શબ્દ' એવો સંકલ્પ જીવી બતાવ્યો. સરદાર પટેલના બારના મિત્રો માટે આ પરિવર્તન સુખદ આશ્ચર્ય હતું. ડૉ. દોશીસાહેબ પપ્પાજીના જીવનમાં પણ આવું જ પરિવર્તન ઊડીને આંખે વળગે છે. ક્લબ લાઈફ, કલકત્તાની પશ્ચિમી જિંદગીનો પ્રભાવ– આ સઘળા વચ્ચે રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘ - RSSનો સ્પર્શ પપ્પાજીના જીવનમાં અદ્ભુત પરિવર્તનનો નિમિત્ત બની રહ્યો. ડૉક્ટરસાહેબે સંઘના આદર્શોને અનુરૂપ પોતાના જીવનને જોતજોતામાં જ ઢાળી દીધું. સંઘવિચાર, સંઘસંસ્કાર, સંઘકાર્યને અનુરૂપ 'સ્વ'ને ઘડવા માટે પોતે અવિરત હોમાતા રહ્યા. એ યુગમાં ડૉક્ટરની પ્રતિષ્ઠા સમાજજીવનની સર્વોપરિતા તરીકે સ્વીકારાયેલ હતી. આવા યુગમાં તે પ્રતિષ્ઠાથી દૂર, 'સ્વ' દ્વારા સ્વયંસેવકની પ્રતિષ્ઠા પ્રસ્થાપિત કરવા તેઓ સાચા અર્થમાં સમર્પિત સ્વયંસેવક બની રહ્યા. આ ક્રમ જીવનપર્યંત ચાલ્યો.

એકવડા બાંધા કરતાં પણ અડધું દૂબળું-પાતળું શરીર. અલ્પભાષી, મિતભાષી, દૂબળો-પાતળો દેહરૂપી સંઘ પળેપળ અનુભવાય. ડૉક્ટરસાહેબને – પપ્પાજીને મળ્યા પછી સંઘના કોઈ પણ સ્વરૂપની અલગ વ્યાખ્યા ન કરવી પડે. જાણે જીવન જ સંઘરૂપ. વ્યક્તિની છાયા પણ નહીં કે વ્યક્તિત્વની આભા પણ નહીં. ન કોઈ આડંબર, ન કોઈ ઝાકઝમાળ. વાણી પણ અદ્ભુત ! આખે-આખી વાત થઈ જાય, પણ શબ્દો, અક્ષરો કે ભાષાના શૃંગારનું નામોનિશાન ન હોય. એમ કહો કે વાતચીતમાં ભાષા જ ગાયબ હોય. એમ માનવું પડે કે વાત યાદ રહી જાય, પણ વેણ યાદ ન આવે. પપ્પાજીના સાંનિધ્યમાં હોઈએ ત્યારે શબ્દહીન વાણી, વ્યક્તિત્વહીન અસ્તિત્વ અનુભવાય. સંસ્કારનો સ્પર્શ હોય, દૃઢ મનોબળ હોય, આશા અને વિશ્વાસનાં ઘોડાપૂર હોય, માયાવિહીન મમતાનો પ્રવાહ હોય, સંકટો અને કંટકોની છાયા વચ્ચે ફૂલગુલાબી અહેસાસ હોય, ૯૦ વર્ષ વટાવ્યાં પછી પણ એવી ને એવી તાજગી હોય, ડૉક્ટર તરીકેની પ્રતિષ્ઠાભરી અને મોભાવાળી જિંદગી પાથરણાં પાથરી રહી હોય તેવી વેળાએ આદર્શો અને સિદ્ધાંતો માટે જુવાની જેલમાં વિતાવી, વિજય મેળવીને જંપનાર પપ્પાજીના કોમળ દેહમાં બિરાજતા મક્કમ મનની અનુભૂતિ થયા વગર ન રહે.

શ્રીમતી ઇંદિરા ગાંધીએ પોતાનું વડાપ્રધાનપદ બચાવી રાખવા માટે દેશમાં કૃત્રિમ કટોકટી થોપી દીધી હતી, લોકતંત્રને ગળે ટૂંપો દીધો હતો. અખબારી સ્વાતંત્ર્ય ઉપર

જીવલેણ હુમલો કર્યો હતો. દેશને જેલખાનું બનાવી દીધું. લોકશાહીની વાત કરવી એ ગુનો બની ગયું હતું. દેશના સર્વમાન્ય નેતાઓને જેલમાં ગોંધી રાખવામાં આવ્યા હતા. પ્રજા સદંતર અંધકારમાં જીવવા મજબૂર બની હતી. 'મિસા'ના કાળા કાયદાનો કેર દેશના કરોડો નાગરિકોને ધ્રુજાવી રહ્યો હતો. એવા સમયે પપ્પાજીએ લોકશાહીની પુનઃસ્થાપના માટે જંગ આદર્યો. કટોકટી-કાળમાં જેલમાં ગયા. ઉંમર, પ્રતિષ્ઠા અને તબિયત જોતાં બધા જ સાથીઓ તેમને પેરોલ ઉપર ઘરે જવા વીનવતા, પરંતુ તેમનું મક્કમ મન ક્યારેય આ પ્રસ્તાવ સ્વીકારવા તૈયાર ન થયું. તેઓ સદા કહેતા, 'વિજયશ્રી પ્રાપ્ત કર્યા વગર જેલની બહાર જવા માટે કોઈ પ્રયાસ નહીં કરું. લોકશાહી માટે સંઘર્ષ કરતા સાથીઓને જેલમાં એકલા છોડી બહાર જવાનું અનૈતિક પગલું હું ન લઈ શકું.' અને તેઓ અંતિમ વિજય સુધી જેલમાં રહી નૈતિકતાના આધારે લડતા જ રહ્યા.

આર. એસ. એસ.ના પ્રથમ પ્રાંતસંઘચાલક તરીકે તેમણે ગુજરાતમાં સંઘકાર્યના વિસ્તાર અને વિકાસ માટે પોતાનાથી બનતું બધું જ કર્યું. તેમની હૂંફ, તેમનો સ્નેહ સહુને દોડતા રાખે. તેમની કાર્યશૈલીની એક વિશેષતા હતી. તેઓ કાર્યની પ્રગતિ કરતાં કાર્યકર્તાની ચિંતા વધુ કરે. તેઓ દઢપણે માનતા કે કાર્યકર્તાની ચિંતા કરો, કાર્યની ચિંતા કરવી જ નહીં પડે.

પપ્પાજીએ સંઘના પાયાના કાર્યના વિકાસ અને વિસ્તાર માટે સ્વયંને નિત્ય શાખા સાથે અ-તૂટ રીતે બાંધી દીધા હતા.



૯૦ વર્ષની ઢળતી ઉંમરે પણ નિત્ય શાખા માટેની તેમની શ્રદ્ધા તેમના વ્યવહારમાં ઝળકતી હતી. તેમના શાખા માટેના આગ્રહી આચરણની અસર સમગ્ર ગુજરાત ઉપર વરતાતી રહી. શાખા - કાર્ય માટેની આટલી પ્રતિબદ્ધતા છતાં ગુજરાતના વનવાસી વિસ્તારમાં વિકાસ થાય, વનવાસીઓનું કલ્યાણ થાય તે માટે તેમની લાગણી અદ્ભુત હતી. ગુજરાતમાં ૧૫ ટકા જેટલા લોકો જંગલોમાં જીવતા હોય, આઝાદીના ચાર-પાંચ દાયકા પછી પણ વનબંધુઓ વિકાસની પ્રક્રિયાથી વંચિત હોય તે વાત તેમને મન પીડાકારક હતી. વનવાસીઓના સર્વાંગીણ વિકાસની દિશામાં કશુંક કરી છૂટવાની તેમની નેમ હતી.

૭૫ વર્ષની ઉંમરે છેક રાજકોટથી બસમાં આખી રાત પ્રવાસ કરી વલસાડ જિલ્લાના ધરમપુર પહોંચતા. ત્યાંનાં જંગલોમાં દર મહિને પહોંચવું, વનવાસીઓ વચ્ચે રહેવું, તેમની સમસ્યાઓ સમજવી, તેમની શક્તિ જગાવી સમસ્યાઓથી મુક્તિ મેળવવા આયોજન કરવું, વ્યવસ્થા ઊભી કરવી, તેના માટે તે ખૂંપી જતા. ઝીણામાં ઝીણી બાબતોની કાળજી લે. અનેક વનવાસી પરિવારોને પોતાનો પરિવાર બનાવ્યા. રાજકોટના દાંતના ડૉક્ટર દેહ છોડે અને ઉમરગામથી અંબાજી સુધી પથરાયેલી આદિવાસી પટ્ટી ચોધાર આંસુએ રડે તેનાથી મોટી જિંદગીની ઊંચાઈ કઈ હોઈ શકે ?

પપ્પાજીના જીવનમાંથી એક બાબત સતત ધારાપ્રવાહ-રૂપે પ્રગટતી જોવા મળે, અને એ પ્રવાહ એટલે કરુણા અને કર્તવ્યનો વિરલ સંગમ. રાજકોટના જીવનની નોંધ લઈએ તો બહેરા-મૂંગા શાળાની નોંધ લેવી જ પડે, અને બહેરા-મૂંગાની શાળા વિશે વિચાર કરતાં જ સંસ્થારૂપ જીવન એટલે પપ્પાજીની કરુણા અને કર્તવ્યની ધારાનો સ્પર્શ અનુભવાય. પપ્પાજીની દીકરીને ઈશ્વરે શારીરિક ઊણપ આપી. વ્યક્તિગત કે પારિવારિક જીવનની આ ઊણપને સમાજ સાથે જોડી, સમાજનાં આવાં બધાં બાળકોને પોતાનાં ગણી, પોતાની દીકરીને જે મળે તે સહુને મળે એવો કરુણાનો વિસ્તાર કરનાર પપ્પાજી જેવા કરુણામૂર્તિ જવલ્લે જ જોવા મળે. રાજકોટની આ બહેરા-મૂંગા શાળા પપ્પાજીમાં પ્રગટ થતી કરુણાનું જીવતું-જાગતું સ્મારક જ છે.

આ બહેરા-મૂંગા શાળા માટેની પપ્પાજીની મમતા, આ પ્રવૃત્તિ માટેની લાગણી ગજબ હતી. ક્યારેક એવું લાગે કે પપ્પાજીને પરિવારજનો કરતાં આ શાળાની માયા વધુ હતી.

વિકલાંગ તરફ જોવાનો પપ્પાજીનો દૃષ્ટિકોણ સંઘ-સંસ્કારનું વ્યાવહારિક રૂપ લાગે. આપણા સમાજમાં વિકલાંગ માટે ભાવ કેવો હોવો જોઈએ ? કોઈ પરિવારમાં એકાદ



વિકલાંગ હોય તો માત્ર તે પરિવારની જવાબદારી નથી. આ આફત એ કુટુંબે જ નિભાવવી પડે, એ કોઈ સ્વસ્થ સમાજનું લક્ષણ નથી. સ્વસ્થ સમાજ તો તેને જ કહેવાય કે જે શારીરિક ઊણપવાળા નાગરિકોને ઈશ્વરે આપેલી ખોટને સમાજ પોતાની ખોટ સમજે, અને એ ખોટ પૂરવાની જવાબદારી જે-તે પરિવારે નહીં, સમગ્ર સમાજે સામૂહિક રીતે પાર પાડવી જોઈએ.

સ્વસ્થ સમાજ પરિવાર-ભાવથી વિકલાંગની જવાબદારી ઉઠાવે તો વિકલાંગ વ્યક્તિ, તેનાં પરિવારજનો અને સમાજ – બધાં જ હળવાંફૂલ થઈ જાય. વિકલાંગ પ્રત્યે દયાભાવથી નહીં, કરુણાના ભાવથી નહીં, પરંતુ કર્તવ્યભાવથી જોવું જોઈએ. માત્ર સહાનુભૂતિ નહીં, સંવેદના જોઈએ. સમ્-વેદનાની અનુભૂતિ થાય, જે વેદના વિકલાંગ અનુભવે તેવી જ વેદના સમાજ પણ અનુભવે, જે ભાવવિશ્વ મારું છે એ જ ભાવવિશ્વ વિકલાંગનું પણ છે, તેના ભાવવિશ્વનો આદર થાય, એના ભાવવિશ્વનો સત્કાર થાય, એના ભાવવિશ્વનું સિંચન થાય અને જો એમ કરવામાં સમાજ ઊણો ઊતરે તો સમાજ પોતે જ વિકલાંગ છે એમ માનવું પડે.

શરીરમાં દેખાતી અંગ-ઉપાંગોની ઊણપને વિકલાંગ માનવાની ભૂલ ન કરી શકાય. વિકલાંગની સ્થિતિ-પરિસ્થિતિનો પ્રતિસાદ મારા ભીતર ન પડતો હોય તો હાથ, પગ, આંખ, કાન, નાક – બધું સક્ષમ હોવા છતાંય હું વિકલાંગ છું એમ જ માનવું પડે. પ્રત્યેક વ્યક્તિએ પોતાની જાતનું પરીક્ષણ કરવું જોઈએ કે હું પોતે તો અંદરથી વિકલાંગ નથી ને ?

પપ્પાજીએ પોતાનાં અંતર-મનનો વ્યાપક વિસ્તાર કર્યો હતો. પરિણામે જ બહેરા-મૂંગા શાળા એમના માટે મંદિર કરતાં પણ વધારે મહત્ત્વની હતી. પપ્પાજીના પારસરૂપ વ્યક્તિત્વનો સીધો પ્રભાવ બહેરા-મૂંગા શાળામાં જોવા મળે. પપ્પાજીની સાધનાની છાયાને કારણે આ બહેરા-મૂંગા શાળામાં કાર્ય કરી રહેલ હરકોઈ જાણે સાધકરૂપ લાગે. તેનું કારણ પપ્પાજીનું પારસરૂપ વ્યક્તિત્વ.

આપણા દેશમાં સ્વસ્થ બાળક અને વિકલાંગ બાળક બંનેને પરીક્ષામાં પાસ થવા માટે સમાન ૩૫ ગુણ અનિવાર્ય હતા. સ્વસ્થ બાળક અને વિકલાંગ બાળકની તુલના જ કેવી રીતે થઈ શકે ? કોઈ પણ કામ કરવા માટે સ્વસ્થ બાળક કરતાં વિકલાંગ બાળકને અનેકગણી વધુ જહેમત કરવી પડે, સમય પણ વધુ જાય. વિકલાંગની આ વ્યથાને ક્યારેય કોઈએ દાદ ન આપી. સમગ્ર ભારતમાં ગુજરાતની ભાજપ સરકારે મહત્ત્વપૂર્ણ પહેલ કરી, સ્વસ્થ બાળકને પાસ થવા ૩૫ ગુણ જોઈએ, તો વિકલાંગ બાળક માટે માત્ર ૨૦ ગુણ પૂરતા છે, તેવો વ્યવહારુ નિર્ણય કર્યો. આ નિર્ણયનો પપ્પાજીને જે આનંદ થયો હતો તે અવર્ણનીય છે.

દૂબળા-પાતળા દેહમાં મક્કમ મન સહુની શક્તિ બની રહ્યું. મહેકની જેમ ચોતરફ પ્રસરેલું જીવન આજેય મઘમઘી રહ્યું છે. કડકડતી ટાઢમાં સૂર્યનું કિરણ વહાલું લાગે, એમ પપ્પાજીનું અસ્તિત્વ હૂંફ આપતું. ઘોર અંધકારમાં ટમટમતા તારલા જેવું જીવન દીવાદાંડી બની રહેતું.



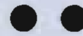
રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘ મુખ્યત્વે સંસ્કાર-પ્રવૃત્તિ છે. પપ્પાજીને મન સંસ્કારની સાથે શિક્ષણને પણ પ્રાથમિકતા મળે તેવી લાગણી હંમેશાં રહેતી. ભારતના ખૂણે- ખૂણે સ્વયંસેવકો દ્વારા વ્યાપક પ્રમાણમાં શૈક્ષણિક પ્રવૃત્તિઓ વિસ્તરેલી છે. પરંતુ ગુજરાતમાં તે દિશામાં પ્રયાસ ઓછા થયા હતા. પપ્પાજીએ વનવાસી કલ્યાણના કાર્યની જેમ

ગુજરાતમાં શિક્ષણ અને સંસ્કારની સરિતા વહે તે માટે બીડું ઉઠાવ્યું. આ કાર્ય માટેની તેમની ધગશ યુવાનોને પણ શરમાવે તેવી હતી. સંઘ-પરિવારમાં શિક્ષણમાં રુચિ ધરાવનાર એક પણ વ્યક્તિ એવી નહીં હોય જેની સાથે પપ્પાજીએ શિક્ષણના વ્યાપ બાબતે ચર્ચા નહીં કરી હોય કે યોજના નહીં વિચારી હોય. અનેક મણકા શોધી-શોધી, એકત્ર કરી, તેમાંથી શિક્ષણપ્રેમીઓની એક માળા ગૂંથવાનો તેમણે સફળ પ્રયાસ કર્યો. સંસ્કાર અને શિક્ષણને વરેલી અનેક શિક્ષણસંસ્થાઓએ જોતજોતામાં આકાર લીધો. ખૂબ જ ટૂંકા ગાળામાં આટલું વિશાળ કાર્ય ઊભું કરવામાં તેમનો ફાળો નાનોસૂનો નહોતો.

વ્યક્તિના જીવનમાં ઉત્સાહ હોય, ઉમંગ હોય, જોગ-સંજોગ હોય, અનુકૂળતા-પ્રતિકૂળતા હોય એ બાબતો સ્વાભાવિક છે. ઘણું કરીને વ્યક્તિના મનગમતા કાર્ય ઉપર પણ તેની સારી-નરસી અસર પડતી જ હોય. અનુકૂળ સ્થિતિમાં ઉમંગ અને પ્રતિકૂળ સ્થિતિમાં ઉદાસીનતા સહજ હોય છે. બહુ ઓછા વિરલા હોય છે, જેમના માટે દરેક સ્થિતિ-પરિસ્થિતિ તરફ સમ્યગ્-ભાવે જોવાના ગુણ હોય છે. પપ્પાજીના જીવનમાં આ વિરલ વ્યક્તિત્વનાં દર્શન થયા વગર ન રહે. લગભગ છ દાયકા સુધી અખંડ, એકનિષ્ઠ, ધ્યેયવાદી જીવન જીવવું, ધ્યેયને અનુરૂપ કાર્યમાં ગળાડૂબ રહેવું અને કાર્યને અનુરૂપ જીવનની નિત્ય-નવી ઊંચાઈઓને પામવાનો અણથક પ્રયાસ કરતા રહેવું એ બાબત એક અનોખી ભાત પાડે છે. સતત પ્રવૃત્તિશીલ વ્યક્તિઓ મળી આવે. પરંતુ એક જ પ્રવૃત્તિ એ જ વૃત્તિથી સાતત્યપૂર્ણ રીતે સતત કરનાર તો જવલ્લે જ મળી આવે. પપ્પાજીનું જીવન આ અર્થમાં ઘણું જ મહત્ત્વનું હતું.

તત્ત્વનિષ્ઠ જીવન સંકટોને કેવી રીતે પાર કરી જાણે છે તે પપ્પાજીના જીવનમાં તરી આવે છે. આફત માનવ-સર્જિત હોય કે આફત કુદરતની અવકૃપાથી હોય, પપ્પાજી દરેક બાબતને ઈશ્વર સારા માટે કરે છે, એવા ભાવથી સ્વીકારી, પુરુષાર્થની પરાકાષ્ઠા કરવાના પક્ષકાર રહેતા. મોરબીમાં મચ્છુની ભયંકર હોનારત હોય કે કચ્છનો ભૂકંપ હોય, કારમો દુષ્કાળ હોય કે વાવાઝોડાનો પ્રકોપ - સંઘની પૂરી શક્તિ માનવતાના કામમાં જરાય પાછી પાની ન કરે તેની ચિંતા તેઓ સતત કરતા.

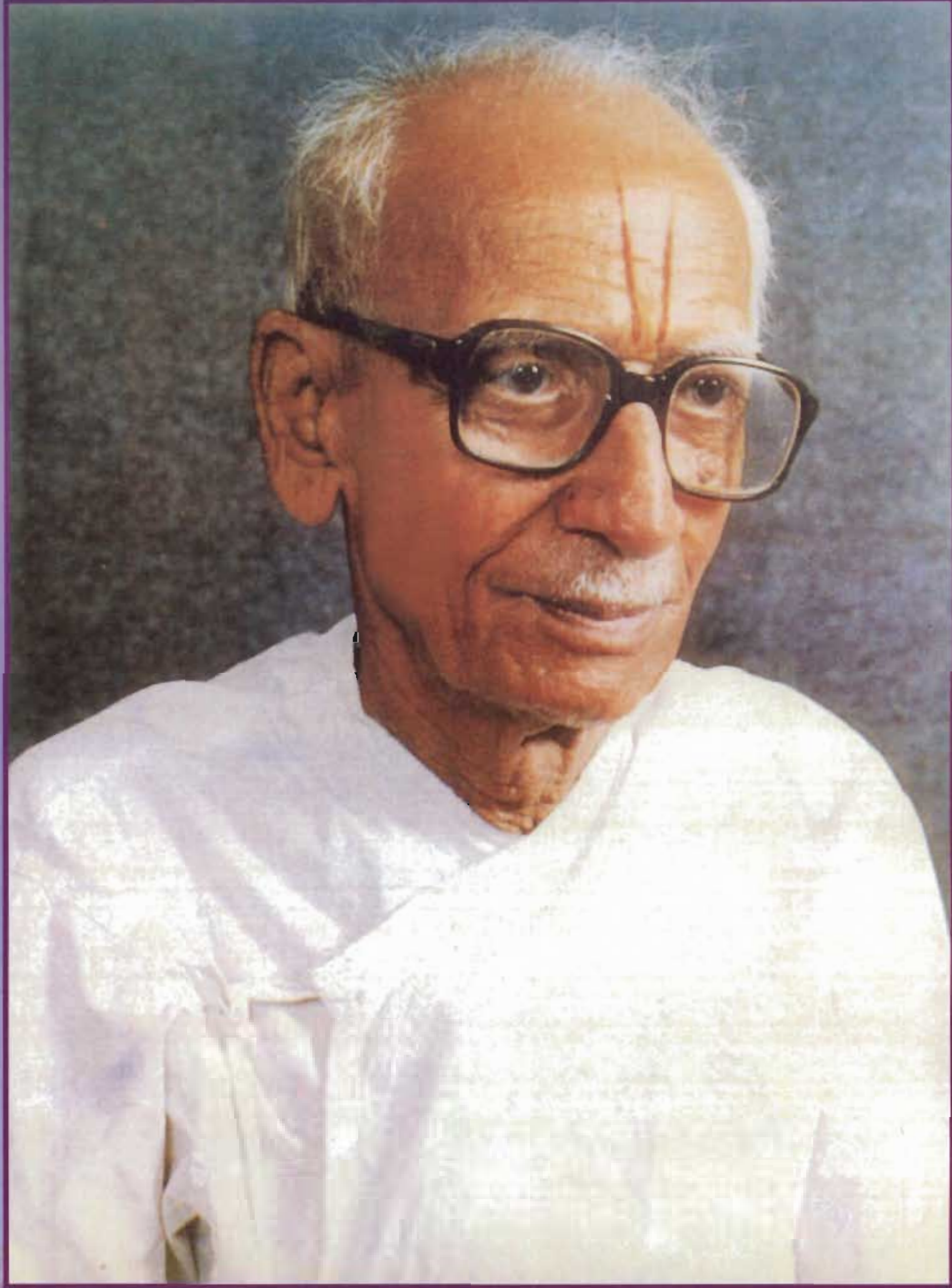
દૂબળા-પાતળા દેહમાં મક્કમ મન સહુની શક્તિ બની રહ્યું. મહેકની જેમ ચોતરફ પ્રસરેલું જીવન આજેય મઘમઘી રહ્યું છે. કડકડતી ટાઢમાં સૂર્યનું કિરણ વહાલું લાગે, એમ પપ્પાજીનું અસ્તિત્વ હૂંફ આપતું. ઘોર અંધકારમાં ટમટમતા તારલા જેવું જીવન દીવાદાંડી બની રહેતું. પારદર્શક જીવનનું બીજું નામ એટલે પપ્પાજી. તેમનો સ્પર્શ પારસ જેવો હતો. સ્પર્શ-માત્રથી જીવન-ઘડતરની પ્રક્રિયા તેજ થઈ જતી. પારદર્શી પારસ એવા પપ્પાજીને શત-શત નમન...





યુગઋષિ - શતાયુ શાસ્ત્રીજી





પ. પૂ. કેશવરામ કા. શાસ્ત્રીજી

પૂ. શાસ્ત્રીજી આપણી મહાન
વિરાસતના એક ગૌરવભર્યા ઇતિહાસનું
સ્વર્ણિમ પૃષ્ઠ બની રહ્યા. વેદ-સંસ્કૃતિના અધ્યયનને જેમણે
જીવનનો હિસ્સો બનાવ્યું હતું, ગીતાના કર્મના સિદ્ધાંતને જેમણે
આત્મસાત્ કરીને આવનારી એકાદ નહીં પણ
અગણિત પેઢીઓ માટેનું સંસ્કારમય
ભાથું તૈયાર કર્યું.

દીનોં સે ઉનકો આહ નહીં, ધનવાનોં સે કુછ મોહ નહીં.
જૈસે ઉનકો પ્રિય રાજમહલ, વૈસે હી હૈ તૃણ કે કુટિર.







પદ્મશ્રી ઍવોર્ડ સાથે શ્રી શાસ્ત્રીજી



શાસ્ત્રીજીના પ્રિય પ્રભુજી...

કે. કા. શાસ્ત્રીજી...

જ્ઞાનના તપધારી...

સંસ્કૃતિના ઋષિ...

ધર્મના ચિંતક...

અસ્મિતાના પ્રહરી...

પૂ. શાસ્ત્રીજી આપણી મહાન વિરાસતના એક ગૌરવભર્યા ઇતિહાસનું સ્વર્ણિમ પૃષ્ઠ બની રહ્યા. વેદ-સંસ્કૃતિના અધ્યયનને જેમણે જીવનનો હિસ્સો બનાવ્યું હતું, ગીતાના કર્મના સિદ્ધાંતને જેમણે આત્મસાત્ કરીને આવનારી એકાદ નહીં પણ અગણિત પેઢીઓ માટેનું સંસ્કારમય ભાથું તૈયાર કર્યું – તેવા આ સંસ્કાર-પુરુષની સાથે મારે પિતા-પુત્રનો સ્નેહભર્યો – લાગણીસભર સંબંધ હતો.



શાસ્ત્રીજી જ્ઞાની હતા, વિજ્ઞાની પણ, ભાષાના વિજ્ઞાની. જેમ એક વિજ્ઞાની એક વિષય, એક લક્ષ્યાંક લઈને કંઈક નવું સિદ્ધ કરવા, કંઈક નવો આવિષ્કાર કરવા, કંઈક નવી શોધખોળમાં પડ્યો રહે અને પોતાનાં જ્ઞાન-વિજ્ઞાનથી દુનિયાને સમૃદ્ધ બનાવતો હોય છે તેમ શાસ્ત્રીજીનું હતું. તેઓ ભાષાના વિજ્ઞાની હતા. ગુજરાતી તો અમાપ અને સમૃદ્ધ ભાષાની ખાણ છે તે તેમણે જગતને દેખાડ્યું. એક 'ખાણિયો' ઊંડેઊંડે ખાણમાં ઊતરે ને 'પથ્થર'ની પાછળ રહેલો હીરો શોધી કાઢે તેવું શાસ્ત્રીજીનું હતું. ખૂબ ઊંડું, ખૂબ ઉપયોગી અને ભાષાને સમૃદ્ધ – તાકતવર બનાવે તેવું તેમનું સંશોધન રહ્યું છે. આથી તો તેઓ ભાષાવિજ્ઞાનની જીવતી-જાગતી યુનિવર્સિટી –વિદ્યાવાચસ્પતિ ગણાતા.

મૂર્તિકાર મૂર્તિનું નિર્માણ કરે ત્યારે મૂર્તિ કોના હાથમાં પડશે તેના આધારે મૂર્તિના ભાગ્યનું નિર્માણ થાય છે. કોઈના ડ્રૉઈંગરૂમમાં પહોંચી જાય તો ડ્રૉઈંગરૂમનું સુશોભન બની જાય. કાપડના વેપારી પાસે પહોંચી જાય તો નવાનવા ડ્રેસ પહેરીને મૂર્તિ ઊભેલી હોય છે. અને મૂર્તિ કોઈ સિદ્ધપુરુષના હાથમાં આવી જાય અને તેની પ્રાણપ્રતિષ્ઠા થાય તો ઈશ્વર બનીને પૂજાતી હોય, અને સ્થિતિ એવી થાય કે જેણે મૂર્તિ બનાવી હોય એ મૂર્તિકાર પણ એની મૂર્તિને સાષ્ટાંગ દંડવત્ પ્રણામ કરતો હોય.

દરેક અક્ષર મંત્ર :

અક્ષરો, કક્કો, બારાક્ષરી આપણે બધા ભણ્યા છીએ, શબ્દ અને શબ્દનો અર્થ, એની જોડણી પણ શીખ્યા છીએ, પરંતુ શાસ્ત્રીજીનો દરેક અક્ષર મંત્ર બની ગયો, અક્ષરની પ્રાણપ્રતિષ્ઠા થઈ. તપશ્ચર્યા વળી સ્વભાવ હોય છે. સરસ્વતીની ઉપાસના કર્યા વિના અક્ષરને મંત્ર બનાવવાની શક્તિ પ્રાપ્ત થતી નથી. શાસ્ત્રીજીમાં અક્ષરને મંત્ર બનાવવાનું સામર્થ્ય હતું. શાસ્ત્રીજી આ યુગની એક અણમોલ અમાનત છે.

મને સ્મરણ છે કે શાસ્ત્રીજી પહેલી વખત અમેરિકા ગયા હતા. શાસ્ત્રીજી અમેરિકાથી પાછા આવ્યા ત્યારે હું મળવા ગયો હતો. સામાન્ય રીતે મારો ટૅક્સ હોય છે કે કાયમ વર્ષોથી શાસ્ત્રીજી પાસે જવાનું, સરસ મજાના લાડુ ખાવા. અમેરિકા જઈ આવ્યા એટલે હું પહોંચી ગયો ત્યારે મેં પૂછ્યું, ''કેમ રહ્યું ? કેવું રહ્યું ?'' ત્યારે મને કહ્યું, ''નરેન્દ્રભાઈ ! ૧૫ હજારની ચોપડી ખરીદી લાવ્યો.''

તેમને રસ હતો અમેરિકાના ઈન્ડિયન એટલે કે જેને આપણે સામાન્ય બોલીમાં 'રેડ ઈન્ડિયન' કહીએ છીએ તે ત્યાંના મૂળ રહીશો વિશે અભ્યાસ કરવાનો. અમેરિકા ગયા પછી અમેરિકાના ઈન્ડિયનને, હિન્દુસ્થાનીને મળીને એમનાં

રીત-રિવાજો, એમની પદ્ધતિ, એમની પરંપરા, એમનાં શિલ્પ-સાહિત્ય, એમની કલાકૃતિમાં હિન્દુસ્થાન કેવું નજરે પડે તે જાણવાની ઉત્કંઠા હતી. આ એક જ વિષયે ૧૫ હજારની ચોપડીઓનો ઢગલો લઈને આવી ગયા. એમનું સંશોધનકાર્ય, જ્ઞાનના નિરુપમ સંગ્રહને જેટલો પોતાનામાં સમાવી શકાય એટલો સમાવવાની કોશિશ કરતા, ડૂબકી મારતા જતા.

જ્ઞાનશક્તિનો સાક્ષાત્કાર :

મુલાકાત દરમ્યાન અમેરિકાના પ્રવાસનાં સંસ્મરણો વાગોળ્યાં. આગળ કઈ ભાષાનાં કયાં ઉચ્ચારણોમાં, કઈ પ્રક્રિયામાં ભારતીય સંસ્કૃતિના અવશેષો દેખાય છે, એનું સંશોધન કરીને આવેલા.

મેં કહ્યું કે "તમે અમેરિકા જોવા ગયા હતા કે અમેરિકામાં ઈન્ડિયા જોવા ગયા હતા ?"

એ કહે કે "મને અમેરિકામાં ઈન્ડિયા જ દેખાતું હતું. ત્યાં ભારતીય સંસ્કૃતિનો પ્રભાવ એ યુગમાં કેવો હતો, એનાં જ દર્શન કરીને આવ્યો છું."

એમની અહીંની સંસ્કૃતિ પ્રત્યેની અપાર શ્રદ્ધા કેટલી બધી ! કોઈ યજ્ઞ ચાલતો હોય, કોઈ વિધિ થતી હોય અને કોઈ સ્વાહા-સ્વાહા બોલતું હોય તો એમણે શોધી કાઢ્યું કે, આ સ્વાહા-સ્વાહા કેવી રીતે બોલે છે ? એનું મૂળ કારણ કયું હશે ? રેસિડેન્સિયલ લાઈફ કેવી રીતે પરિવર્તિત થઈ હશે ? આ બધું કરીને પાછા આવ્યા. એનો અર્થ એ થયો કે – આ દેશની મહાન પરંપરા, સંસ્કૃતિ એના પ્રત્યેનો લગાવ કેટલો બધો હતો !

હમણાં-હમણાં ચર્ચા થાય છે કે દુનિયામાં જ્ઞાનની તાકાત હોય છે. જ્ઞાનની શક્તિનો સાક્ષાત્કાર અગર કોઈએ કર્યો હોય તો મને લાગે છે કે પૂ. શાસ્ત્રીજીએ કર્યો છે.



ઈશ્વરનો સાક્ષાત્કાર કરવાવાળા કેટલાય લોકો હશે. સવાર-સાંજ જાતજાતનાં પૂજા-અર્ચના અને અનુષ્ઠાન કરતાં હશે. જ્ઞાનને ઈશ્વર માનીને એનો સાક્ષાત્કાર કરવાની સાધના અને તે પણ જીવનનાં કેટલાં બધાં વર્ષો સુધી, તોય પાછી બીજી કોઈ અપેક્ષા જ નહીં.

જીવતીજાગતી યુનિવર્સિટી :

એક ઉમંગભર્યું જીવન, એક સમર્પિત જીવન. માત્ર એમની સાહિત્ય-રચનાઓથી શાસ્ત્રીજીની તુલના કરીશું તો આ એક મહાન જીવન સાથે અન્યાય કરીશું, એક વ્યક્તિત્વને ઓળખવાની ભૂલ થશે. પુસ્તકો બધાં બાજુમાં મૂકી દઈએ તોપણ આવનારી અનેક પેઢીઓએ જાણવા-સમજવા જેવું આ વ્યક્તિત્વ હતું. ગુજરાતમાં લબ્ધપ્રતિષ્ઠ લેખકોની મધ્યમાં તેઓ અવિસ્મરણીય ઇતિહાસપુરુષ હતા. કોઈક વાર સમય કાઢીને બેસજો, એમને જાણવાની કોશિશ કરજો, એમના જીવનમાં રહેલી સચ્ચાઈના રણકાને પારખજો. અનેકાનેક વર્ષો સુધી આપણને પ્રેરણા આપે એવું જીવન હતું. (કાશ ! પણ હવે એ તક તો ગઈ !)

ગુજરાતી ભાષા અને જોડણી માટે શાસ્ત્રીજી સતત ઝુંબેશ ચલાવતા રહ્યા. પોતાના કામના એટલા જ ચોક્કસ હતા. કહેવાય છે કે ૧૯૩૬માં મહાત્મા ગાંધીના પ્રમુખપદે અમદાવાદમાં ગુજરાતી સાહિત્ય પરિષદનું અધિવેશન ભરાયું ત્યારે જોડણીના મુદ્દે શાસ્ત્રીજીએ કડક વલણ લીધું હતું. ગુજરાત વિદ્યાપીઠે જ્યારે સાર્થ જોડણીકોશ તૈયાર કર્યો ત્યારે શાસ્ત્રીજીએ તેને અનુમોદન આપવાનો ઇન્કાર કરતાં કહ્યું હતું કે, "જોડણીમાં હજી સુધારા કરવાની જરૂર છે." તે પછી સુધારાને અવકાશ હોવાનું વિદ્યાપીઠે સ્વીકારતાં તેમને અનુમોદન આપ્યું હતું. ભાષાશુદ્ધિ પ્રત્યેની કેટલી અડગ લાગણી !

ગુજરાતી ભાષાને બચાવવા માટે ઘરમાં ગુજરાતી ભાષા જ બોલાવી જોઈએ તેવો આગ્રહ શાસ્ત્રીજી કરતા. તેમના ત્રણેય દીકરા અમેરિકામાં છે અને તેમનાં સંતાનો ઘરમાં ગુજરાતીમાં જ વાત કરે છે.

તેમના જ્ઞાનસ્વરૂપને કારણે તેઓ 'દાદા' કે 'શાસ્ત્રીજી'થી ઓળખાતા. ભલે તેઓ મૅટ્રિક પાસ હતા પણ તેમણે ૧૯ વિદ્યાર્થીઓને પીએચ.ડી.ના મહાનિબંધ માટે માર્ગદર્શન આપ્યું હતું અને એમ. એ.નાં ૧૦૦૦થી વધુ વિદ્યાર્થીઓને સતત માર્ગદર્શન આપ્યું હતું. શાસ્ત્રીજીના લેખનકાર્યની સુવાસ આંતરરાષ્ટ્રીય સ્તર સુધી પહોંચી હતી. હાર્વર્ડ યુનિવર્સિટીની લાઈબ્રેરીમાં શાસ્ત્રીજીનું પુસ્તક મુકાયું છે.

શાસ્ત્રીજીની સાધના પણ કેટલી ચોકસાઈભરેલી ! કર્મના તપમાં કેટલી શુદ્ધિ હતી તેનું ઉદાહરણ જાણવું રસપ્રદ થઈ પડશે. મારા એક મિત્રે પ્રસંગ કહ્યો છે. એક પ્રૂફરીડર. પહેલાં તો ટાઈપોની એવી સિસ્ટમ હતી કે અક્ષરો બીબાંમાં મૂકવા પડતા. પ્રૂફરીડર એમ કહે છે કે "મારા જીવનમાં મને એક સૌભાગ્ય મળેલું, શાસ્ત્રીજીની સેંકડો પાનાંની હસ્તલિખિત પ્રત મને કંપોઝ કરવાનું કામ મળ્યું હતું." એણે પોતાના અનુભવમાં કહ્યું કે, "સેંકડો પાનાંની હસ્તલિખિત મૂળ પ્રત હતી, એમાં એક પણ જોડણીની ભૂલ નહોતી, એક પણ નહીં." યાને કેટલી જાગૃત અવસ્થા રહેતી હશે જીવનમાં! એક પણ વખત મન આમતેમ નહીં થયું હોય, પૂર્ણ પ્રયાસ ધ્યાનસ્થ અવસ્થામાં રહેતો હશે, ત્યારે જ સેંકડો પાનાંમાં કાનો, માત્રા, અલ્પવિરામ, પૂર્ણવિરામ – કશું રહી જ ન જાય ! આ સહજ મોટી ઘટના છે. આ વ્યક્તિત્વનાં અનેક પાસાં છે. મારા જેવા અનેક ભાગ્યવાન લોકો હશે, જેમને એમના આશીર્વાદ મળ્યા હશે. એક પિતાતુલ્ય જીવન અમને બધાને સહાય – પ્રેરણા આપતું હોય છે. પરંતુ ગુજરાતના જાહેર જીવનને માટે આ એક અણમોલ અમાનત છે અને એનું ગૌરવ સૌને હોય તે સ્વાભાવિક છે.

જીવન જીવી જાણીએ :

શાસ્ત્રીજીનું જીવન અનેક વર્ષો સુધી આપણને પ્રેરણા આપતું રહેશે. એમની રચનાઓ અનેક વર્ષો સુધી આપણને નવાં પુસ્તકો પીરસતી રહેશે.

એક વાર એક ગામમાં એક વૈદરાજ ગયા. જૂના જમાનાના વૈદરાજો ગામેગામ સ્થળાંતર કરતા. કોઈ ગામમાં જાય, ત્રણ-ચાર મહિના રહે અને પોતે જાણતા હોય તેવો ઉપચાર કરતા. આજુબાજુનાં ૧૨-૧૫ ગામોના લોકોની સેવા કરે. એક વાર એક ગામમાં ગયા. જડીબુટ્ટીઓનું સંશોધન કરતા હતા. સંશોધન કરીને સેવાભાવનાથી કામ કરતા હતા. એક દિવસ એક કોઢિયો માણસ મળ્યો.

એણે કહ્યું, "વૈદરાજ, મારું જીવન રોળાઈ ગયું. હું કેવો કદરૂપો લાગું છું ! મારી જિંદગીનું શું થશે ? સમાજજીવનમાં હું બધી રીતે, અંદરથી-બહારથી ખતમ થઈ ગયો છું."

વૈદરાજે કહ્યું, "દવા તો છે, તારી સમસ્યાનું નિરાકરણ થાય તેમ છે, પરંતુ પરેજી પાળવી પડશે."

કોઢિયાએ કહ્યું, "આ રોગને જિંદગીમાંથી મુક્તિ મળતી હોય તો પરેજી પાળવા તૈયાર છું."

વૈદરાજે કહ્યું કે, "સાત વાર વિચારી લે. કાલે આવજે."

બીજા દિવસે કોઢિયો આવ્યો. તેને વૈદરાજે પરેજી બતાવી, દવા-ઉપચાર આપ્યો, ગામની જડીબુટ્ટીઓ છે તેની સમજ આપી અને એને કહ્યું કે "તારે રોજ ખીચડી ખાવાની. ખીચડીમાં એક મોટો ચમચો ભરીને કાચું દિવેલ નાંખવું અને એ મિક્સ કરીને ખાવું."

વૈદરાજ તો સમજાવીને બીજા ગામે ગયા. ૨૦ વર્ષ પછી વૈદરાજ ફરતા- ફરતા ફરી એ ગામમાં આવ્યા. એક માણસે વૈદરાજને સાષ્ટાંગ પ્રણામ કર્યા અને કહ્યું કે "વૈદરાજ, મને ઓળખ્યો ? તમે ૨૦ વર્ષ પહેલાં આ ગામમાં આવ્યા હતા ત્યારે એક કોઢિયો છોકરો હતો, તમે એનો ઉપચાર કરવાનું કહ્યું હતું અને એને દવા આપી હતી. એ કોઢિયો તે હું પોતે."

વૈદરાજે કહ્યું, "અલ્યા તારા શરીર પર તો એક પણ દાગ નથી ! પરેજી પાળી હતી ?"

કોઢિયાએ કહ્યું, "અત્યારે પણ પાળી જ રહ્યો છું."

વૈદરાજ એને સાષ્ટાંગ પ્રણામ કરી બોલ્યા, "આવો શિષ્ય, આવો દરદી, જેના કારણે મારું સંશોધન લેખે લાગ્યું !"

તેમણે કહ્યું હતું કે હિન્દુઓ સહિષ્ણુ છે અને ભવિષ્યમાં પણ સહિષ્ણુ જ રહેશે. પણ સહિષ્ણુતાનો અર્થ એ નથી કે પોતાનું રક્ષણ ન કરવું. છેલ્લાં થોડાં વર્ષોથી જે આતંકવાદ ફેલાવાઈ રહ્યો છે તે જોતાં હિન્દુઓએ પણ પોતાના રક્ષણ માટે જાગૃત થવું પડશે, નહીંતર આગામી દિવસો તેમના માટે જોખમી હશે.



દવાનું માહાત્મ્ય દરદી છે. એવા મહાત્મા શાસ્ત્રીજી છે. શાસ્ત્રીજીએ એટલું બધું આપ્યું છે કે આપણે એમાંથી કેટલું પાળ્યું છે, કેટલું જીવી જાણ્યું છે, તેને યોગ્ય બનવાને આધારે શાસ્ત્રીજીની આ તપશ્ચર્યા લેખે લાગી છે. વૈદરાજને સંતોષ એ વાતનો હતો કે દવા સાચી છે તે સિદ્ધ કરવા કોઈક દરદી

મળ્યો, મારી દવાએ જીવી જાણ્યું. *આપણે શાસ્ત્રીજીના જીવનને જીવી જાણીએ.*

રાષ્ટ્રીય વિરાસત :

મને યાદ છે કે એમનો શતાયુ સન્માન સમારોહ રાજ્ય સરકાર દ્વારા યોજાયો હતો. પોતાની ૧૦૧ વર્ષની ઉંમરે બોલાવનારને માઠું ન લાગી જાય, એમના પ્રેમનો અનાદર ન થઈ જાય એને માટે તેમને સતત ચિંતા રહેતી. એને પરિણામે રાજ્ય સરકારને આ શતાબ્દી વર્ષ મનાવવાનું સરળ રહ્યું. અનેક પ્રકારના કાર્યક્રમો, જ્ઞાનનો યજ્ઞ, દેશનાં સાંસ્કૃતિક અને અન્ય વિવિધ વિષયનાં વક્તવ્યો સાંભળીને આખુંય વર્ષ આપણે ઊજવી શક્યા એનું નિમિત્ત પૂજ્ય શાસ્ત્રીજી.

તે શતાબ્દી ઊજવવાના કાર્યક્રમમાં શાસ્ત્રીજી બોલવા ઊભા થયા ત્યારે માઈકવાળાને સૂચના આપી કે "ભાઈ, માઈક દૂર રાખ. વળી આ ઉંમરે કદાચ બધાને સંભળાશે નહીં."

મેં વિનંતી કરી કે "શાસ્ત્રીજી, બેસીને બોલો."

તો એમણે કહ્યું કે "જિંદગીભર ઊભા રહીને ભણાવ્યું છે, તેથી ઊભો રહીને જ બોલીશ." તેમની પ્રત્યેક બાબતમાં જે ખુમારી હતી તે ખુમારી અદ્ભુત હતી. એ જ એમની શક્તિ હતી.

શાસ્ત્રીજી પ્રત્યે અપાર શ્રદ્ધા ધરાવનાર એક મોટો વર્ગ છે. આપણે બધાએ અનુભવ કર્યો હશે કે સમાજજીવનના કેટલાક વડીલો, જૂની પેઢીના લોકો મળે ત્યારે ઉલ્લેખ કરતા હોય કે "હું નાનો હતો ત્યારે ફલાણા ગામે ગયો હતો ત્યારે મેં આમ જોયું હતું." માણસ ગમે તેટલો મોટો થયો હોય તોય એના મનમાં પડેલી એવી ઘટનાનો ઉલ્લેખ કરવાનો જ.

મને યાદ છે કે શ્રી અટલ બિહારી વાજપેયીજી અત્યંત ભાવ-વિભોર બનીને ઘટનાનું વર્ણન કરતા હતા કે "હું નાનો હતો, હિન્દુ આંદોલન સાથે જોડાયેલો હતો અને ગ્વાલિયર શહેરમાં સરદાર પટેલ દેશી રજવાડાના વિલીનીકરણના સમારંભમાં આવ્યા હતા. મેં સરદાર પટેલસાહેબનું રૂપ જોયું હતું. તે મારા જીવનનો યાદગાર પ્રસંગ હતો." આમ કહ્યાનો આનંદ આવે છે. મિત્રો, મને લાગે છે કે આવનારા દિવસોમાં અનેક વ્યક્તિઓ એમ કહીને યાદોને વાગોળશે કે "શાસ્ત્રીજીના ૧૦૧મા વર્ષે સન્માન સમારંભમાં અમે હાજર હતા."

આપણા જીવનમાં આનાથી કોઈ મોટો આનંદ, કોઈ મોટી પળ હોઈ શકે નહીં, જેને હું કહી શકીશ કે આ એક મોટી ચળવળની પળ છે. સાંસ્કૃતિક વિરાસતનાં ચરણો પાસે જીવંત બેસવા મળે છે તે લહાવો છે. *મોટાઓની પ્રત્યેક પળ રાષ્ટ્રીય વિરાસત છે.*

ગાંધીજી માટે કહેવાતું કે 'મારું જીવન એ જ મારો સંદેશ...' શાસ્ત્રીજી માટે એમ કહી શકાય કે તેમની કાર્યસાધના એ જ તેમનું જીવન હતું, સદા ઉમંગભર્યું, સદા કર્મયોગભરેલું. તમે તેમના જીવનમાં ડોકિયું કરો તો તમને પળેપળે તેમાં કંઈક નવું જોવા મળે. મરજાદી પરંપરાવાળા હતા, પણ રૂઢિચુસ્ત વિચારો નહીં. ધર્મમય હતા, પરંતુ ધર્મને બાંધીને પોટલીમાં રાખવાના મતના નહોતા. એટલે જ તેમણે વિશ્વ હિન્દુ પરિષદ માટે સ્થાપનાકાળથી જ પોતાનું જીવન સમર્પિત કરી દીધું તેમ કહું તો અતિશયોક્તિ નહીં ગણાય.

શાસ્ત્રીજી વિશ્વ હિન્દુ પરિષદ સાથે સંકળાયેલા રહેતા તેનાથી કેટલાક સાક્ષરો નારાજ રહેતા હતા. પણ શાસ્ત્રીજીએ તેમની ક્યારેય પરવા કરી નહોતી. હિન્દુ-હિત સદા તેમના હૈયે રહ્યું હતું.

ગુજરાતમાં ગોધરાકાંડ પછી જ્યારે કોમી રમખાણો થયાં ત્યારે શાસ્ત્રીજી વિશ્વ હિન્દુ પરિષદના ગુજરાત એકમના પ્રમુખ હતા. તેમણે તે વખતે ગુજરાતના હિતની મજબૂત વકીલાત કરી હતી. તેમણે એક અખબારી મુલાકાતમાં કહ્યું હતું કે ગુજરાતનાં રમખાણો પછી ગુજરાતની છાપ ટીવી

એમણે જે સાધના કરી છે, જે સાહિત્યનું સર્જન કર્યું છે, જે ઇતિહાસની ખોજ કરી છે, જે પુરાતત્ત્વીય નજરાણું ગુજરાતને ધર્યું છે, તેનું વર્ણન કરવું મુશ્કેલ છે. એમના માટે ઘેર ગાડીઓ વસાવવી કોઈ મુશ્કેલ કામ નહોતું. પરિવાર... છોકરા અમેરિકા હતા. સુખસાહ્યબી ભોગવવાં હોય તો ઈશ્વરે સઘળી વ્યવસ્થા કરી આપી હતી. પરંતુ શાસ્ત્રીજી જલકમલવત્ રહ્યા. આવું કશું તેમને સ્પર્શી પણ ન શક્યું. આ જીવનની અંદર જે દઢીભૂત થયેલી ચીજો હતી, એનાં આપણને દર્શન થાય.

ચેનલો અને રાષ્ટ્રીય અખબારોએ બગાડી હતી. ગોધરાકાંડની વાત નહીં કરીને માત્ર તે પછીનાં તોફાનોની વાત વિશ્વ સમક્ષ પહોંચાડી તેનાથી ગુજરાતને નુકસાન થયું છે. તેમણે કહ્યું હતું કે આ ચેનલો ભારતીય સંસ્કૃતિ માટે ખૂબ જોખમી સાબિત થશે. બહુ હિંમતપૂર્વક શાસ્ત્રીજીએ હિન્દુઓને જાગવાની હાકલ કરી હતી.

તેમણે કહ્યું હતું કે હિન્દુઓ સહિષ્ણુ છે અને ભવિષ્યમાં પણ સહિષ્ણુ જ રહેશે. પણ સહિષ્ણુતાનો અર્થ એ નથી કે પોતાનું રક્ષણ ન કરવું. છેલ્લાં થોડાં વર્ષોથી જે આતંકવાદ ફેલાવાઈ રહ્યો છે તે જોતાં હિન્દુઓએ પણ પોતાના રક્ષણ માટે જાગૃત થવું પડશે, નહીંતર આગામી દિવસો તેમના માટે જોખમી હશે.

આપણે ત્યાં ઋષિ-મુનિઓ વિશે ઘણુંબધું સાંભળ્યું છે કે જૂના જમાનામાં ઋષિ-મુનિઓ આવા હતા, પણ આપણે ત્યાં ઋષિ કહેતાંની સાથે લોકોનાં મગજમાં એવું બેસે છે કે ઋષિ એટલે દાઢી હોય, વાળ હોય અને જંગલમાં બેઠા હોય, પણ હકીકત એવી નથી. આપણે ત્યાં જે બધા ઋષિ થયા છે, તે બધા વૈજ્ઞાનિક હતા. તેઓ સમાજને માટે કોઈ ને કોઈ જ્ઞાનયજ્ઞ કરીને સમાજને માટે કાંઈક ને કાંઈક આપતા ગયા છે. સમગ્ર ઋષિપરંપરા એ રહી છે.

આપણા આધુનિક યુગમાં બે ઋષિતુલ્ય જીવન, જેમનું મને સતત સ્મરણ થાય છે. તે *પંડિત સાતવળેકર* અને બીજા પૂ. *શાસ્ત્રીજી*. બંનેની વિશેષતા જુઓ... પંડિત સાતવળેકરજીએ લગભગ ૧૦૩ વર્ષે એમનું શરીર છોડ્યું. પંડિત સાતવળેકરજીનો શતાબ્દી મહોત્સવ જ્યારે ઊજવાઈ રહ્યો હતો ત્યારે રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના સરસંઘચાલક પ.પૂ. ગુરુજી એ સમારંભમાં અધ્યક્ષતા માટે આવ્યા હતા. એ કાર્યક્રમમાં પંડિત સાતવળેકરજીએ ભાષણ કર્યું હતું, ત્યારે ગુરુજીની ઉંમર ૫૫-૫૭ વર્ષની આસપાસ હશે. પંડિત સાતવળેકરજીએ તેમના ભાષણમાં કહ્યું હતું કે, "જ્યારે ગુરુજીનાં ૧૦૦ વર્ષ પૂરાં થશે ત્યારે એ સમારંભની અધ્યક્ષતા હું કરીશ." આપ કલ્પના કરો કે કેટલો અદ્ભુત આત્મવિશ્વાસ !



ગીતા પચાવી હતી :

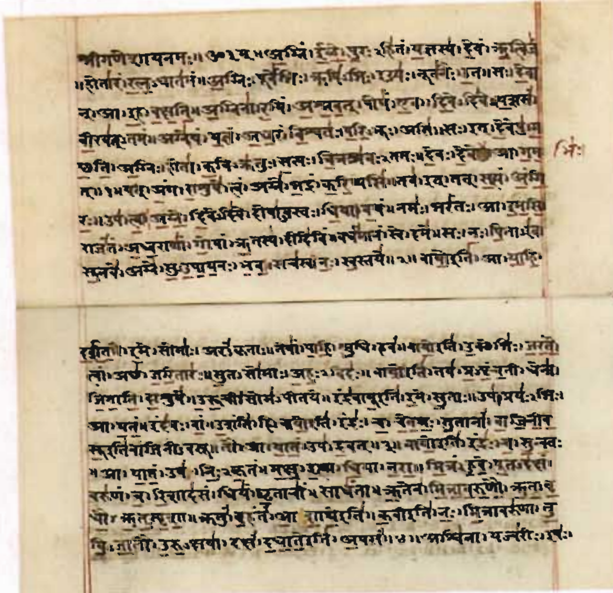
...અને બીજા ઋષિતુલ્ય આપણા શાસ્ત્રીજીએ ગીતા પચાવી. ગીતા વાંચવી, તેના શ્લોકો ગોખીને બોલ્યે રાખવા અને દરેક જન્માષ્ટમીએ 'સંભવામિ યુગે યુગે'ના નાદ સાથે ભગવાન શ્રીકૃષ્ણને યાદ કરવા તે આપણી એક મનોભાવના થઈ ગઈ છે, એક ઘરેડ પડી ગઈ છે. ગીતાના શ્લોકોનું રટણ શું કર્યું, ને આપણે જાણે કર્મયોગ જાણી લીધો તેવા અહંકારથી સમાજને જોતા હોઈએ છીએ... પણ ખરેખર ગીતાના સિદ્ધાંતો પચાવ્યા હોય તે ઋષિતુલ્ય શાસ્ત્રીજી પાસેથી અનુભવ્યું, જાણ્યું અને જીવનમાં ઉતારવાનો પ્રયાસ કર્યો.

ગીતા પચાવી હોય તેનું જીવન કેવું હોય, એનાં દર્શન મને તેમની સાથેના બે પ્રસંગોમાં થયાં.

આ લૉટરીનો જમાનો શરૂ થયો ને ત્યારે તમારામાંથી કોઈને યાદ હશે કે નહીં તેની મને ખબર નથી, પણ પહેલી જે એક કરોડ રૂપિયાની લૉટરી ગુજરાતમાં લાગી હતી, તે પહેલી એક કરોડ રૂપિયાની લૉટરી શાસ્ત્રીજીના કુટુંબમાં લાગેલી. પછી હું મળવા ગયો, કોઈ ડોનેશન લેવા નહોતો ગયો. પણ એક આનંદ થયો. એમના બામણિયા પરિવારના વેવાઈ થાય, એમને લૉટરી લાગી હતી. હું એમને મળવા ગયો. શાસ્ત્રીજીની વાણીમાં, વ્યવહારમાં, વર્તનમાં એક કરોડ રૂપિયાની લૉટરી અને એની કોઈ નોંધ જ નહીં. જ્યારે ગુજરાતનાં છાપાં એક કરોડની લૉટરીથી ભરેલાં પડ્યાં હતાં. શાસ્ત્રીજીના ઘરમાં એની નોંધ જ નહોતી. આજથી લગભગ ૩૫-૪૦ વર્ષ થયાં હશે. ઘરમાં કોઈ નોંધ જ નહીં. આ એમની જે અલિપ્તતા, મનનો નિષ્કામભાવ એનું પ્રતિબિંબ છે.

બીજો અનુભવ પૂજ્ય બાના સ્વર્ગવાસ સમયનો છે, શાસ્ત્રીજીનાં પત્નીનો સ્વર્ગવાસ થયો ત્યારનો છે. આ ઉંમરે, છેવટના દિવસોમાં પત્ની સાથ છોડે ત્યારે તે અવસ્થાની કલ્પના જરા ગૃહસ્થી લોકો વધારે સમજી શકશે. હું એ વખતે ગુજરાત બહાર હતો. આ સમાચાર મળ્યા એટલે હું શાસ્ત્રીજીને ત્યાં મળવા માટે આવ્યો. બા સાથે પણ મારો એટલો જ નિકટ સંબંધ રહ્યો હતો. મને સહજ એવી લાગણી થઈ કે તરત જ હું દિલ્હીથી નીકળીને પહેલાં શાસ્ત્રીજી પાસે જઈ આવું. મને હતું કે વાતાવરણ કાંઈક ગંભીર હશે, પરંતુ હું ગયો ત્યારે એ ચોપડી લખતા હતા. ત્રીજો કે ચોથો દિવસ થયો હશે. પછી થોડી વાર બેઠો. છેલ્લે બીમાર હતાં, શું હતાં તે બધી વાત થઈ. જેમ અત્યારે કહેતા એ જ અલિપ્તભાવે કોઈ ગુપ્તવંશની કે કોઈ મૌર્યકાળની વાત કરતા હોય એમ કરતા હતા. મને કહે, 'બેસ... બેસ... ભાઈ, તારી બા તારા માટે પ્રસાદ મૂકતી ગઈ છે.' હુ દિલ્હી હતો તોપણ મહિને-બે-

મહિને બા મને મગજની લાડુડી મોકલી આપે... અને શાસ્ત્રીજી પણ યાદ રાખે કે "ભાઈ, તારો પેલો છોકરો ત્યાં છે, મોકલજે." મૃત્યુના ચોથા દિવસ પછી હું જાઉં છું, તો એ પડીકું એમ ને એમ તૈયાર હતું. શાસ્ત્રીજી ભૂલ્યા વિના મારા હાથમાં મગજની લાડુડીનું પડીકું આપે છે કે "લે, આ તારી બા મૂકતી ગઈ છે. પણ આ છેલ્લું છે." મન, વચન, કર્મથી ગીતાને જીવનની રગ-રગમાં પચાવીને અલિપ્તતાનો અહેસાસ – આ નાની વાત નથી. કદાચ વર્ણન કરતી વખતે આપણને લાગે, પણ આ ઘટના નાની નથી.



તેઓ જેમ મારા પ્રત્યે પિતાતુલ્ય વાત્સલ્ય ધરાવતા હતા તેવી રીતે ક્યારેક મારે તેમની સાથે પુત્રની જેમ મીઠો ઝઘડો પણ થયેલો. આવો એક પ્રસંગ ખૂબ રસપ્રદ છે. શાસ્ત્રીજીની વય વધતી જતી હતી છતાં તેઓ સાઈકલ છોડતા નહોતા. અમે ખૂબ વિચાર કર્યો, પરંતુ કોઈ યુક્તિ ફાવવા દેતા નહોતા. ૮૫ વર્ષની વયે પણ તેઓ ભો. જે. વિદ્યાભવન સાઈકલ ચલાવીને જતા હતા. એવામાં એક વાર રેલવે ક્રૉસિંગ પાસે શાસ્ત્રીજીની સાઈકલને અકસ્માત થયો અને તેમને ફ્રેક્ચર થયું. બસ, આ પ્રસંગનો મોકો લઈને મેં પુત્રવત્ અધિકારથી કહ્યું કે હવે સાઈકલ ચલાવવાની બંધ. આ હાડકું ભાંગ્યું. તેની સાથે સાઈકલનું હેન્ડલ પણ ભાંગી ગયું છે તેમ સમજજો અને તેમની સાઈકલ બંધ કરાવવાની બધાંની ઇચ્છા પૂરી થઈ.

અક્ષરના આરાધકે જ્ઞાનની શક્તિ વડે જ જાણે કે ઈશ્વરનો સાક્ષાત્કાર કરી લીધો હશે. એકવીસમી સદીને જ્ઞાનની સદી માનવામાં આવે છે. માહિતીનો વિસ્ફોટ થઈ રહ્યો છે. શાસ્ત્રીજીએ દાયકાઓના દાયકા સુધી જ્ઞાનની ઉપાસના કરી, એકએક શબ્દને ઓળખ્યો, માણ્યો અને અનુભવ્યો તેમ જ તેનો રસાસ્વાદ પણ કરાવ્યો. આમ છતાં તેમણે ક્યારેય ભૌતિક સુખ-સગવડો કે આનંદપ્રમોદ માટે સમય ફાળવવાની તમા રાખી નથી. હું મુખ્યમંત્રી બન્યો પછી એક વાર શાસ્ત્રીજી વિશે વિચાર કરતો હતો કે "આ માણસ કેવો નિઃસ્પૃહી છે ! પિતા તરીકેના અધિકારથી મને ગમે ત્યારે ટેલિફોન કરી શકે. આમ છતાં તેમણે ક્યારેય મને કોઈની ભલામણ કે સિફારીશ કરી નથી. અથવા "આમ કરજે કે આમ ન કરતો, આટલું ધ્યાન રાખજે" એવી વાત કરી નથી.

પરંતુ દરેક ગતિવિધિથી પૂરેપૂરા વાકેફ પણ રહેતા હોય તે વાત મને તેમના ટેલિફોન દ્વારા સમજાઈ. એક દિવસ તેમનો ફોન આવ્યો કે "આજે લાડુડી મોકલાવું છું." મેં પૂછ્યું કે "શા કારણથી ?"

તેમણે કહ્યું, "આજે વિશેષ કારણથી લાડુડી મોકલું છું."

મેં કહ્યું, "કેમ ?"

તો કહે, "તું મારા માંગરોળમાં નર્મદાનું પાણી લઈ જાય છે એટલા માટે."

નિઃસ્પૃહ અને અકિંચન હોવા છતાં વતનપ્રેમ અને વતનના લોકોને મળતી સુવિધાથી કેવા આનંદવિભોર બની ગયા ! આ નિર્દોષ બાળસહજતાથી, સંસારમાં જળકમળવત્ રહેનાર મહર્ષિએ વતન છોડ્યાને ૬૦-૭૦ વર્ષ થઈ ગયાં હશે, છતાં અમદાવાદમાં બેસીને હમવતનોને મળનારી સુવિધાનો આનંદ લઈ શક્યા એ તેમની ઉદાત્તતા બતાવે છે.

શાસ્ત્રીજીની લાડુડીનું રહસ્ય પણ જાણવા જેવું છે. મારા જીવનમાં તેમની લાડુડી પણ વિશેષ મહત્ત્વ ધરાવે છે. હવે તેઓ જીવંત નથી એટલે બીજા કોઈ તેમને હેરાન કરવાના નથી, એટલે આ રહસ્ય જાહેર કરી દેવામાં પણ કોઈ વાંધો નથી.

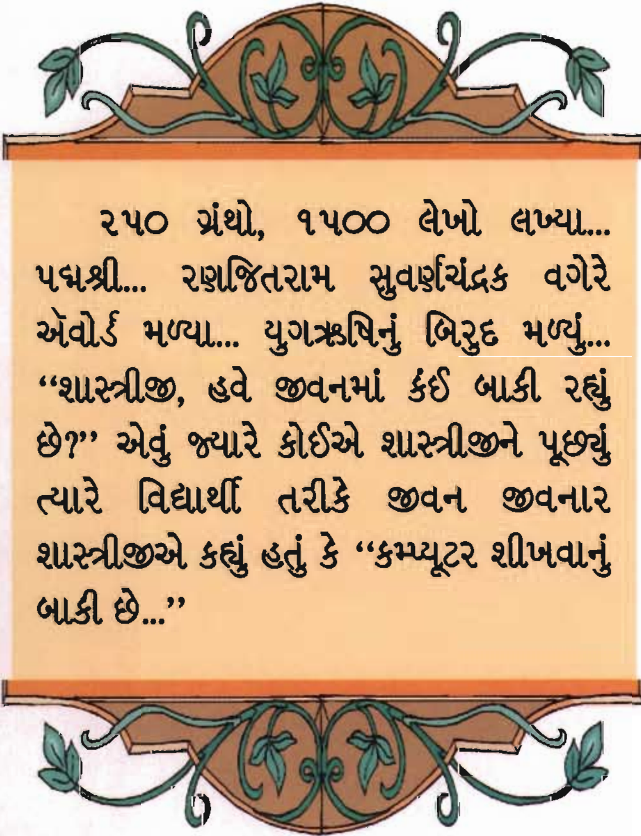
અમે ઘણી યાત્રાઓ કાઢી : સોમનાથ યાત્રા, એકતા યાત્રા, ગૌરવ યાત્રા વગેરે. તે યાત્રા દરમિયાન પત્રકારો સતત એક જ પ્રશ્ન કરતા હોય છે કે "નરેન્દ્રભાઈ, તમે થાકતા કેમ નથી ?", "આખા દિવસના પરિશ્રમ પછી રાત્રે નવ વાગ્યે અથવા રાત્રે અગિયાર વાગ્યે પણ કેમ તાજા દેખાઓ છો ?"

તેનું રહસ્ય શાસ્ત્રીજીનો લાડુડીવાળો ડબ્બો છે. શાસ્ત્રીજીના મરજાદી પરિવારે મને તેમના ઘરના સભ્ય તરીકે સ્વીકારી લીધો હતો. આથી સીધો રસોડામાં બાની પાસે પહોંચી જતો. પછી તો હું ગમે ત્યાં હોઉં ત્યાં બા ડબ્બો પહોંચાડી દે. પણ આ પ્રસાદીનો લાભ બાએ મને છેવટ સુધી આપ્યો હતો. તેમાં તેમની અપાર કરુણા અને વાત્સલ્ય ભળેલાં હોવાથી લાડુડી ખાવાથી શરીરમાં શક્તિનો નવસંચાર થઈ જતો હતો.

કાર્યસાધના :

જેમ તેમનું આવું 'અલિપ્તતા'ભર્યું જીવન હતું, જેમ 'નિષ્કામ-ભાવ' પ્રગટતો, તેવી જ તેમની કાર્યસાધના હતી.

એમણે જે સાધના કરી છે, જે સાહિત્યનું સર્જન કર્યું છે, જે ઇતિહાસની ખોજ કરી છે, જે પુરાતત્ત્વીય નજરાણું ગુજરાતને ધર્યું છે, તેનું વર્ણન કરવું મુશ્કેલ છે. એમના માટે ઘેર ગાડીઓ વસાવવી કોઈ મુશ્કેલ કામ નહોતું. પરિવાર... છોકરા અમેરિકા હતા. સુખસાહ્યબી ભોગવવાં હોય તો ઈશ્વરે સઘળી વ્યવસ્થા કરી આપી હતી. પરંતુ શાસ્ત્રીજી જલકમલવત્ રહ્યા. આવું કશું તેમને સ્પર્શી પણ ન શક્યું. આ જીવનની અંદર જે દૃઢીભૂત થયેલી ચીજો હતી, એનાં આપણને દર્શન થાય.



આપણે ઘણા લોકો માટે કહીએ કે "ફલાણા ભાઈ તો ૧૮ કલાક કામ કરે છે, ફલાણા ભાઈ ૧૬ કલાક કામ કરે છે." આ બધું શબ્દોમાં કહીએ તો ખબર નથી પડતી કે ૧૮ કલાક કોને કહેવાય. મને જીવનમાં પહેલી વાર ૧૮ કલાક કોને કહેવાય એનો પ્રત્યક્ષ સાક્ષાત્કાર થયો શાસ્ત્રીજી સાથેની યાત્રામાં.

અમે એક મેટાડોર કરીને એકલિંગજીની યાત્રાએ ગયા હતા. અમે જતા હોઈએ ત્યારે રસ્તામાં કોઈ રેલવેનું ફાટક આવે તો મેટાડોર ઊભી રહે એની સાથે જ શાસ્ત્રીજીએ થેલામાંથી કાગળિયાં બહાર કાઢ્યાં જ હોય, અને આમ કાગળિયાં કાઢીને કંઈક લખવા માંડે અને જેવું ફાટક ખૂલે તેવું પાછું પોટલું મૂકી દે. ૧૮ કલાક... મિનિટે-મિનિટનો ઉપયોગ કોને કહેવાય એ પ્રત્યક્ષ જોયું છે મેં. કોઈ જોડણી લખતા હોય અને અડધી જોડણી લખી હોય ત્યારે વચ્ચે આપણે માથું માર્યું હોય, તોપણ આપણી જોડે એટલા જ પ્રેમથી વાત કરે. એમ નહીં કે ડીસ્ટર્બ કર્યા. કશું નહીં. આપણી જોડે લાગી પડે. આ બાળકસહજ છે સાધનામય જીવન.

અમે આબુ ગયા. આબુમાં ક્યાંય રહેવાની જગ્યા ન મળે. અમે રઘુનાથજીના મંદિરમાં ગયા. રઘુનાથજીના મંદિરમાં પણ રૂમો ગુજરાતીઓથી ભરી હોય, એટલે અમને ક્યાંય રૂમ ન મળે. મને યાદ છે, હજુ તો અમે રૂમ શોધીએ કે વ્યવસ્થા કરીએ, મનમાં એમ કે શાસ્ત્રીજી માટે કાંઈક થાય. શાસ્ત્રીજી માટે રૂમ શોધતો હતો અને હું ફરીથી આવ્યો ત્યારે એ તો ઓટલા ઉપર એક શેતરંજી નાંખીને, પોટલું મૂકીને ઊંઘતા હતા. મને ચિંતા હતી કે આબુમાં ટાઢ વાશે. પરંતુ તેઓ પરસાળમાં ખુલ્લામાં ઘસઘસાટ ઊંઘતા હતા. સવારે ઊઠીને આબુની ઠંડીમાં બરફ જેવા નખીલેકના સરોવરમાં સ્નાન કરીને આવી ગયા હતા અને કૃષ્ણભક્તિમાં લીન બની સેવા કરવા બેસી ગયા હતા !

આ યુગના ઋષિતુલ્ય જીવનને કર્મઠતા, કર્મશીલતા, કર્મયોગીનો સ્વયં ઈશ્વરે જ જાણે અભિષેક કર્યો હતો. એંશી તો થઈ ગયાં હતાં, પરંતુ આ કર્મ છે જીવનનું, આ કર્મકાંડને મેં નરી આંખે જોયું છે.

આવી ફકીરી જિંદગીમાં તેમની રમૂજી વૃત્તિ આસપાસનો માહોલ હંમેશાં આનંદમય રાખતી. એક પ્રસંગ છે. તેમને આંખોમાં થોડી તકલીફ થઈ ગઈ હતી. તે સમયે તેમને કોઈએ પૂછ્યું કે 'દાદા ! તમારી આંખો લાલ થઈ ગઈ છે. કોઈ ડૉક્ટરને બતાવ્યું ?' શાસ્ત્રીજીએ જણાવ્યું કે 'યુવાનની આંખ હંમેશાં લાલ જ હોય.'

૧૦૦ વર્ષની વયે પણ પોતાને યુવાન કહેનારા અને ખુમારી સાથે વાતો કરતા શાસ્ત્રીજી સમયપાલનના પણ ચુસ્ત આગ્રહી હતા.

જળશાસ્ત્રી :

પાણી એમનો પ્રિય વિષય. પાણી માટેની ખોજ, પાણી માટેની પરંપરાગત પદ્ધતિઓ, પાણી માટેના પરંપરાગત પ્રવાહો વિશે તેમને જાણકારી હતી. અને તેથી જ રાજ્ય સરકારે એક મોટું કામ એમના હસ્તક કરાવ્યું. ગુજરાતમાં અણમોલ અમાનત બન્યો છે એ ગ્રંથ. જળશાસ્ત્રના જાણકારો માટે ખૂબ જ ઉપયોગી છે એ પુસ્તક. સંશોધનો દ્વારા પાણીના પરંપરાગત સ્રોત ક્યા છે, પાણીપદ્ધતિ કઈ છે, આ બધી જ

બાબતો એમણે ગુજરાતની જનતા સામે મૂકી છે. એક અમૂલ્ય ગ્રંથ ગુજરાતને પ્રાપ્ત થયો છે.

પરંતુ આ પાણીની રુચિને કારણે સરસ્વતી નદી જે લુપ્ત થઈ, એનો માર્ગ ક્યો હતો, એની ખોજ માટેનું અભિયાન ચલાવ્યું અને રાજસ્થાન સરહદથી નળસરોવર સુધીની યાત્રામાં મને સાથે રહેવાનો અવસર મળ્યો.

આ ટીમમાં જે હતા તે બધા ઇતિહાસવિદો, બધા પુરાતત્ત્વવિદો, હિન્દુસ્થાનના આ ક્ષેત્રના જેને ટોચના બુદ્ધિજીવીઓ કહેવાય એવા એમાં હતા અને આ બધામાં વયોવૃદ્ધ શાસ્ત્રીજી હતા. અને આખા પ્રવાસમાં જ્યારે નીકળ્યા તો શાસ્ત્રીજી દૂરથી કહે, "જો, ભઈ, પેલું ઈંડા જેવું દેખાય છે એને ઉઠાવી લાવ", "પેલો પથરો દેખાય છે તે લાવ." પછી જેમ પથરો બોલતો હોય એમ બોલવા માંડે, "જો આ યુગનો આ પથરો લાગે છે. આ ઈંડું આનું અવશેષ લાગે છે. જરૂર અહીંયાં જીવસૃષ્ટિ હશે. એના કારણે નદીનો પ્રવાહ હશે." અને આખી ટીમને દોરતા-દોરતા નળસરોવર સુધી લઈ આવ્યા.

આ બધા ઇતિહાસ-સંશોધનના ક્ષેત્રમાં કામ કરવાની જે સમિતિ છે, એ એના ઉપર કામ કરી રહી છે અને એમાં પણ શાસ્ત્રીજીનું અભૂતપૂર્વ યોગદાન રહ્યું. એ લુપ્ત સરસ્વતીના પ્રવાહમાં આજે પણ ફરીથી ટ્યૂબવેલ વડે સારકામ કરવામાં આવે તો પાણીનો સારો પ્રવાહ પ્રાપ્ત થવાની સંભાવના છે, એવા અભિપ્રાય પર આ બધા જ વિદ્વાનો આવેલા છે. રાજસ્થાનમાં એ ક્ષેત્રમાં થોડુંક કામ પણ થયું છે. એટલે માત્ર ઇતિહાસની અટારીએ નહીં, માત્ર પુરાતત્ત્વના ઝરૂખામાં નહીં, સમાજ-જીવનની જીવંતતાને માટે સ્પર્શતા મુદ્દાઓ આધુનિક સ્વરૂપમાં કેવી રીતે પ્રાપ્ત કરવા-મેળવવા, એને પહોંચાડવાનો પ્રયાસ પણ પૂ. શાસ્ત્રીજીએ કર્યો હતો.

તપશ્ચર્યાની જ્યોત :

જે વ્યક્તિ ૧૮-૧૮ કલાક માત્ર કામ નહીં પરંતુ 'સાધના' કરતી હતી તે વિરલ પુરુષમાં નિયમિતતા, ચોકસાઈ અને વિચારોની સ્પષ્ટતા પણ જબરજસ્ત હતી. રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘમાં સંઘશિક્ષા-વર્ગનું વિશેષ મહત્ત્વ હોય છે. ઉનાળાના વૅકેશનમાં ૪૦-૪૫ ડિગ્રી તાપમાન વચ્ચે મોટા ભાગનો સમાજ આરામ કે રજાઓ માણતો હોય છે ત્યારે આર. એસ. એસ.ના કાર્યકરો રાષ્ટ્ર-આરાધનાની કઠોર તપશ્ચર્યા કરતા હોય છે. ૩૦ દિવસનો વર્ગ પોતે જ એક સાધના હોય છે. વર્ગમાં સર્વાધિકારી તરીકે સમાજમાંથી પ્રતિષ્ઠિત નાગરિકોને જોડવાની પરંપરા છે. ૧૯૭૨માં આર. એસ. એસ.નો સંઘશિક્ષા-વર્ગ અમદાવાદમાં હતો. પૂજ્ય શાસ્ત્રીજીને સંઘશિક્ષા-વર્ગમાં સર્વાધિકારી તરીકે પસંદ કરાયા હતા. સામાન્ય રીતે સર્વાધિકારી પૂર્ણ સમય વર્ગમાં રહેતા. પરંતુ પહેલી વાર સંઘે નિયમોમાં છૂટછાટ મૂકેલી કે શાસ્ત્રીજીને બપોરે લઈ આવવાના. બૌદ્ધિક વર્ગમાં આવે. અમદાવાદમાં તે ઓ.ટી.સી. વખતે ૪૪ ડિગ્રી ગરમીમાં શાસ્ત્રીજી સ્કૂટર પર આવતા હતા. તેમને લેવા માટે સ્કૂટર મોકલીએ એટલે આમ કોઈકના સ્કૂટર પર પાછળ બેસીને આવે અને જ્યારે વર્ગમાં આવે ત્યારે એટલા જીવંત હોય, સમગ્ર વાતાવરણને એટલું જીવંત કરી દે કે સમય ક્યાં પૂરો થાય તેની ખબર જ ના પડે, અને એમનો સમય થાય સાડાચારનો એટલે તરત જ મંદિરે જવાનું છે, એમ કહી દે. પરંતુ ૩૦ દિવસના એ વર્ગમાં એક પણ મિનિટ મોડા નહોતા આવ્યા, એમ એક પણ દિવસ કૅન્સલ નહોતો કર્યો અને એક પણ કાર્યક્રમમાં એ ઉદાસીન નહોતા. આ બધી જ બાબતો એક તપશ્ચર્યાની જ્યોત સમાન હતી.

તેમણે આળસને ક્યારેય પાસે આવવા દીધી ન હતી, એટલે કે એક જ વાક્ય દ્વારા બધાને જ સંદેશો આપતા ગયા કે જીવનમાં પ્રગતિ કરવી હોય તો સતત કાર્યશીલ બની રહો.

હવનનાં હાડકાં :

જોકે આપણી સોચ, આપણી વિચાર કરવાની રીત - બધું જ વક્રદૃષ્ટિનો ભોગ બનતું રહ્યું છે. અન્ય કોઈ દેશ, અન્ય કોઈ સ્થાને આવી વિરલ, આવી ઋષિતુલ્ય, સન્માર્ગી વ્યક્તિ હોય તો તે વ્યક્તિને 'વિશ્વમાનવ' જેવું, વિશ્વવિભૂતિ સમાન સન્માન-ઓળખ અચૂક મળી ગયાં હોત. નૉબેલ પુરસ્કાર પણ અચૂક તેવી વ્યક્તિના કદમમાં મૂકી દેવાયો હોત. પરંતુ આપણી કમનસીબી, આપણી વિચારોની સંકુચિતતા એટલી બધી છે કે આપણે આપણી સારી બાબતને સારી કહેતાં કે સ્વીકારતાં નાનપ અનુભવતા રહ્યા છીએ. સો ટચનું સોનું હોય તોપણ પિત્તળ ગણીને તેની અવગણના કરીએ છીએ.

શાસ્ત્રીજીના 'શતાયુ'ની ઉજવણી થતી હતી ત્યારે તે હવનમાં વિરોધીઓએ હાડકાં નાખવાનું આદર્યું. ત્યારે સખેદ મારે કહેવું પડ્યું હતું કે "કેવી વિકૃત માનસિકતા છે ! કેટલાક લોકોને શાસ્ત્રીજીનું સન્માન થાય તેમાં તકલીફ થાય છે ! દુર્ભાગ્યપૂર્ણ છે, મિત્રો, દુર્ભાગ્યપૂર્ણ છે ! કાં તો તમે અજ્ઞાનમાં જીવો છો. તમને ખબર નથી કે ગુજરાતનું આ એક અણમોલ રત્ન છે. તમને અંદાજ નથી અથવા તો તમે વિકૃત માનસિકતાના શિકાર બન્યા હશો. મને દયા આવે છે. અરે... તમારે તો અમારી સાથે ગૌરવ લેવું જોઈતું હતું. આટલો મોટો પ્રસંગ ઊજવાઈ રહ્યો છે ત્યારે વિરોધપક્ષના લોકો જોડાયા હોત તો કદાચ પ્રસંગનું ગૌરવ વધી જાત. એના બદલે તમે અત્યારે એવો હોબાળો કરો છો કે સરકાર આ કેમ કરે છે ? પ્રજાના પૈસે કેમ કરે છે ? અરે, જે મહાપુરુષે ગુજરાતને આટલું બધું દીધું છે, એને ગુજરાત જેટલું આપે એટલું ઓછું છે. ગુજરાતનું ગૌરવ છે, મિત્રો !"

"આ એ જ લોકો છે... શ્યામજી કૃષ્ણ વર્માનાં અસ્થિ આવ્યાં. ગુજરાતના ક્રાંતિજીવનનું શિરમોર વ્યક્તિત્વ શ્યામજી કૃષ્ણ વર્મા. દેશને આઝાદીના લડવૈયાઓ આપ્યા. અને તેમનાં અસ્થિ ૭૦ વર્ષ સુધી વિદેશની ધરતી પર ઈંતજાર કરતાં હતાં કે હિન્દુસ્થાનનો કોઈ લાલ આવે અને મારાં અસ્થિ આઝાદ હિન્દુસ્થાનની ધરતી પર લઈ જાય. તમને તો સૂઝ્યું નહીં. અમને જ્યારે સૂઝ્યું ત્યારે લઈ આવ્યા. તો તમે જાહેરાત કરી કે અમે શ્યામજી કૃષ્ણ વર્માનાં અસ્થિને ફૂલ નહીં ચઢાવીએ. ભારતમાના એ લાલે, ભારતમાતાની આઝાદી માટે જીવન ખપાવી દીધું હતું. એનાં અસ્થિને પણ ફૂલ ચઢાવતાં તમને શરમ આવતી હતી ! આ તમારી વિકૃતિ !"

"એટલું જ નહીં, મિત્રો, આઝાદીના લડવૈયા વીર સાવરકર સાહિત્યના શ્રેષ્ઠ સર્જક, અણમોલ સાહિત્ય આ દેશને આપનાર મહાપુરુષ. બે-બે જન્મટીપની સજા એક જનમમાં ભોગવનાર ! પરિવારના ત્રણ-ત્રણ ભાઈઓ માત્ર માતૃભૂમિ માટે ફના થઈ ગયા. એમનું તૈલચિત્ર દિલ્હીની પાર્લામેન્ટમાં મુકાય અને તમે જાહેરાત કરો કે એનો બહિષ્કાર કરીશું ! અરે, શું મહાપુરુષોનાં તો અપમાન કરવાનાં ? આટલી વિકૃતિ ! સાર્વજનિક જીવનમાં માતૃભૂમિના કલ્યાણ માટે જેમણે-જેમણે યોગદાન આપ્યું છે, તે સર્વે પૂજનીય છે."

"અમે આજે પણ પંડિત નહેરુનો આદર કરીએ છીએ. એમના વિચારો હશે. એમના જ સમયમાં હિન્દુસ્થાનના, મા-ભારતીના બે ટુકડા થયા. ઘા હજુ પણ રૂઝાતો નથી, તેમ છતાંય એમણે જે રાષ્ટ્રને માટે શ્રેષ્ઠ કામ કર્યાં છે, એનું ગૌરવ આજે પણ છે. અને આમ, ગુજરાતના અણમોલ રત્નને માટે આવા સંકુચિત વિચારોનું આવું પ્રદર્શન સાર્વજનિક જીવનની અંદર ન ચાલે. સાર્વજનિક જીવનની અંદર આવું અપમાન ન હોઈ શકે. શ્રેષ્ઠ પુરુષોનું સન્માન કરવું જોઈએ. શ્રેષ્ઠતાને પૂજીને એમાંથી કશું મેળવવાનો પ્રયાસ કરવો જોઈએ. વિચાર કંઈક હોય, લોકશાહીમાં વિચાર-ભેદ સ્વાભાવિક છે, એમાં ઘૃણાને સ્થાન ન હોય."

દુનિયાના કોઈ દેશમાં શાસ્ત્રીજી હોત અને જો એમનો ૧૦૦મો જન્મદિવસ ઊજવાતો હોત તો વિશ્વભરની ટી.વી. ચેનલો, વિશ્વભરના આરોગ્યશાસ્ત્રીઓ, વિશ્વભરના મનોવૈજ્ઞાનિકો એમને ત્યાં લાઈન લગાવીને ઊભા હોત - જાણવા માટે કે ભાઈ, આ જીવનનું રહસ્ય શું છે ? આપણે ત્યાં આવું કરવામાં ઘણી વાર કેમ આપણે ચૂકી જઈએ છીએ? મને સમજાતું નથી. પણ કોઈને પણ માટે શાસ્ત્રીજીનું જીવન જિજ્ઞાસા પેદા કરે એવું હતું. જ્ઞાનનો અપાર ભંડાર. તમે અનેક જ્ઞાનીઓને જોયા હશે, આ જ્ઞાનીઓમાં પણ આમને તમે જુદા જોઈ શકશો. નાની-નાની વાતમાં એમના અંતરનો જે ઉત્સાહ છે ને, તેનો આપણને સ્પર્શ થાય.

શાસ્ત્રીને હાથમાં ફ્રેક્ચર થયું હતું અને ૧૦૦ વર્ષની ઉંમર હોવા છતાં અમદાવાદ મ્યુનિસિપલ કૉર્પોરેશનની ચૂંટણીમાં મતદાન કરવા પગપાળા નીકળ્યા હતા. આશ્ચર્યની વાત તો એ હતી કે તેમનું બે મતદાન-કેન્દ્રોમાં નામ જ ન હતું તેથી તેઓ લૉ ગાર્ડનના સિવિક સેન્ટર ઉપર જઈને કમ્પ્યૂટરમાંથી પોતાનું મતદાન- કેન્દ્ર જાણીને મત આપવા ગયા હતા. આ સમયે તેમની સાથે એક સાહિત્યકાર હતા. તેઓ મતદાન-કેન્દ્રના મામલે ગુસ્સે થઈ ગયા હતા. ત્યારે શાસ્ત્રીજીએ કહ્યું હતું, "તમે ગુસ્સે ન થાઓ. હજુ મત આપવાનો સમય પૂરો થયો નથી. આપણે મતદાન-મથક શોધી કાઢીને આજે મત આપીશું જ."

આમ, લોકશાહીનો ઇતિહાસ લખાશે ત્યારે શાસ્ત્રીજી ૧૦૦ વર્ષે પણ ચાલીને મત આપવા ગયા અને મતદાન કર્યું હતું, તે ઇતિહાસમાં લખાશે.

પૂજ્ય શાસ્ત્રીજીનું શતાબ્દી વર્ષ રાજ્ય સરકારે સમગ્ર વર્ષ દરમિયાન ઊજવ્યું છે. ઠેરઠેર, ભિન્નભિન્ન સ્વરૂપે આ સાધનાની પ્રેરણા ગુજરાતની આગામી પેઢીને મળે, એના માટે અમે પ્રયાસ કર્યો અને પ્રયાસ કરવામાં અમને ગૌરવ મળ્યું. પૂ. શાસ્ત્રીજીના વિચારો આવનારી પેઢી માટે જીવતા રાખવાનો અમારો પ્રયાસ હતો. પૂ. શાસ્ત્રીજીની સંસ્કૃત માટેની લાગણી, એનું ગૌરવ કરવા માટે આ રાજ્ય સરકાર બનતા પ્રયાસ કરવા માટે સંકલ્પબદ્ધ છે. આવનારા દિવસોમાં આ તપસ્વી જીવનથી, "અખંડ તેજસ્વિતા"ના આ અણમોલ ખજાનાથી ગુજરાતની ભાવિ પેઢી પરિચિત થાય, એના માટે આપણે બધા સહિયારો પુરુષાર્થ કરતા રહીશું.

૨૫૦ ગ્રંથો, ૧૫૦૦ લેખો લખ્યા... પદ્મશ્રી... રણજિતરામ સુવર્ણચંદ્રક વગેરે એવોર્ડ મળ્યા... યુગઋષિનું બિરુદ મળ્યું... "શાસ્ત્રીજી, હવે જીવનમાં કંઈ બાકી રહ્યું છે ?" એવું જ્યારે કોઈએ શાસ્ત્રીજીને પૂછ્યું ત્યારે વિદ્યાર્થી તરીકે જીવન જીવનાર શાસ્ત્રીજીએ કહ્યું હતું કે "કમ્પ્યૂટર શીખવાનું બાકી છે..."

૧૦૧ વર્ષના શાસ્ત્રીજીને સતત એ અફસોસ રહેતો હતો કે મારે કમ્પ્યૂટર શીખવાનું હજુ બાકી છે. પણ તેમની તબિયતે સાથ આપ્યો નહીં. શાસ્ત્રીજીએ શતાબ્દી વર્ષની ઉજવણીના કાર્યક્રમમાં પણ એવો અફસોસ વ્યક્ત કર્યો કે "મારે હજી કમ્પ્યૂટર શીખવું છે... પણ તબિયત સાથ નથી આપતી..." શાસ્ત્રીજીની આ ઇચ્છા અધૂરી રહી છે.

મૃત્યુ માટે પણ જીવી ગયા :

શાસ્ત્રીજીએ ૧૦૧ વર્ષે દેહત્યાગ કર્યો અને અંતિમ ક્ષણ સુધી ન ઉંમર કે ન તેમની અવસ્થાએ તેમના કર્મયોગ પર અસર કરી હતી. અંતિમ ક્ષણોએ પણ તેઓ એટલા જ 'જીવંત' હતા. શાસ્ત્રીજી વૈષ્ણવ-પરંપરાના 'મરજાદી' હતા, એટલે તેમણે પોતાના મૃત્યુ પહેલાં નજીકમાં પડેલો શ્રીનાથજીબાવાનો ફોટો માગ્યો. તેને વંદન કરીને બોલ્યા હતા : "હે ભગવાન, હવે મને બોલાવી લે..." અને પછી અર્ધા કલાકના અંતરે તેમણે એક ઊંડો શ્વાસ લીધો – અને વૈકુંઠવાસી બની ગયા. આ તેમના તપનો, તેમના ઋષિત્વનો પ્રભાવ હતો... કદાચ વ્યક્તિ પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે જીવી તો જાય, પરંતુ ઇચ્છા પ્રમાણે મૃત્યુને પણ ભેટે ! જીવન તો જીવંત જ રાખ્યું, મૃત્યુમાં પણ તેઓ જીવી ગયા... !

શાસ્ત્રીજીના પરિવારમાં ત્રણ દીકરા અને ચાર દીકરીઓ છે, જેનું કુલ ૫૩ જણાંનું કુટુંબ થાય. શાસ્ત્રીજીની તો પાંચમી પેઢી અસ્તિત્વમાં છે, એટલે કે દીકરાના દીકરાના દીકરાને તેમના ખોળામાં રમાડે. શાસ્ત્રીજીએ પાછી પોતાના પિતા અને દાદાની પેઢી તો જોઈ જ હતી. એ રીતે તેમણે આઠ પેઢીની લોહીની સગાઈ જોઈ હતી.

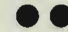
શતાયુ જીવનદર્શનને આત્મસાત્ કરનારા શાસ્ત્રીજીએ હિન્દુ સંસ્કૃતિના સંસ્કારપુરુષ તરીકેની જીવનની ક્ષણેક્ષણ જીવી જાણી છે. વેદ-સંસ્કૃતિનાં અધ્યયન- અભ્યાસના ક્ષેત્રે જ નહીં, પરંતુ સંશોધન અને કેળવણીના ક્ષેત્રે પણ શાસ્ત્રીજીની જ્ઞાન-સંપદાનો જોટો જડે તેમ નથી. કર્મયોગીની સાત્ત્વિક જીવનશૈલી સો વર્ષ જીવીને તેમણે આગવી પ્રેરણા પૂરી પાડી હતી. તેમનો નશ્વર દેહ ભલે પંચમહાભૂતમાં વિલીન થયો, પરંતુ સાક્ષરદેહ, શાસ્ત્રીજીનો દેદીપ્યમાન આત્મા અજર-અમર રહેવાનો છે.

જીવનના કપરામાં કપરા સમયમાં પણ તેઓ ક્યારેય નિરાશ થયા ન હતા. સતત આશાવાદી રહી હંમેશાં આનંદમાં રહેવાની તેમની વૃત્તિ આપણા જીવનમાં ઉતારવા જેવી છે.

રાજ્ય સરકારે તેઓનાં સો વર્ષ પૂર્ણ થવા નિમિત્તે શતાબ્દી ઊજવી હતી. ઉપરાંત ભવિષ્યમાં પણ તેમનાં કાર્યો ભાવિ પેઢીને પ્રેરણારૂપ થાય તેવાં કાર્ય કરવાની ઇચ્છા વ્યક્ત કરી હતી.

રાજ્ય સરકારે શતાયુ શાસ્ત્રીજીનું જાહેર અભિવાદન કરવાનો જે ઉપક્રમ અપનાવ્યો તે એક સમયોચિત કાર્ય હતું અને એ રીતે તેણે એક ઉમદા વ્યક્તિત્વ ધરાવતા તપોમૂર્તિ પંડિત અને સારસ્વત વ્યક્તિનું અભિવાદન કર્યું છે. જો આ કાર્ય ચૂકી જવાયું હોત તો ગુજરાતની અસ્મિતા માટે કલંકરૂપ ગણાત; પરંતુ સદ્નસીબે આ અવસર સાંપડ્યો તેને હું મારા જીવનની એક મહત્ત્વપૂર્ણ તક માનું છું. ગુજરાતની ભાવિ પેઢીના તેઓ સદીઓ સુધી માર્ગદર્શક બની રહેશે અને તેમણે જે જ્ઞાનવારસો આપ્યો છે તે ગુજરાતના ગૌરવમાં ઉજ્જ્વળ સોપાન બની રહેશે એમ મારું સ્પષ્ટ માનવું છે.

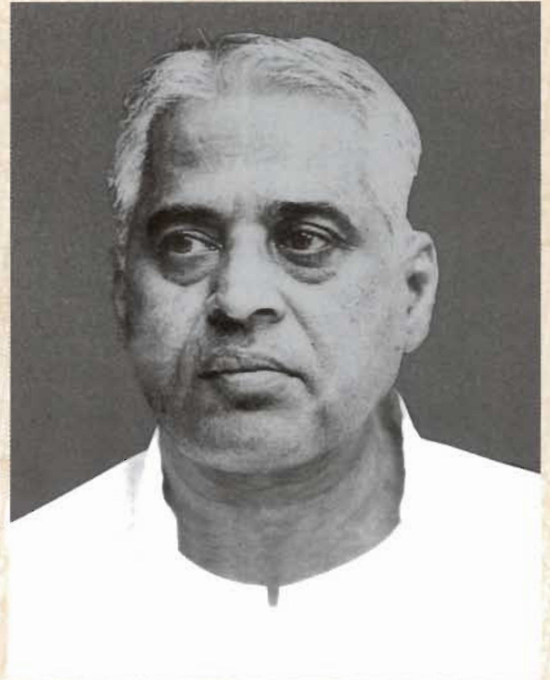
મારા જીવનમાં મને શાસ્ત્રીજીની હર પળ અનુભૂતિ થાય છે. નરસિંહ મહેતા દ્વારા ૪૦૦ વર્ષ પહેલાં લખાયેલ 'વૈષ્ણવજન'ને શાસ્ત્રીજીએ જીવી જાણ્યું હતું. તેઓ નિરાશાવાદી નહોતા. તે સતત આશાવાદી હતા અને આત્મવિશ્વાસ આપે તેવું જીવન જીવતા અને પ્રત્યેક પળને ઉમંગથી આવકારતા હતા. તેમની આશાવાદની પૂંજીને વધુ શક્તિ સાથે જીવનમાં ઉતારવાની છે. તેઓ દુનિયાના કોઈ બીજા દેશમાં હોત તો તેમનું નામ લઈને દેશ નાચતો હોત. મને સંતોષ છે કે રાજ્ય સરકારે આ મનીષીની શતાબ્દી ઊજવી અને ભવિષ્યમાં પણ તેમનાં કાર્યો ભાવિ પેઢીને પ્રેરણારૂપ થાય તેવાં કાર્ય કરતા રહીશું.

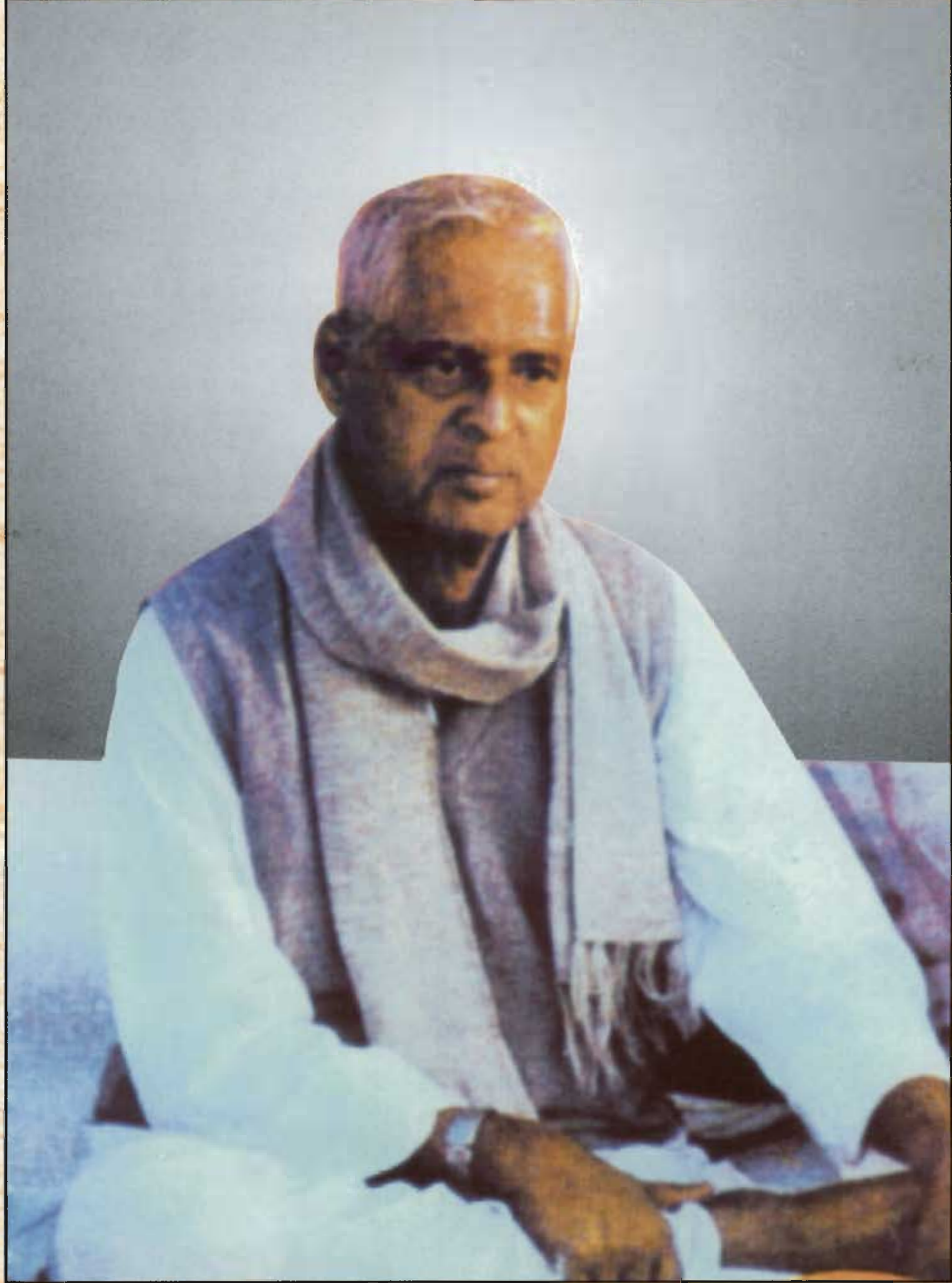




૫

સંઘ-યોગી વકીલસાહેબ
લક્ષ્મણરાવ ઈનામદાર
(મા. વકીલસાહેબ)

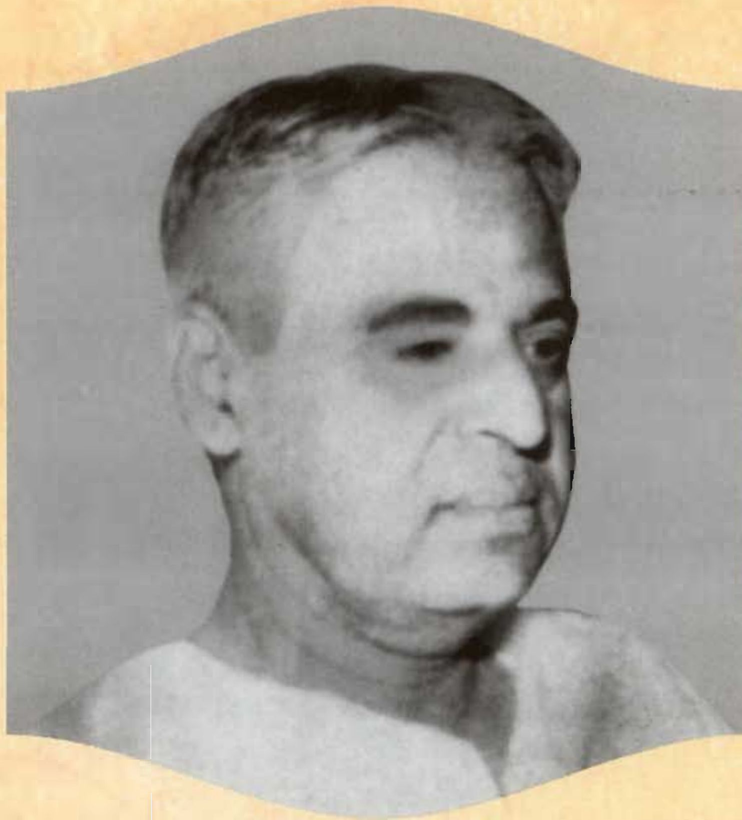




મા. શ્રી લક્ષ્મણરાવ માધવરાવ ઇનામદાર (વકીલસાહેબ)

ચાલીસ વર્ષનું અખંડ જાહેરજીવન અને તેમાંય જ્યારે પ્રત્યેક પળ સમાજમય બનીને જિવાતી હોય, લોકો વચ્ચે જ વ્યતીત થતી હોય ત્યારે તો કેટકેટલા પ્રશ્નો, પ્રસંગો, વાતો, અનુભવોની હારમાળાના પહાડ ખડકાયા હોય ! સહુના પોતાના અનુભવ હોય, જાહેરજીવનની પ્રત્યેક ઘટનાની પ્રગટ-અપ્રગટ મુલવણી હોય, ક્યારેક ઉમંગ હોય, ક્યારેક વેદના હોય, ક્યારેક રોષ હોય, ક્યારેક આશા, ક્યારેક નિરાશા... શું ન હોય ? માનવીને હોય તે બધું જ વકીલસાહેબને પણ હોય જ. ચાલીસ વર્ષના જાહેરજીવનને સ્મૃતિપટ ઉપર કંડારતાં જ ઘટનાઓની ઘટમાળ ચાલી જતી દેખાય છે.

દિવ્ય ધ્યેય કી ઓર તપસ્વી
જીવનભર અવિચલ ચલતા હૈ,
અમર તત્ત્વ કી અમિટ સાધના
પ્રાણોં મેં ઉત્સર્ગ કામના
જીવન કા શાશ્વત વ્રત લેકર
સાધક હંસ હંસ બઢ ચલતા હૈ





ડૉ. હેડગેવાર ભવન, કર્ણાવતી

શેક્સપિયરે એક જગ્યાએ લખ્યું છે : 'નામમાં તે વળી વિશેષ શું છે ? ગુલાબને તમે ગુલાબ નામથી સંબોધો કે બીજા કોઈ નામથી, એની સુગંધ તો એ ને એ જ રહેવાની.' શેક્સપિયરની આ વાતમાં અમુક અંશે તથ્ય છે, પરંતુ એમનું આ વિધાન સર્વાંશે સત્ય નથી. નામનું પણ ઘણું મહત્ત્વ હોય છે. આપણો અનુભવ પણ એવો જ નથી ? દા. ત., રવિશંકર શિવરામ વ્યાસ. આ નામ સાંભળીને આપણને કંઈ વિશેષ બોધ થતો નથી, પરંતુ 'રવિશંકર મહારાજ' કહેતાંની સાથે જ જંગલો અને ડુંગરાઓ ખૂંદીને 'માણસાઈના દીવા' પ્રગટાવતા એક મહાન તપસ્વીની મૂર્તિ નજર સામે આવી જાય છે. અમૃતલાલ વિઠ્ઠલદાસ ઠક્કર એ નામ સાથે આપણને કંઈ લેવાદેવા હોય એવું લાગતું નથી, પણ 'ઠક્કરબાપા' કહેતાંવેંત આપણે એક અનોખા ભાવવિશ્વમાં પહોંચી જઈએ છીએ. દરિદ્રનારાયણમાં પરમેશ્વરનાં દર્શન કરી, તેની સેવામાં જીવનની કૃતાર્થતા માનતા એ કર્મયોગી સામે આપણું માથું ઝૂકી જાય છે.

એ જ પ્રમાણે 'લક્ષ્મણ માધવ ઈનામદાર' એ નામ ગુજરાતમાં કેટલા લોકો જાણતા હશે ? પણ 'વકીલસાહેબ' કહો એટલે ગુજરાતનાં માત્ર શહેરોમાં જ નહીં, પરંતુ ગામડાંઓમાં પણ એમને ઓળખતા – આપ્તજન તરીકે ઓળખતા કેટલાક લોક જરૂર મળી આવશે. રવિશંકર શિવરામ વ્યાસ 'રવિશંકર મહારાજ' બન્યા કે અમૃતલાલ વિઠ્ઠલદાસ ઠક્કર 'ઠક્કરબાપા' બન્યા એ કોઈ જાદુઈ કીમિયાથી બન્યા નથી. એની પાછળ એમની પ્રદીર્ઘ તપસ્યા રહેલી છે. લક્ષ્મણરાવ ઈનામદાર આપણા 'વકીલસાહેબ' બન્યા તેની પાછળ આવી જ તપસ્યા છે, અથાક પરિશ્રમ છે, કાર્ય અને કાર્યક્ષેત્ર સાથેની સંપૂર્ણ સમરસતા છે.

આ તપસ્વી જીવનયાત્રા સાથે તડકી-છાંયડીવાળા ઇતિહાસની છાયા છે. પારિવારિક અવસ્થા અને સામાજિક અવસ્થાની અસર પણ વર્તાય છે. સમકાલીન ઘટનાઓને સત્યનાં ત્રાજવે તોલવી અને આવી ઘટનાઓમાંથી ઉચ્ચ આદર્શોને વધુ પ્રખર બનાવવા એ સહેલું કામ નથી. વકીલસાહેબના બાલ્યકાળને જોઈએ તો એ વાતનાં દર્શન થયા વગર રહેતાં નથી.

વકીલસાહેબનું જન્મસ્થાન મહારાષ્ટ્રના સતારા જિલ્લામાં આવેલું ગામ ખટાવ. પિતાજીનું નામ માધવરાવ. એમની મૂળ અટક ખટાવકર હતી, જે પાછળથી ઈનામદાર થઈ. આની પાછળ પણ ઇતિહાસ છે. જે વ્યક્તિએ કે કુટુંબે 'સ્વરાજ'ની વિશેષ સેવા કરી હોય તેને અમુક ગામ અથવા જમીન ઈનામ આપવાની પ્રથા મહારાષ્ટ્રમાં હતી. વકીલસાહેબના એક પૂર્વજ શ્રી કૃષ્ણરાવ ખટાવકરે આવી 'સ્વરાજ'ની સેવા કરેલી તેથી છત્રપતિ શાહુ મહારાજે – છત્રપતિ સંભાજી મહારાજના સુપુત્ર અને શિવાજી મહારાજના પૌત્રે – તેમને 'સરદાર' ખિતાબ અને અમુક જમીન ઈનામ આપેલી. ઈનામ મળેલી જમીનના મહેસૂલનો અમુક ભાગ ઈનામદારને મળતો. કાળે કરીને ઈનામ જતું રહ્યું, ઈનામદાર અટક માત્ર કાયમ રહી.



વકીલસાહેબનો જન્મ ૧૯૧૭ની સાલમાં ૨૧ સપ્ટેમ્બરને દિવસે થયો. ભારતીય કાલગણના મુજબ તે દિવસે ભાદરવા માસની સુદ પાંચમ એટલે ઋષિપંચમી હતી. વકીલસાહેબને કુલ સાત ભાઈઓ અને બે બહેનો. વકીલસાહેબનો ક્રમાંક ભાંડુઓમાં ત્રીજો.

વકીલસાહેબના પિતાજીનું કુટુંબ ખૂબ મોટું હતું. પિતા માધવરાવની છ બહેનોમાંથી ચાર બહેનો અકાળે વિધવા થઈને પોતપોતાનાં બાળકો લઈને પિયર આવેલી. માધવરાવ કેનાલ ઈન્સ્પેક્ટર હતા. તેમની એક ગામથી બીજે ગામ અવારનવાર બદલી થતી, તેથી કુટુંબ ખટાવમાં જ રહેતું.

વકીલસાહેબના શિક્ષણનો પ્રારંભ જરા મોડેથી થયો. તે જમાનામાં સાત વરસ પૂરાં ન થાય ત્યાં સુધી શાળામાં પ્રવેશ મળતો નહોતો, તેથી તેમનું નામ શાળામાં વહેલું દાખલ થાય એમ ન હતું. ૧૯૨૩માં તેમના પિતાશ્રીની બદલી કિર્લોસ્કરવાડી પાસેના દુધોંડી ગામમાં થઈ. ત્યાં તેમને શાળામાં પ્રવેશ મળ્યો. બે વરસ ત્યાં ભણીને તેઓ દાદાજી પાસે ખટાવ રહેવા આવ્યા.

વકીલસાહેબના પિતાશ્રીએ ઘરનાં બાળકોના શિક્ષણ માટે સતારામાં એક મકાન ભાડે લીધું હતું. ચોથું ધોરણ પાસ થયા પછી વકીલસાહેબ પણ ત્યાં જ ભણવા ગયા. તેઓ ૧૯૨૯માં સાતારાની ન્યૂ ઈંગ્લીશ સ્કૂલમાં દાખલ થયા.

વિશાળ સંયુક્ત કુટુંબને કારણે મર્યાદિત આવક ધરાવતા ઈનામદાર પરિવારની આર્થિક દૃષ્ટિએ ખેંચતાણ થાય એ સ્વાભાવિક હતું, પરંતુ આમાંથી અમુક દૂરગામી લાભ પણ થયા - 'કુટુંબમાં આટલા બધા લોકો ! અલગઅલગ પ્રકૃતિના, અલગઅલગ સમજના. ઉંમરમાંય કેટલો ફરક ! પરંતુ એ બધાંય પોતાના જ છે એ ખ્યાલમાં રાખીને એમના માટે થોડું કષ્ટ સહન કરવું પડે, થોડું ઘસાવું પડે તેમાં પણ એક જાતનો આનંદ હોય છે. આ અણમોલ દૃઢ સંસ્કાર તેમના ઉપર નાનપણથી જ થયેલા. એક રીતે કહીએ તો સંપૂર્ણ હિન્દુ સમાજ મારું કુટુંબ છે એ સંઘની શિખામણનો પાયો આ કાળમાં જ નંખાઈ ગયો હતો.'

વકીલસાહેબના પ્રત્યક્ષ સામાજિક જીવનનો પ્રારંભ સાતારાથી થયો એમ કહી શકાય. સાતારામાં અભ્યાસ ચાલુ હતો અને સાથેસાથે મિત્રમંડળો પણ જામતાં હતાં. વકીલસાહેબને કસરતનો શોખ નાનપણથી જ હતો. ક્રીડામંડળો ઊભાં કરવામાં, અલગઅલગ કાર્યક્રમો ગોઠવવામાં એમને વિશેષ રુચિ હતી. કબડ્ડી અને ખો-ખોના તેઓ નિષ્ણાત ખેલાડી હતા. અનેક વાર તેઓ સંઘનાયક પણ રહી ચૂકેલા, અને એ રમતોની હરીફાઈમાં તેમના સંઘે (મંડળે) તે જમાનામાં અનેક ઈનામો પણ મેળવેલાં. પોતાના પુરુષાર્થથી રમતગમતના ક્ષેત્રમાં અનેક ઈનામો જીતી લઈ વકીલસાહેબે પોતાની ઈનામદાર અટક સાર્થક કરી હતી.

ભાગાનગર સત્યાગ્રહ

વકીલસાહેબની જીવન-તપસ્યા ચાલુ જ હતી. એક બાજુ અભ્યાસ, બીજી બાજુ સંઘકાર્ય. વકીલસાહેબ ઈન્ટર આર્ટ્સ પાસ થયા પછી એલએલ.બી.ના અભ્યાસક્રમમાં દાખલ થયા. એલએલ.બી.ની પહેલી પરીક્ષા પાસ પણ થયા, પણ એ અરસામાં જ ૧૯૩૯માં ભાગ્યનગર(હૈદરાબાદ)નો સત્યાગ્રહ શરૂ થયો હતો. એ સત્યાગ્રહ શા માટે હતો ? કોણે આદર્યો હતો ? વકીલસાહેબના જીવનમાં આ ભાગાનગર 'સત્યાગ્રહ પર્વ' તરફ વળતાં પહેલાં એ સત્યાગ્રહની થોડી પાર્શ્વભૂમિ જોવી પડશે. એક સમયે આપણા દેશમાં જે પાંચસો-સાડાપાંચસો દેશી રાજ્યો હતાં તેમાં હૈદરાબાદ એક મોટું રાજ્ય હતું. રાજ્યની બહુસંખ્ય પ્રજા હિંદુ, પરંતુ શાસક મુસલમાન. નિઝામનું શાસન એટલું જુલમી હતું કે 'નિઝામી રાજ' એ જુલમી શાસનનો પર્યાયવાચી શબ્દપ્રયોગ બની ગયો હતો. તેની સામે ત્યાંની પ્રજા અવારનવાર માથું ઊંચકવાની કોશિશ કરતી, પણ નિઝામ સરકાર તેને દર વખતે સખત હાથે દાબી દેતી. છેવટે સ્વાતંત્ર્યવીર સાવરકરે નિઝામની સામે નિઃશસ્ત્ર પ્રતિકાર-આંદોલન શરૂ કર્યું. પાછળથી આર્યસમાજ પણ આ સત્યાગ્રહમાં જોડાયો. વીર સાવરકરની હાકલને પ્રતિસાદ આપી દેશના ખૂણેખૂણેથી સત્યાગ્રહીઓની ટુકડીઓ હૈદરાબાદમાં દાખલ થવા લાગી. પૂનાના તે વખતના એક અગ્રગણ્ય વકીલ અને હિંદુ મહાસભાના આગેવાન સ્વર્ગસ્થ લ. બ. ભોપટકરની આગેવાની હેઠળ લગભગ ૧૫૦ કૉલેજિયન યુવકો સત્યાગ્રહમાં જોડાયા. વકીલસાહેબે પણ પોતાનો એલએલ.બી.નો અભ્યાસ અધૂરો મૂકી આ ટુકડી સાથે સત્યાગ્રહમાં ઝંપલાવ્યું.

એ જ પ્રમાણે 'લક્ષ્મણ માધવ ઈનામદાર' એ નામ ગુજરાતમાં કેટલા લોકો જાણતા હશે ? પણ 'વકીલસાહેબ' કહો એટલે ગુજરાતનાં માત્ર શહેરોમાં જ નહીં, પરંતુ ગામડાંઓમાં પણ એમને ઓળખતા – આપ્તજન તરીકે ઓળખતા કેટલાક લોક જરૂર મળી આવશે. રવિશંકર શિવરામ વ્યાસ 'રવિશંકર મહારાજ' બન્યા કે અમૃતલાલ વિઠ્ઠલદાસ ઠક્કર 'ઠક્કરબાપા' બન્યા એ કોઈ જાદુઈ કીમિયાથી બન્યા નથી. એની પાછળ એમની પ્રદીર્ઘ તપસ્યા રહેલી છે. લક્ષ્મણરાવ ઈનામદાર આપણા 'વકીલસાહેબ' બન્યા તેની પાછળ આવી જ તપસ્યા છે,

`પ્રાંત-સ્વયંસેવક' :

સંઘકાર્યની સફળતાના મૂળમાં સતત કાર્ય, સાતત્યપૂર્ણ કાર્યનું મહત્ત્વ છે. સંઘજીવનમાં વધુમાં વધુ સમય આપવાની પરંપરા રહી છે. અવનવી યોજના દ્વારા સ્વયંસેવકોને સંઘકાર્ય માટે વધુ સમય આપવા માટે પ્રેરિત કરવામાં આવે તેવી જ એક યોજના એટલે 'પ્રાંત-સ્વયંસેવક'ની યોજના. ઓછામાં ઓછું એક વરસ પ્રાંતમાં સંઘની યોજના મુજબ કહેવામાં આવે તે સ્થાને જઈને પ્રચારક તરીકે કામ કરવું – તેવી યોજના હેઠળ મહારાષ્ટ્રમાંથી કેટલાય સ્વયંસેવકો 'પ્રાંત-સ્વયંસેવક' તરીકે બહાર પડ્યા. વાતાવરણ આ રીતે ચારે તરફ સંઘમય થઈ રહ્યું હતું, પ્રચારક તરીકે નીકળવાની જાણે

હોડ લાગી હતી, ત્યારે વકીલસાહેબ થોડા જ સ્વસ્થ રહી શકવાના હતા ? તેઓ પણ સંઘની યોજના મુજબ ૧૯૪૩માં ગુજરાતમાં નવસારી આવી પહોંચ્યા. ત્યારે તેમની ઉંમર હતી ફક્ત ૨૫ વર્ષ !



વકીલસાહેબનું બંધુવૃંદ (જેમાંના ત્રણ ભાઈઓ તો સંઘના પ્રચારક નીકળ્યાં)

સુવર્ણાધ્યાયના શ્રીગણેશ :

સંઘમાં એક ગીત છે : 'શપથ લેના તો સરલ હૈ, પર નિભાના હી કઠિન હૈ.' (પ્રતિજ્ઞા લેવી સહેલી છે; તેનું પાલન કરવું અઘરું છે.) હશે. પણ વકીલસાહેબે એ અઘરા કામની દિશાએ મંડાણ કર્યાં. એમના જીવનમાં એક નવા અધ્યાયનો પ્રારંભ થયો; અને ત્યાર પછીનો ઘટનાક્રમ ધ્યાનમાં લેતાં એમ કહેવું પડશે કે ગુજરાતના ઇતિહાસમાં પણ એક નવા અધ્યાયનો – સુવર્ણાક્ષરે લખાય તેવા અધ્યાયનો પ્રારંભ થઈ ચૂક્યો હતો.

તેમના આદર્શમય જીવનનો ચિતાર એક દુર્ઘટના પરથી આવે... એવા સંઘના પ્રવાસમાં ગયેલા બે સ્વયંસેવકો નાહવા પડ્યા અને ડૂબી ગયા. વકીલસાહેબને અફસોસ થયો કે એ સ્વયંસેવકોને હું કેમેય કરીને બચાવી ન શક્યો. એમને બદલે હું જ ડૂબી ગયો હોત તો સારું. મરણ પામેલા સ્વયંસેવકોનાં સગાંસંબંધીઓ ખૂબ જ ઉશ્કેરાયાં હતાં. ખૂબ કટુ શબ્દો સંભળાવતા હતા. વકીલસાહેબ એ બધું શાંતિથી સાંભળી લઈ એમને સાંત્વન આપતા હતા. એક મૃત સ્વયંસેવક લક્ષ્મણની બાને તો સાંત્વન આપતાં એમણે કહ્યું : "મામી, (લક્ષ્મણની બાને મામી કહેતા) તમારો લક્ષ્મણ ગયો, પણ હું તમારો જ લક્ષ્મણ છું." વકીલસાહેબે પોતાનું આ વચન મામી જીવતાં હતાં ત્યાં સુધી પાળ્યું હતું.

કસોટીનો કાલખંડ :

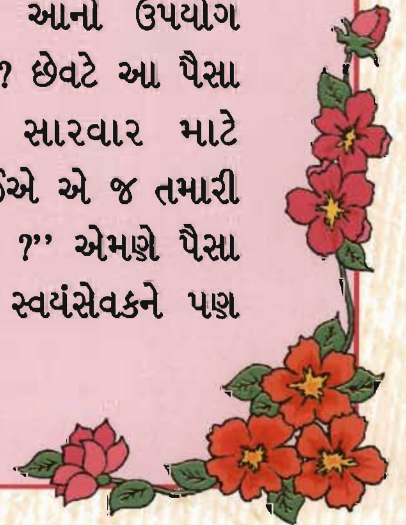
૧૯૫૨માં વકીલસાહેબના યુવાન હાથોમાં ગુજરાતના સંઘકાર્યની ધુરા આવી. હજુ તો હમણાં જ સંકટકાળમાંથી બહાર આવેલ સંઘકાર્યનો વિસ્તાર કરવાનું કામ આજના જેટલું સહેલું નહોતું. વિકટ આર્થિક વિટંબણાઓના કારણે અનેક પ્રચારકોને પોતાના રોજગાર-ધંધા માટે પાછા વળવું પડ્યું હતું. સ્વતંત્રતા પછી સામાન્ય જનમાનસમાં પણ 'હવે તો બધું થઈ ગયું, હવે તો આપણી સરકાર આવી ગઈ, હવે આપણે તો કશું કરવાનું રહેતું નથી,' એવો ભાવ ધીરેધીરે પ્રબળ બનવા લાગ્યો હતો. યુવાવસ્થા છતાંય વકીલસાહેબને ધૈર્ય સહજસાધ્ય હતું. તેમના આ ગુણે સંઘકાર્યને કોઈ આંચ આવવા ન દીધી. ત્રણ-ચાર વર્ષના ગાળામાં જ ૧૫૦ જેટલાં સ્થાનો ઉપર સંઘશાખાઓ પૂર્વવત્ ચાલુ થઈ ગઈ. દર વર્ષે થતા સંઘ-શિક્ષા-વર્ગમાં ૧૫૦થી ૨૦૦ સુધીની સંખ્યામાં તરુણો જુસ્સાભેર ભાગ લેતા થયા હતા.

સંઘયોગીની સાધના :

વકીલસાહેબનું અખંડ કાર્યરત, પ્રેરક, પ્રભાવી છતાં પ્રસન્ન વ્યક્તિત્વ જોઈને તેમના સંપર્કમાં આવતા અમુક જણાને લાગતું કે તેઓએ કોઈ વિશેષ સાધના કરીને કોઈ આધ્યાત્મિક સિદ્ધિ હાંસલ કરેલી હોવી જોઈએ.

વકીલસાહેબ નિત્ય કસરત, ધ્યાન, પ્રાણાયામ, ગીતાપાઠ, સપ્તાહમાં અમુક ઉપવાસ કે એકટાણાં વગેરે બાબતોમાં અતિશય નિયમિત હતા, આગ્રહી હતા. છતાં ઉપરની માન્યતામાં આધ્યાત્મિક સાધના થકી જે લોકોત્તર સિદ્ધિ સૂચિત છે એવી કોઈ સિદ્ધિ તેમની પાસે હતી નહીં. એ

"તમારો આટલો બધો આગ્રહ છે તો હું પૈસા રાખીશ. આપણે આપણા ગરીબ બાંધવો માટે 'મેડિકલ સેન્ટર' ચલાવીએ છીએ, તેમાં આનો ઉપયોગ કરીશું. કેમ ? છેવટે આ પૈસા તબિયતની સારવાર માટે વાપરવા જોઈએ એ જ તમારી ઇચ્છા છે ને ?" એમણે પૈસા લીધા. પેલા સ્વયંસેવકને પણ સંતોષ થયો.



દિશામાં એમણે કોઈ દિવસ પ્રયાસ પણ કરેલા નહીં.

`ડિગો ન અપને પ્રણસે' :

વકીલસાહેબ જેવા પુરુષોના લોકોત્તર કાર્યકર્તૃત્વ અંગે ઘણી વાર આપણે બીજી રીતે પણ વિચારતા હોઈએ છીએ. આપણે એમ માનતા હોઈએ છીએ કે, કોઈ પૂર્વભવના સંસ્કાર કે તપસ્યાને કારણે જ આવા પુણ્યાત્માઓ આટલી ઊંચાઈએ પહોંચતા હોય છે. આવા મહાપુરુષો આપણા માટે વંદનીય ખરા, પણ તેમની કક્ષાએ પહોંચવું આપણા જેવા સામાન્ય અદના માણસોનું કામ નથી. પોતાની નિષ્ક્રિયતા ઉપર ઢાંકપિછોડો કરવા માટે ઉપજાવી કાઢેલી આ દલીલ છે એવો આક્ષેપ આ લોકો ઉપર ઓઢાડવો તે તેમના પ્રત્યે અન્યાયભર્યું કહેવાય. મોટે ભાગે લોકોની આ પ્રામાણિક માન્યતા હોય છે, પણ આ વિચાર આપણી સંસ્કૃતિના *उद्धरेदात्मनात्मानम्* અથવા 'નર કરણી કરે તો નરનો નારાયણ થાય' આ શ્રેષ્ઠ દષ્ટિબિંદુ સાથે બિલકુલ બંધબેસતો નથી. ખરું જોતાં વકીલસાહેબનું વ્યક્તિત્વ

ડિગો ન અપને પ્રણસે તો ફિર
સબ કુછ પા સકતે હો પ્યારે.
તુમ ભી ઊંચે બન સકતે હો
છૂ સકતે હો નભ કે તારે.

આ ગીતની પંક્તિઓમાં આપેલા આશ્વાસનનું સાક્ષાત્ પ્રતીક છે. પૂજનીય સરસંઘચાલક મા. બાળાસાહેબ દેવસરજીએ સ્વર્ગસ્થ વકીલસાહેબને શ્રદ્ધાંજલિ અર્પણ કરતી વખતે આ સંદર્ભમાં જે વિચારો રજૂ કર્યા હતા તે વકીલસાહેબના લોકોત્તર ગુણવિશેષોનું રહસ્ય સમજી લેવા માટે જોવા જેવા છે. પૂજનીય બાળાસાહેબે કહ્યું હતું : 'અમુક થોડા ગુણો તેમનામાં અંગભૂત હશે, જન્મની સાથે જ તેઓ લેતા આવ્યા હશે, પરંતુ બાકી જે આટલા બધા ગુણો એમનામાં આપણને જોવા મળે છે તે તો એમણે નિરંતર પ્રયત્નમાંથી પ્રાપ્ત કર્યા હોવા જોઈએ. અલૌકિક ગુણવિશેષ તો કોઈ પણ માણસોને પ્રયત્ન કરીને જ પ્રાપ્ત કરવા પડે છે.'

સ્વયંસેવકના ઘડતરમાં અધિકારીઓના આદર્શ આચાર-વિચાર ઉપરાંત વ્યક્તિગત વાતચીત, પ્રાસંગિક બેઠકો અને અવારનવાર થતા બૌદ્ધિક વર્ગોનો પણ ફાળો હોય છે. આવી વાતચીતમાં અને બેઠકોમાં તેમ જ બૌદ્ધિક વર્ગોમાં વિષય સ્પષ્ટ કરતી વખતે વકીલસાહેબ રોજના વ્યવહારના દાખલા આપતા અને તેથી એ વિષય સાંભળનાર ઉપર સહજ રીતે અસર કરી જતો. આ સંદર્ભમાં એક દાખલો જોવા જેવો છે. એક કાર્યકરને એક સાપ્તાહિકના તંત્રી તરીકે કામ સોંપવાની વકીલસાહેબની યોજના હતી. એ કાર્યકર આમ બાહોશ હતા, પણ વૃત્તપત્ર-ક્ષેત્રનો એમને જરા સરખોય અનુભવ ન હતો, તેથી તે આ જવાબદારી સ્વીકારવા તૈયાર થતા ન હતા. વકીલસાહેબે એમને કહ્યું : 'તમારી વાત સાચી છે, હું માન્ય કરું છું. પરંતુ તંત્રીપદે કોઈની ગોઠવણ કરવાની જરૂર છે; અને બીજું કોઈ પણ નવા ક્ષેત્રમાં પ્રવેશ કરતી વખતે શરૂઆતમાં આ મુશ્કેલી રહેવાની જ. થોડા દિવસ અનુભવ તો લઈ જુઓ. બજી તો બંસરી નહીં તો બાંસ તો હૈ હી !' વકીલસાહેબનું સૂચન શિરોમાન્ય ગણી એ ભાઈએ જવાબદારી સ્વીકારી લીધી. આજે એ એક સારા તંત્રી તરીકે ઓળખાય છે.

વ્યાપક સંપર્ક :

વ્યાપક સંપર્ક એ વકીલસાહેબની મોટી વિશેષતા હતી. સંઘના ક્ષેત્ર - પ્રચારક અને ત્યાર પછી અખિલ ભારતીય શ્રેણીના અધિકારી થયા પછી પણ તેમના પ્રવાસમાં નિશ્ચિત કાર્યક્રમો પછીનો બાકીનો સમય આવા સંપર્કમાં જ પસાર થતો. અમુક કારણસર પ્રત્યક્ષ સંઘકાર્યની જવાબદારીમાંથી અળગા રહેલા કે થયેલા સ્વયંસેવકોના પરિવારમાં પણ જવાનું ચૂકતા નહીં. વિશેષતા તો એ છે કે જ્યારે તેઓ પૂજનીય સરસંઘચાલક કે માનનીય સરકાર્યવાહ જેવા ટોચના અખિલ ભારતીય અધિકારીઓ સાથે પ્રવાસમાં હોય ત્યારે પણ નિશ્ચિત કાર્યક્રમો પૂર્ણ થતાં તેઓ સમય કાઢીને જે-તે સ્થાન પર જૂના-નવા સ્વયંસેવકોને ઘરે પહોંચી જતા. આ બહોળા સંપર્કને લીધે જ તેઓ ગુજરાતના સંઘ-પરિવારમાં નિર્વ્યાજ પ્રેમ, અસીમ સ્નેહ અને અનુપમ આત્મીયતાનું પ્રતીક બન્યા.



સહ સરકાર્યવાહક મા. યાદવરાવ જોષી સાથે ગોષ્ઠિ

ભ...લા... માણસ :

૩૫ વર્ષના આ કાર્યકાળ દરમ્યાન તેમણે અનેક જવાબદારીઓનું વહન કર્યું છે. ૧૯૫૨થી ૧૯૭૩ સુધી

તેમણે ગુજરાતમાં પ્રાંતપ્રચારક તરીકે અને પછીથી ક્ષેત્રપ્રચારક (ગુજરાત, મહારાષ્ટ્ર, નાગપુર, વિદર્ભ) તરીકે સંઘકાર્યને માર્ગદર્શન આપ્યું હતું.

૧૯૪૮ના સંઘના પ્રતિબંધ વખતે કાર્યકરો પર અનેક આફતો આવી પડી હતી, તેમાંય ગુજરાતમાં કામ કરતા મહારાષ્ટ્રીયન સ્વયંસેવકોના જીવન-મરણના પ્રશ્નો ઊભા થયા હતા તેવે વખતે તેમણે ભૂગર્ભમાં રહીને સંઘના પ્રતિબંધ વિરુદ્ધ ચાલેલા સત્યાગ્રહનું સફળ સંચાલન કર્યું. આવી જ બીજી આફત ૧૯૭૫ની કટોકટીની. આ વખતે પણ તેમણે ભૂગર્ભમાં રહીને યોગ્ય માર્ગદર્શન દ્વારા ધાર્યું પરિણામ મેળવવામાં સફળતા પ્રાપ્ત કરી. આ બંને સંઘર્ષોમાં તેમના અસીમ ધૈર્યનાં દર્શન સ્વયંસેવકોને દર્શન થયાં.

તેમનું આ તપસ્વી વ્યક્તિત્વ સાથી કાર્યકરોના વિકાસ અને સહાનુભૂતિ માટે સતત તત્પર રહેતું. નાનામાં નાના સ્વયંસેવકથી માંડી મોટામાં મોટા કાર્યકરની પણ જો ભૂલ થઈ હોય તો જરા પણ ઉગ્ર થયા વગર અને તેમના હંમેશના પ્રિય શબ્દ ''ભ...લા...માણસ...!'' કહેવું એ જાણે એમનો ઠપકાનો મોટામાં મોટો શબ્દ હતો. નાનામાં નાના કાર્યકરની ચિંતાનો તેમનો સ્વભાવ પણ અનોખો હતો.

નમસ્તે નમસ્તે... :

વકીલસાહેબનું આકર્ષક વ્યક્તિત્વ અનેક યુવાનોનું પ્રેરણાકેન્દ્ર બન્યું. તેમના વ્યક્તિત્વથી પ્રભાવિત એક વડીલ રાજપુરુષે એક વાર વાતચીતમાં કહ્યું કે ''આ છોકરો દરરોજ મારી ઑફિસેથી શાખામાં જવા માટે પસાર થાય. મેં તેનો પરિચય કર્યો. હવે દરરોજ ઑફિસમાં 'નમસ્તે નમસ્તે' કહેવા આવવું એ તેનો ક્રમ બની ગયો. મને પણ તેના પ્રત્યે જબરું આકર્ષણ થયું છે. કોઈક વાર હું સોડા પણ પાતો. ત્યારે મને



મા. વકીલસાહેબના જન્મ દિવસે પૂ. બાળાસાહેબ દેવરસજી દ્વારા અભિવાદન (મોરબી)

ખબર પણ નહોતી કે આ યુવાન 'નમસ્તે, નમસ્તે'માં મારા આખા જીવનને તેના રંગમાં રંગી નાખશે ! અને ખરેખર જ આજે મને તેમના પગ પાસે બેસવામાં ગૌરવ થાય છે.''

સંઘકાર્ય તો જીવનભર છે...અત્યારે આ કરો !

૧૯૭૧ના વર્ષમાં જૂનાગઢની વિવેકાનંદ હાઈસ્કૂલમાં સંઘશિક્ષા-વર્ગ લાગ્યો હતો. એક કાર્યકર્તા એમાં શિક્ષક તરીકે આવ્યા હતા. લગભગ ૧૬-૧૭-૧૮ મે- ના દિવસોમાં પૂ. ગુરુજી વર્ગમાં પધાર્યા હતા. તેઓ બીજા કોઈ પ્રાંતના વર્ગમાં જવા રવાના થયા. તેમના પ્રસ્થાન પછી તરત વકીલસાહેબે પેલા કાર્યકર્તાને પોતાના કક્ષમાં બોલાવ્યા. ખભે હાથ મૂકીને પ્રેમથી કહ્યું : ''તમે તમારા ઘેર પાછા જવાની તૈયારી કરો.'' કાર્યકર્તાને ધ્રાસ્કો પડ્યો. હચમચી ગયો. ધ્રૂજતા અવાજે પૂછ્યું, ''વકીલ સાહેબ ! મારી કોઈ ભૂલ થઈ? મારાથી કોઈ અનુશાસન-ભંગ થયો ?'' વકીલસાહેબે કહ્યું, ''ના ભાઈ, ના...ભલા... માણસ ! એવું કાંઈ નથી. ચિંતા ન કરો.'' કાર્યકર્તાની વિમાસણ વધી. એણે પૂછ્યું, ''તો પછી, મને ઘેર પાછા જવાનું કેમ કહો છો ? એવું અનુશાસન મારાથી કેમ તોડાય ?''

વકીલસાહેબે ધીમેથી એમના હાથમાં છુપાવેલો એક ટેલિગ્રામ ખોલીને બતાવ્યો, ''જુઓ ! તમારા પિતાજીનો તાર આવ્યો છે...લખ્યું છે - COME SOON FOR INTERVIEW OF CENSUS ON 22 MAY. જાઓ, સફળતાપૂર્વક ઈન્ટરવ્યૂ આપો.'' કાર્યકર્તાએ દલીલ કરી, ''મેં તો બીજી ઘણી જગ્યાએ અરજી કરી છે. આ ઈન્ટરવ્યૂ માટે મારે વર્ગ છોડવો નથી.'' હવે વકીલસાહેબનો અવાજ વધુ ભીનો...સંવેદનાપૂર્ણ બન્યો. કાર્યકર્તાનો ખભો હળવા હાથે દબાવીને બોલ્યા, ''જુઓ ! તમારા ઘરની આર્થિક સ્થિતિ અત્યારે ખૂબ ખરાબ છે. તમને ખબર હોય કે ન હોય, મને ઝીણામાં ઝીણી વાતની ખબર છે. તમારું કુટુંબ અત્યારે ભયંકર આર્થિક વિટંબણાઓમાંથી પસાર થઈ રહ્યું છે. તમારે કુટુંબને આર્થિક રીતે મદદરૂપ થવું જોઈએ. સંઘકાર્ય તો જીવનભર કરવાનું છે... થતું રહેશે, પણ અત્યારે તો તમારે તત્કાળ જવું જોઈએ, નોકરીએ લાગવું જોઈએ અને પિતાજીનો ભાર હળવો કરવો જોઈએ !''

કાર્યકર્તાની આંખમાં ઝળઝળિયાં આવી ગયાં. કર્મકઠોર અનુશાસનના આગ્રહી પ્રાંત-પ્રચારકનું દાયિત્વ નિભાવનાર વકીલસાહેબ એકએક પરિવારથી કેટલા નિકટ હતા ! દરેક પરિવારની કેટલી ચિંતા કરતા ! ... અને એટલે જ અસંખ્ય કાર્યકર્તાઓ નહીં, અસંખ્ય પરિવારો સંઘકાર્યમાં જોડાયા. દરેક પરિવારને લાગતું : વકીલસાહેબ અમારા છે.

આ કાર્યકર્તા આજેય કાર્યરત છે, વકીલસાહેબને પ્રેરણામૂર્તિ તરીકે હૃદયમાં સ્થાપિત કરીને !

સંઘ સંભાળ રાખે છે :

૧૯૮૨-૮૩ની સાલ હશે. વકીલસાહેબનું સ્વાસ્થ્ય બગડતું જતું હતું. એક સ્વયંસેવકે તેમની પાસે આવીને કહ્યું : "પ્રભુકૃપાએ મને બે પૈસા મળ્યા છે. તમારી તબિયતની સારવાર માટે થોડાક પૈસા આપવાની અંતરની ખૂબ ઇચ્છા છે. સાથે લેતો આવ્યો છું. તમે એનો સ્વીકાર કરો." વકીલસાહેબે એને શો જવાબ આપ્યો ? એમણે કહ્યું : "ભાઈ, તમારી ભાવના હું સમજું છું. પણ મારી સંભાળ તો સંઘ બરાબર રાખે છે. માટે મારી સારવાર માટે પૈસા લેવાનો પ્રશ્ન જ રહેતો નથી." આવેલા સ્વયંસેવક પાસે આનો જવાબ ન હતો. છતાં પૈસા આપવાની એની ખૂબ ઇચ્છા હતી. જેમણે પોતાના અને પોતાના પરિવારના જીવનને યોગ્ય માર્ગે દોર્યું, સુખમાં ને દુઃખમાં જેઓ આપ્તજનની જેમ પડખે રહ્યા, તેમના માટે એમની આવી બીમારીની અવસ્થામાં કંઈક તો કરવું જ જોઈએ, એવું એમને લાગતું હતું. વકીલસાહેબનો જવાબ સાચો હતો, એમની ઊંચાઈનો અને સંઘ સાથેની એમની સમરસતાનો પરિચય આપતો હતો. છતાં પૈસા આપવાની વાત પેલા સ્વયંસેવકના મનમાંથી ખસતી ન હતી. છેવટે વકીલસાહેબે એમાંથી રસ્તો કાઢ્યો. તેમણે કહ્યું : "તમારો આટલો બધો આગ્રહ છે તો હું પૈસા રાખીશ. આપણે આપણા ગરીબ બાંધવો માટે 'મેડિકલ સેન્ટર' ચલાવીએ છીએ, તેમાં આનો ઉપયોગ કરીશું. કેમ ? છેવટે આ પૈસા તબિયતની સારવાર માટે વાપરવા જોઈએ એ જ તમારી ઇચ્છા છે ને ?" એમણે પૈસા લીધા. પેલા સ્વયંસેવકને પણ સંતોષ થયો.

ગુરુદક્ષિણા :

રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની શક્તિના મૂળમાં તેની આત્મનિર્ભર અર્થવ્યવસ્થા છે. સંઘકાર્ય માટે ક્યારેય હાથ ન લંબાવવો. ફક્ત સ્વયંસેવકો વર્ષમાં એક વાર શ્રદ્ધાપૂર્વક જે અર્પણ કરે તેનાથી સંઘ ચાલે. એક વાર એક સ્વયંસેવકે સંઘ કાર્યાલયમાં પંખો ભેટ આપવાનો પ્રસ્તાવ મૂક્યો. ઘણાબધાને વાત ગમી ગઈ. કાર્યાલયમાં પંખો મુકાય તો સારું થાય. વકીલસાહેબે બધાને સાંભળ્યા પછી કહ્યું, 'પંખો આપનાર સ્વયંસેવક હોવા છતાં આમ થવાથી તેનું ઘડતર બરાબર નહીં થાય. તેના સંસ્કારને દોષ લાગશે, કારણ, તે જ્યારે પણ કાર્યાલયે આવશે, તેના મનમાં વિચાર આવશે કે આ પંખો પોતે આપ્યો છે. વળી અહીં રહેનારને પણ એમ જ લાગશે કે ફલાણા સ્વયંસેવકે પંખો આપ્યો છે.' વકીલસાહેબે કહ્યું, 'સંઘ માટે તો ગુરુદક્ષિણા એ જ માર્ગ છે. અન્ય કોઈ માર્ગે સંઘને મદદ કરવાનું યોગ્ય નહીં થાય.' વકીલસાહેબ દરેક કૃતિને સંસ્કારનાં ત્રાજવે તોલતા. તેઓ સંસ્કારપ્રક્રિયામાં કોઈ ઓટ ન આવે તે માટે જાગૃત પ્રયાસ કરતા.

ચિંતનશીલ :

૩૫-૩૫ વર્ષથી ગુજરાતના ગામે-ગામ નિયમિત રીતે એકધારો પ્રવાસ કરતા રહ્યા. મા. વકીલસાહેબ ગાડીના ડબ્બામાં મળી જાય તો ગુજરાતના કોઈક નાનકડા શહેરના ગુજરાતી વેપારી જેવું વ્યક્તિત્વ અને ભાષામાં સૌરાષ્ટ્રની આછી છાંટ. હાથમાં એકાદ પુસ્તક કે છાપું એ તેમની સતત ચિંતનશીલ મનોવૃત્તિનાં દર્શન કરાવી જાય. આટલું બધું પ્રભાવી વ્યક્તિત્વ હોવા છતાંય કદીયે આડંબર, અભિમાન કે મોળા વ્યવહારનો અંશ પણ નહીં. અનેકવિધ કાર્યો સાથે સતત અનુસંધાન હોવા છતાંય તેમના નામના પ્રગટીકરણ સાથે તેમનો સતત અણગમો.

અરે, એમની એકાદ તસ્વીર જોવી હોય તોપણ મુશ્કેલ! ખૂબ ફંફોળ્યા પછી ૧૫-૨૦ વર્ષ પૂર્વેની એકાદ તસ્વીર હાથ લાગે ! આટલાં વર્ષના જાહેરજીવનના અનુસંધાન છતાંય ભૂલેચૂકે પણ છાપાંઓમાં ક્યાંય તેમનું નામ ન આવે અને છતાં આવડા મોટા સંગઠનની જવાબદારી ઉપાડે.



રાષ્ટ્રજીવનના શિલ્પી :

ચાલીસ વર્ષનું અખંડ જાહેરજીવન અને તેમાંય જ્યારે પ્રત્યેક પળ સમાજમય બનીને જિવાતી હોય, લોકો વચ્ચે જ વ્યતીત થતી હોય ત્યારે તો કેટકેટલા પ્રશ્નો, પ્રસંગો, વાતો, અનુભવોની હારમાળાના પહાડ ખડકાયા હોય ! સહુના પોતાના અનુભવ હોય, જાહેરજીવનની પ્રત્યેક ઘટનાની પ્રગટ-અપ્રગટ મુલવણી હોય, ક્યારેક ઉમંગ હોય, ક્યારેક વેદના હોય, ક્યારેક રોષ હોય, ક્યારેક આશા, ક્યારેક નિરાશા... શું ન હોય ? માનવીને હોય તે બધું જ વકીલસાહેબને પણ હોય

જ. ચાલીસ વર્ષના જાહેરજીવનને સ્મૃતિપટ ઉપર કંડારતાં જ ઘટનાઓની ઘટમાળ ચાલી જતી દેખાય છે. ક્યારેક આ ઘટનાના જન્મદાતા હશે, તો ક્યારેક મૂક પ્રેક્ષક; ક્યારેક તે માટેની પ્રેરણા આપી હશે, તો ક્યારેક તેની પૂર્તિ માટે પરિશ્રમ કર્યો હશે; ક્યારેક તેના રાહબર, તો ક્યારેક તેના ઘડવૈયા બન્યા હશે.

ઇતિહાસની અટારીએ :

વકીલસાહેબે જાહેરજીવનનો આરંભ કર્યો ત્યારે બીજા વિશ્વયુદ્ધની અસરોની ચારે તરફ ચર્ચા હતી. આઝાદી પૂર્વે આખો દેશ કોમી દાવાનળમાં દાઝી રહ્યો હતો. જે માતૃભૂમિ માટે અપાર શ્રદ્ધા હતી, એ માતૃભૂમિના ટુકડા થઈ રહ્યા હતા, ત્યારે બીજી બાજુ આઝાદીનાં ગીત ગવાઈ રહ્યાં હતાં. લાખો હિંદુ બાંધવો પહેર્યે કપડે શરણાર્થી બની આવી રહ્યા હતા, તેમના દુ:ખને હળવું કરવાની મથામણ હતી. મહાત્માજીની હત્યાના હીન કૃત્યે સંપૂર્ણ દેશને કારમો આઘાત આપ્યો હતો. હિન્દુ સંસ્કૃતિ અને પરંપરાને લજવે એવું એ કૃત્ય હતું. મહાત્માજીની હત્યાના પગલે-પગલે રાજકીય ચાલબાજી અને પેંતરાઓ રચાયા. પોતાના પ્રાણપ્રિય સંઘકાર્ય ઉપર પ્રતિબંધ આવ્યો અને ગયો પણ ખરો. હિન્દુ કોડ બિલની ચર્ચા હોય કે 'ઇન્ડિયા ધેટ ઈઝ ભારત' જેવા શબ્દપ્રયોગો સામે ઊહાપોહ હોય, ભારતના પૂર્વ છેડે બંગાળ ભીષણ દુષ્કાળની છાયામાં સપડાયું હતું ત્યારે 'વાસ્તુહારા સહાયતા સમિતિ' દ્વારા તેની વહારે ચઢવા દોટ મૂકી હતી, તો ભારતના પશ્ચિમ છેડે ગુલામીની કલંકિત ગાથાના નિર્મૂલન-રૂપ ભગવાન સોમનાથના મંદિરનો પુનરુદ્ધાર આરંભાયો હતો. સોનાની થાળીમાં લોઢાની મેખની જેમ આઝાદ ભારતમાં દાદરા-નગરહવેલી અને સેલ્વાસને મુક્ત કરાવવાનો સશસ્ત્ર ક્રાંતિ દ્વારા સફળ પ્રયાસ, તો બીજી તરફ ગોવા અને દીવની મુક્તિ માટે વ્યાપક સત્યાગ્રહ. હિન્દુ-માત્ર માટે ગાય એ શ્રદ્ધાકેન્દ્ર છે. તેની રક્ષા માટેના આંદોલનમાં સક્રિય સહયોગ, ગુજરાતના લાખો નાગરિકો પાસે પહોંચી હસ્તાક્ષર લેવાનો સફળ કાર્યક્રમ, પ. પૂ. ગુરુજીના એકાવનમા જન્મદિવસે જાહેર સત્કાર સમારંભ, ભાષાવાર પ્રાંતરચનામાંથી જન્મેલ પ્રાંતવાદની લાગણીઓ, ગુજરાતના પશ્ચિમ કિનારે કચ્છના અંજાર નગરમાં ભયાનક ભૂકંપમાં પીડિત બાંધવોની સેવા, સ્વયંસેવકોના પરિશ્રમથી અમદાવાદમાં સંઘના પ્રાંતિક કાર્યાલયનું નિર્માણ, આઝાદ ભારતની શાંતિની વાતોને જમીનદોસ્ત કરનાર ચીનનું આક્રમણ, અવારનવાર આવતી સામાન્ય ચૂંટણીઓની જનજીવન ઉપર થતી અસરો, ગુજરાતમાં કચ્છની સરહદે પાકિસ્તાનનું આક્રમણ, ત્રણ જ વર્ષના ટૂંકા ગાળામાં બે પ્રધાનમંત્રીઓની ચિરવિદાય, ધાર્મિક ક્ષેત્રે ક્રાંતિ જગાવી શકે તેવા આશાવાદી પરિબળ તરીકે વિશ્વ હિન્દુ પરિષદનો જન્મ, સ્વામી વિવેકાનંદ જન્મશતાબ્દી નિમિત્તે કન્યાકુમારીમાં વિવેકાનંદજીનું ભવ્ય સ્મારક નિર્માણ કરવા ગુજરાતના લાખો નાગરિકોનું યોગદાન, ગોરક્ષાની માગણી કરતા સંત-મહાત્માઓ ઉપર દિલ્હીમાં ગોળીઓની વર્ષા, ગુજરાતમાં ધર્મસ્થાનો ઉપર હુમલા અને વ્યાપક કોમી દાવાનળ, બાંગ્લાદેશનું નિર્માણ અને પાકિસ્તાન સામે યુદ્ધ, સિદ્ધપુરમાં વિશાળ હિન્દુ સંમેલન, પ. પૂ. ગુરુજીની બીમારી, ઉત્તર ગુજરાતમાં દુષ્કાળની કારમી સ્થિતિ, મૂલ્યો માટે નવનિર્માણની લડત, લોકશાહીના નામે લોકશાહી ઉપર ભયાનક આઘાત કરનાર કટોકટી, વ્યાપક લડત, મુંબઈમાં સ્વાધ્યાય-પ્રવૃત્તિના રજત-જયંતી કાર્યક્રમની સફળતા, સામાન્ય ચૂંટણીઓમાં પ્રજાશક્તિનાં દર્શન, મોરબીની વિનાશક જળહોનારત, લોકોએ નિર્મેલ જનતાશાસનનું પતન, હિન્દુ સમાજમાં તિરાડ કરનારું અનામત વિરોધી આંદોલન, મીનાક્ષીપુરમ્‌માં વ્યાપક ધર્માંતરણનું ષડ્‌યંત્ર, જનજાગરણ અભિયાનને લોકોનો ખરા દિલથી આવકાર, અનામત આંદોલનની આડમાં કોમી હુલ્લડો, રામજન્મભૂમિ મુક્તિ આંદોલન – ન જાણે કેટકેટલી પ્રગટ-અપ્રગટ ઘટનાઓ બની હશે ! પરંતુ વકીલસાહેબની નજરે આ દરેક ઘટનાને તપાસવી હશે, તે વખતના તેમના અભિગમને જાણવો હશે. તેમની યોજનાને સમજવી હશે તો એક સ્વતંત્ર ઇતિહાસ જ રચાય. આ સઘળું હોવા છતાંય તેમના જાહેર જીવનની મુલવણી કરવાનું કામ સરળ નથી જ.

સંઘમાં એક ગીત છે :
'શપથ લેના તો સરલ હૈ,
પર નિભાના હી કઠિન હૈ.'

રાષ્ટ્રના કાયાકલ્પના કસબી :

ફક્ત સંઘકાર્ય જ નહીં, વકીલસાહેબ તો સંપૂર્ણ સમાજ-જીવનાની રુગ્ણાવસ્થા દૂર કરવા સંકલ્પબદ્ધ હતા. તેમણે તો શાખા જ ચલાવી, પણ શાખામાંથી નિર્મિત સેંકડો કાર્યકર્તાઓ આજે સમાજજીવનનાં અનેક ક્ષેત્રોને દીપાવી રહ્યા છે. કોઈ સાહિત્યસાધના આદરી રહ્યું છે, તો કોઈક

પત્રકારત્વનાં મૂલ્યોનું જતન કરે છે. કોઈ ધરમપુર તાલુકાના વનવાસી બંધુઓના વિકાસ માટે મથે છે, તો કોઈ પાલ, છોટાઉદેપુર, દાંતા જેવાં દુર્ગમ વનવાસી ક્ષેત્રોમાં આપણા આ બાંધવોના વિકાસ માટે ધૂણી ધખાવીને કામે લાગ્યા છે. કોઈ શિક્ષણજગતને પ્રેરક શિક્ષણવ્યવસ્થા ઊભી કરવા શિશુમંદિરથી લઈ હાઈસ્કૂલ સુધીની શિક્ષણવ્યવસ્થામાં જીવંતતા લાવવા પ્રયોગો કરી રહ્યા છે, કોઈ સંતો-મહાત્માઓની સંગઠિત શક્તિ દ્વારા સમાજના દોષોને દૂર કરવા પ્રયાસ કરે છે, તો કોઈ મંદિરોને સામાજિક ચેતનાનું કેન્દ્ર બનાવવા મથી રહ્યા છે. કોઈ સમાજના પ્રશ્નો માટે સંસદ અને વિધાનસભાઓ ગજવી રહ્યા છે. કોઈ મહિલા-ઉત્કર્ષ માટે મહિલા સ્વાવલંબન કેન્દ્ર ચલાવી રહ્યા છે, તો કોઈ કચ્છના સીમાડાની સુરક્ષા માટે લોકજાગરણને વર્યા છે. કોઈ સંસ્કારક્ષેત્ર દ્વારા વ્યક્તિના આર્થિક સ્વાતંત્ર્ય માટે પ્રયાસ કરે છે, તો કોઈ સહકાર દ્વારા ખેતીના પ્રયોગો કરે છે. કોઈ શહેરમાં વસતાં ઝૂંપડપટ્ટીનાં બાળકોને સંસ્કારિત કરવા પ્રયત્નશીલ છે, તો કોઈ સમાજથી વિમુખ બનતા ભણેલા-ગણેલા વર્ગને રાષ્ટ્રકાર્યમાં જોડવા કામે લાગ્યા છે. કોઈ સત્-સાહિત્યના પ્રસાર માટે પ્રકાશન–પ્રવૃત્તિ લઈને બેઠા છે, તો કોઈ લોકજાગરણ માટે નાનાં-મોટાં છાપાં દ્વારા જાગરણ-કાર્ય કરી રહ્યા છે. કોઈ શ્રમિકોમાં દેશભક્તિના સંસ્કાર-સિંચનનો રાહ લઈ ચાલે છે, તો કોઈક અજંપાભરી અવસ્થામાં જીવતી વિદ્યાર્થી-શક્તિને રચનાત્મક માર્ગે વાળવા ગ્રામોત્થાન જેવા કાર્યક્રમોમાં વિદ્યાર્થીઓને સહભાગી કરી રહ્યા છે. આ યાદી ઘણી લાંબી છે. આવાં અનેક કામોમાં લાગેલાની સંખ્યા પણ અસંખ્ય છે. તેમને અગર પૂછવામાં આવે કે : "ભાઈ, જીવનમાં કારકિર્દી (કેરિયર) બનાવવાનો વિચાર છોડી આપ આમાં શા માટે લાગ્યા છો ?" તો કહેશે : "સંઘ-શાખામાંથી સમાજકાર્ય કરવાના સંસ્કાર મળ્યા જ હતા અને વકીલસાહેબે કહ્યું. બસ, પછી વિચારવાનું શાનું ?"

વકીલસાહેબના જીવનયજ્ઞનું જ આ પ્રેરક પરિણામ છે. રાષ્ટ્રનિર્માણના યજ્ઞમાં ખપી ગયેલા આ શિલ્પીના નામનું પાટિયું ક્યાંય લટકતું નથી. એ તો વિરાજમાન છે કાર્યરત સહસ્ર હૃદયોના સિંહાસન પર. કેન્સરની જીવલેણ બીમારી છતાં અંતકાળ સુધી સંઘકાર્ય માટે પ્રવૃત્ત રહ્યા. મૃત્યુ સમીપ છે તે જાણવા છતાં વધુમાં વધુ સ્વયંસેવકોને છેલ્લે સુધી મળતા રહેવા પ્રયાસ કરતા રહ્યા.

પૂનામાં છેલ્લા શ્વાસ લીધા. ગુજરાતના સંઘજીવનમાં આજે પણ વકીલસાહેબની છાયા વર્તાય છે. ડગલે ને પગલે તેમની ખોટ પણ વર્તાય છે.

આજેય વકીલસાહેબનું જીવન ધૂપસળીની જેમ સતત જલતા રહી દિવ્ય સુગંધ અને પ્રકાશ આપી રહ્યું છે.





મા. વકીલસાહેબ તરીકે ઓળખાતા એ મહાન ઋષિવરને ભાવાંજલિ



(સમગ્ર વિશ્વ ભૌતિક સુખસમૃદ્ધિની પાછળ ઘેલુ બન્યું છે ત્યારે રા. સ્વ. સંઘની એક વિશિષ્ટ પરંપરામાં – સમગ્ર ભૌતિક સમૃદ્ધિને તિલાંજલિ આપીને આ દેશની, સંસ્કૃતિની નૈતિક સમૃદ્ધિ ટકી રહે એ માટે એક પછી એક એવા અનેક લોકો ઘર-સંસાર ત્યાગીને આપણાં જીવન-મૂલ્યોની રક્ષા માટે અનેક વિભૂતિઓની એક શૃંખલા અને પરંપરા નિર્માણ થઈ તેમાંના એક હતા –

માનનીય લક્ષ્મણરાવજી ઈનામદાર

એઓશ્રીને ભાવાંજલિ અર્પણ કરવા અનેક મહાનુભાવો પ્રેમાભાઈ હૉલમાં એકત્ર થયા હતા ત્યારે શ્રી નરેન્દ્રભાઈ મોદીએ જે ભાવચિત્ર રજૂ કર્યું એ અદ્વિતીય છે.

આ ભાવચિત્રમાં જ રા. સ્વ. સંઘ શું છે અને એની પરંપરા શું છે તેમ જ મા. વકીલસાહેબ કેવું જીવન જીવી ગયા અને હિંદુ સમાજમાં શક્તિરૂપે કેવા વ્યાપ્ત થઈ ગયા એનું સુરેખ અને ભાવવાહી ચિત્ર આ અંજલિમાં ભાવરૂપે પ્રગટ થયું છે.

વંદન આ મહાન, અમર વિભૂતિને !

(- સંપાદકો 'સાધના' સાપ્તાહિક)

અહીં ઉપસ્થિત સહુના હૃદયમાં બિરાજમાન સ્વર્ગસ્થ માનનીય વકીલ- સાહેબના દિવ્યપુંજને પ્રણામ કરું છું.

આપણે એવા સમયગાળામાં જીવી રહ્યા છીએ જ્યારે પિતાજીની નાનકડી ઝૂંપડીમાં પાંચ પુત્રો સુખેથી રહી શકે છે, પણ પુત્રના પાંચ મહેલમાં પિતાને માટે સ્થાન નથી હોતું. આ છે આજના સમાજજીવનનું ચિત્ર – આવી વેળાએ આપણે બધા આટલી મોટી સંખ્યામાં અહીં શા માટે એકત્ર થયા છીએ ? એક એવી વ્યક્તિ માટે, જેમની સાથે આપણો લોહીનો સંબંધ નહોતો. કહે છે, Blood is thicker than water. પણ અહીં કંઈક જુદું જ દૃશ્ય જોવા મળે છે. પ્રત્યેકનાં મન, હૃદય, બુદ્ધિ ઉપર એક ભાવસૃષ્ટિ રચાઈ છે. આપણે વ્યક્તિપૂજાની પરંપરામાં ઊછરેલા નથી. આપણે તો કર્તૃત્વના ઉપાસક છીએ.

અહીં

* *મૃત્યુની નહીં, જીવનની જીત થાય છે.*
* *કેટલું જીવ્યા તે નહીં, કેવું જીવ્યા તે પૂજાય છે;*
* *કેટલું ભેગું કર્યું તે નહીં, કેવી રીતે ભેગું કર્યું, કેવી રીતે વાપર્યું તેનો વિચાર થાય છે.*

આ છે અહીંની પરંપરા અને તેથી જ તો આવી કસોટીની એરણે પાર ઊતરેલ એક જીવનનો જન્મદિવસ આપણને સહુને ભેગા થવાનું નિમિત્ત બન્યો છે. ઋષિપંચમીના પવિત્ર દિવસે જન્મેલ, એ જ પરંપરારૂપ જીવન જીવી જનાર, વળી...આપણા જ જેવા, આપણી જ વચ્ચેના, આપણા જ સહુના વકીલસાહેબનો જન્મદિવસ – આપણા માટે સંકલ્પ-દિવસ.



આપણે શોક કરવા કે ભાવનાના સામ્રાજ્યમાં
ગળાડૂબ થઈ કિંકર્તવ્યમૂઢ થઈ બેસી રહેનાર નથી.
જે શ્રેષ્ઠ છે તેનો સ્વીકાર કરવા,
જે સ્વીકાર્ય છે તે સાકાર કરવા
સંકલ્પબદ્ધ થવું છે.
અને તેથી જ તો
આજનો પવિત્ર દિવસ આપણે પસંદ કર્યો છે.

સહુને પોતીકું લાગે તેટલું નિકટ પિસ્તાલીસ વર્ષના લાંબા સહવાસવાળું આપણા પૈકીનું જ એક જીવન વિદાય થયું.

જીવન સૂર્ય જેટલું પ્રખર હતું
તેટલું જ
મૃત્યુ ચાંદની જેટલું શીતળ ! જીવન જેમ કર્તવ્ય હતું
એવું જ
મૃત્યુ પણ સ્વયંસ્વીકૃત કર્તૃત્વનો જ ભાગ !
આજ તો હતી એ વ્યક્તિત્વની અદ્‌ભુતતા !
આપણે તેમનામાં સાવધતા જોઈ પણ ઢીલાશ નહીં,
આદર્શવાદ જોયો પણ અવ્યવહારુતા નહીં,
ઝડપ જોઈ પણ રઘવાટ નહીં,
સ્નેહ ખરો પણ આસક્તિ નહીં,
અનાસક્તિ ખરી પણ ઉદાસીનતા નહીં,
પ્રેમાળ ખરા પણ લાડ નહીં,

કડક ખરા પણ કઠોર નહીં,

દૃઢતા ખરી પણ ઝનૂન નહીં.

હા...આ બધું જોયું, અનુભવ્યું, તેય પાછું સહજ...

સરળ રીતે.

સપાટ મેદાનમાંથી પસાર થતા શાંત ઝરણાને જોઈને

કોઈ કલ્પના પણ કરી શકે ખરું કે આ ઝરણું

વિશાળકાય પથ્થરોનાં પેટને ચીરીને બહાર નીકળવાની શક્તિ ધરાવે છે ! વકીલસાહેબને જોઈને તેમનામાં રહેલ અસીમ શક્તિનો અંદાજ કરવાનું કઠિન છે.

ગીતામાં કહ્યું છે –

સાધુ અનગ્નિ હોય;

તેઓ અનગ્નિ હતા.

સાધુ અનિકેત હોય;

તેઓ અનિકેત હતા,

સાધુ અકિંચન હોય;

તેઓ અકિંચન હતા.

શંકરાચાર્યના અદ્વૈતવાદનું તેઓ

સાકાર રૂપ હતા.

જ્યાં અદ્વૈત છે ત્યાં

પથિક જ પથ બની જાય છે

ધ્યાતા જ ધ્યેય બની જાય છે

જ્ઞાતા જ જ્ઞાન બની જાય છે

કર્તા જ કર્મ બની જાય છે,

એમ

સંઘકાર્ય અને વકીલસાહેબ વચ્ચે

ક્યાંય દ્વૈત નહોતું.

તેઓ જીવ્યા અન્યના કાજે

પણ ક્યારેય તેનો ઉદ્‌ઘોષ કર્યો નહીં

એ કહેતા આ બધું *स्वान्तः सुखाय* છે.

રાજા રંતિદેવે કહ્યું હતું –

न त्वहं कामये राज्यम्

न स्वर्गम् न पुनर्भवम्

कामये दुःखतप्तानाम्

प्राणिनाम् आर्तिनाशनम् ।।

તેઓ પણ કશાયની કામના વગર જીવ્યા, ઝઝૂમ્યા.

જીવન પણ એક પ્રકારે સંગીત છે.

સિતારનો તાર ઢીલો હોય તોપણ સૂર ન નીકળે.

વધારે ખેંચેલો હોય તોય નકામું.

તાલ અને તાનમાં સુમેળ

લય અને સૂરમાં સંગત

સૂર અને સાજમાં સંબંધ હોય

ત્યારે જ તો સંગીત સર્જાય છે.

વકીલસાહેબનું જીવન પણ સંગીત હતું.

તેનું આ જ રહસ્ય છે. સંયમિત, સુરેખ, સહુની સાથે તાલમેલવાળું.

તેથી જ તો તેઓ આપણાં હૃદય ડોલાવી ગયા.

આવું એક દિવ્યજીવન ૧૫મી જુલાઈએ વિરામને વર્યું.

"લક્ષ્મણ" નામના એક શરીરમાંથી ભલે તેણે વિદાય લીધી હોય,

પરંતુ અહીં બેઠેલ પ્રત્યેકના હૃદયમાં "વકીલસાહેબ" બિરાજમાન છે.

કોઈકના કર્મમાં તો કોઈકના ધર્મમાં

કોઈકના ધૈર્યમાં તો કોઈકના શૌર્યમાં

કોઈકના કર્તૃત્વમાં તો કોઈકના નેતૃત્વમાં

કોઈકની મૃદુતામાં તો કોઈકની મધુરતામાં

કોઈકના આચારમાં તો કોઈકના વિચારમાં

કોઈકના સ્વપ્નમાં તો કોઈકના સંકલ્પમાં

કોઈકના ગાનમાં તો કોઈકના જ્ઞાનમાં

કોઈકના ભાવમાં તો કોઈકના સ્વભાવમાં

કોઈકની ભક્તિમાં તો કોઈકની શક્તિમાં

કોઈકની વૃત્તિમાં તો કોઈકની પ્રવૃત્તિમાં
કોઈકની ગતિમાં તો કોઈકની મતિમાં
કોઈકનાં દર્શનમાં તો કોઈકના માર્ગદર્શનમાં
કોઈકની કરુણામાં તો કોઈકની પ્રેરણામાં –
કોઈક ને કોઈક રૂપે તેઓ આપણામાં બિરાજમાન છે જ.
આજના મંગલપર્વે આપણે આપણી અંદર ડોકિયું કરીએ
અંદર બિરાજમાન વકીલસાહેબ સાથે સેતુ બાંધીએ...
સ્વર મિલાવીએ...
આપણને જરૂર સંભળાશે...
મૃદુ સ્વરે...*चरैवेति*...*चरैवेति*...*चरैवेति*નો નિરંતર નાદ
*उत्तिष्ठत जाग्रत*નો સંકલ્પ.
*राष्ट्राय स्वाहा इदम् न मम*નો સંતોષ રણકતો હશે.
તેથી જ

આપણી અંદર બિરાજમાન તેમના અસ્તિત્વનો આવિષ્કાર કરીએ.

આજે ભાવાંજલિ આપવાના આ ભક્તિ-સંકીર્તનના કાર્યક્રમમાં સંકલ્પ કરીએ :

* ભાવ જ્યારે શબ્દ બની સરી પડે છે ત્યારે કવિતા બની જાય છે.
* ભાવ જ્યારે કૃતિ બની સાજને સ્પર્શ કરે ત્યારે સંગીત બની વહે છે.
* ભાવ જ્યારે અવ્યક્ત બની જાય ત્યારે આંસુઓનો મૌન સાગર છલકે છે.

આપણે તો

ભાવને કર્તવ્યની કેડીએ કંડારવા છે, કર્મપથ ઉપર અગ્રેસર થવું છે, સંકલ્પબદ્ધ થવું છે.

એ જ આપણી ભાવાંજલિ...

(ઋષિપંચમી ૧૯૮૬ - મા. વકીલસાહેબના જન્મદિવસે પ્રેમાભાઈ હૉલમાં યોજાયેલ ભજન-સંકીર્તન-કાર્યક્રમમાં આપેલા પ્રવચનના આધારે.)



ઋષિ-ઋણ

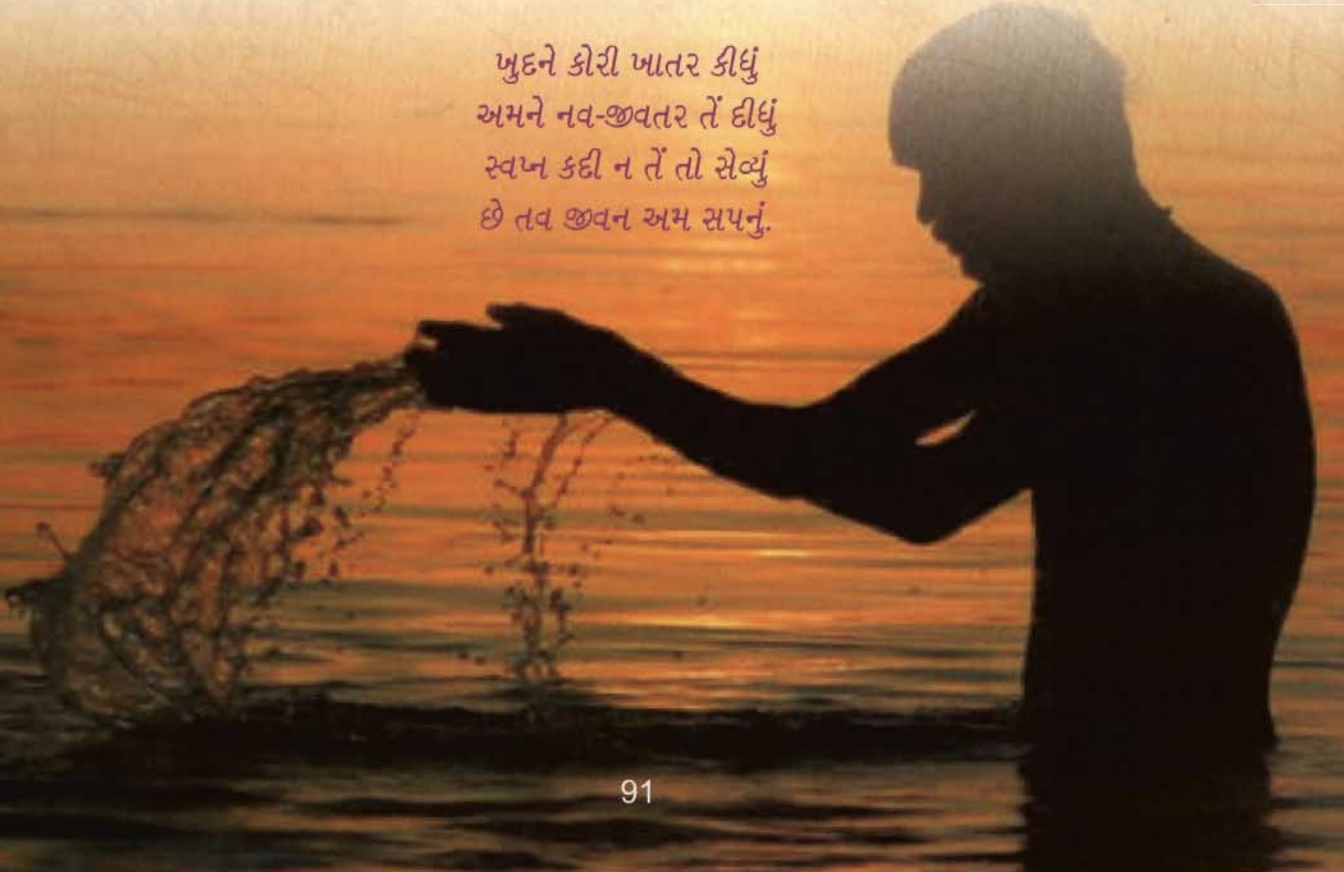
અશ્રુ કેરી ન અંજલિ ધરશું
નવ ધરશું શોકની છાયા;
બની જ્યોત સદા ઝળહળશું
ઘરદીવડા અમ બનશું.

વેદકાળથી અખંડ ધારા
ઋષિઓની છે સદાય છાયા,
અમ હૃદયે તવ ઋષિ-કાયા
છે નવજીવન-દીક્ષા-દાતા.

ઋષિ-ઋણ અમ શીરે સદા
કરશું જીવનભર અદા;
અમ જીવનની કર્મ-ધારા
તુજ જીવનની ગાશે ગાથા.

કંટક-છાયી વાટ સિધાવી
તનને તોડી મોહને મારી;
બની વાટ તેં ખુદને બાળી
અમ હૃદયે ચાંપી ચિનગારી.

ખુદને કોરી ખાતર કીધું
અમને નવ-જીવતર તેં દીધું
સ્વપ્ન કદી ન તેં તો સેવ્યું
છે તવ જીવન અમ સપનું.

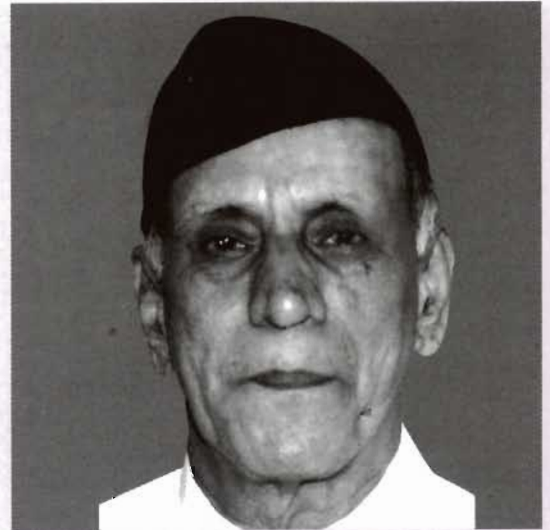


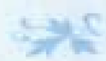


|| राष्ट्राय स्वाहा । राष्ट्राय इदम् । न मम ||
સર્વસ્વ રાષ્ટ્રને સમર્પિત, આ બધું રાષ્ટ્રનું જ છે. મારું કંઈ જ નથી.
-પ પૂ. ગુરુજી

(૮)

શ્રી મધુરમ્ મધુકર (ગુજરાતી)



 પ.પૂ. મધુકરરાવ ભાગવત 

મધુકરરાવ પોતે પ્રચારક રહ્યા અને પોતાના સુપુત્ર શ્રી મોહનરાવ ભાગવતને પ્રચારક તરીકે રાષ્ટ્રચરણે સમર્પિત કરી આ આહુતિયજ્ઞમાં એક નવજ્યોતિ પ્રદાન કરી. પારસમણિના સ્પર્શથી લોખંડ સોનું તો બની જાય છે, પરંતુ પારસમણિના સ્પર્શથી લોખંડ પારસમણિ બનતું નથી. પારસમણિની આ કથાને મધુકરરાવ અને મોહનરાવનું ઉદાહરણ જૂઠી સાબિત કરી દે છે. પારસમણિ મધુકરરાવે પારસમણિરૂપ મોહનજીને તૈયાર કર્યા. મધુકરરાવ સંગઠનશાસ્ત્રની જીવંત વિદ્યાપીઠ હતા.

કર્મપથ પર મુસ્કુરાઉં સર્વદા
આપદાઓં કો સમજ વરદાન મૈં,
જગ સુને ઔર ઝુમ લે અનુરાગ મેં
ઉલ્હસિત હો નિત્ય ગાઉં ગાન મૈં.





કાંકરિયા તળાવ – અમદાવાદ

ભારતમાતાની સેવામાં ત્રણ-ત્રણ પેઢી સમર્પિત કર્યાં પછી પણ પોતે ક્યાંય નજરમાં ન આવ્યા, ક્યાંય પોતાની ઉપસ્થિતિ લાગવા દીધી નહીં, સમર્પણની મહાન પરંપરાનો અહેસાસ પણ થવા દીધો નહીં. એવા મધુકરરાવજી ભાગવતની વિદાયના સમાચાર અનેક સંસ્મરણો જગાવી ગયાં.

મરાઠી અને ગુજરાતી રહેણી-કરણીનો મિશ્રિત પ્રભાવ તેમના પોશાકમાં દેખાતો. ગાંધીપરંપરાનું ગુજરાતી ધોતિયું અને વિદર્ભનું ગ્રામીણ ખમીસ, હાથમાં પાનનો ડબ્બો અને ચિરપરિચિત નિરંતર વહેતું હાસ્યઝરણું, એમને મળનાર કોઈ પણ વ્યક્તિને એમનામાં જ સમાવી લેતું હતું. ઘણા લોકોને મળીએ છીએ ત્યારે લાગે છે કે તેઓ આપણા પર પ્રભાવ છોડી ગયા. મધુકરરાવને મળ્યા પછી લાગતું કે તેઓ આપણામાં પ્રવેશી ગયા છે. દૂધમાં સાકર ભળે એમ એમનું સંપૂર્ણ વ્યક્તિત્વ જ મળનારની અંદર સમરસ બની જતું.

ગુજરાત હંમેશ માટે શ્રદ્ધેય મધુકરરાવનું ઋણી રહેશે. સ્વાતંત્ર્ય-આંદોલન અને ભારતવિભાજનના વિકટ કાલખંડમાં સીમાવર્તી ગુજરાતમાં મધુકરરાવે જે રાષ્ટ્રસાધના કરી એને કેવી રીતે ભૂલી શકાય ?

ગુજરાતમાં રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની ઓળખ નહિવત્ હતી. એવા સમયે યુવાનીમાં પોતાનાં ઘરબાર અને ગામ છોડી વૈચારિક રૂપે સુક્કીભઠ જમીનમાં આવી, સંઘ-વિચારનાં બી વાવવાં અને શાખારૂપી ફૂલવાડી તૈયાર કરવાનું કામ કેટલું દુષ્કર હશે એની તો કલ્પના કરવી પણ મુશ્કેલ છે.

આધ્યાત્મિક વિશ્વમાં ગુરુ શિષ્યમાં શક્તિપાત કરે છે. આની ખૂબ મોટી ચર્ચા થાય છે. રામકૃષ્ણ પરમહંસે વિવેકાનંદમાં શક્તિપાત કર્યો હતો. આવાં અનેક દૃષ્ટાંતો છે. પરંતુ બધાં દૃષ્ટાંતોમાં એવું જ જોવા મળે છે કે સમર્થમાં સમર્થ આધ્યાત્મિક આત્માએ વધુમાં વધુ એક કે બે પર શક્તિપાત કર્યો હશે. સમાજભક્તિ અને રાષ્ટ્રભક્તિને પણ આધ્યાત્મિક અનુષ્ઠાન અપાવવામાં રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘનો અત્યંત અદ્‌ભુત દૃષ્ટિકોણ રહ્યો છે. આ પરંપરાના મહાન વાહક શ્રીમધુકરરાવને સમાજભક્તિનો શક્તિપાત કરતા મેં પોતે જ અનુભવ્યા છે. મારા જેવા સેંકડોને આ શક્તિપાતનો લાભ મળ્યો છે. ખૂબ નાની ઉંમરમાં મધુકરરાવની કાર્યશૈલી અને જીવનશૈલી વિશે સાંભળવાનો અવસર મળ્યો હતો, પરંતુ એમનાં દર્શન કરવાનો અવસર તો વીસ વર્ષનો થયો ત્યારે જ પહેલી વાર મળ્યો. આ પહેલી મુલાકાત મારી અંદર જીવંત છે. મંદિરની અંદર થતા ઘંટારવની જેમ સમાજભક્તિનાં સ્પંદનોને આંદોલિત કરી રહ્યાં છે. એ એવી રીતે મળ્યા જાણે મને વર્ષોથી ઓળખતા હોય !

મળનાર પ્રત્યેક વ્યક્તિ કોણ છે, શું છે, શા માટે છે, એને ક્યાં જવું, એનો અભિપ્રાય શો છે, કયા વળાંકે એને પસાર થવાનું છે, એનો મુકામ ક્યાં છે, મકસદ શું છે, મંજિલ કઈ છે – આ બધું એ સારી રીતે જાણતા હતા. એમની કાર્યશૈલી એવી કે યાત્રા કેટલી લાંબી છે, કેટલી કઠણ છે, એની ખબર સુધ્ધાં પડવા દેતા નહીં. એવું લાગતું'તું કે બસ ચાલો... ચાલો... બસ... એક જ ડગ આગળ છે ને ? અને આમ જ ચાલી નીકળતા, સાથેસાથે... પછી તો એમ જ ચાલવા લાગ્યા. કેટલાં ડગ ચાલ્યા એની ખબર સુધ્ધાં રહી નહીં. આમ તો રસ્તે ચાલવાથી રસ્તો કપાય છે; પણ એમની સાથે ચાલવાથી તો રસ્તો બનતો હતો. એમની એ તો વિશેષતા હતી. માર્ગ અને યાત્રી વિશે એમનો અભિપ્રાય અજોડ રહેતો.

રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના તૃતીય વર્ષના શિક્ષણ માટે નાગપુરમાં એમની સાથે એક મહિનો રહેવાનું થયું. આ સુઅવસર જીવન જીવવાની સંજીવની બની ગયો. મહારાષ્ટ્રના નાગપુર પાસે ચંદ્રપુરમાં જન્મેલ મધુકરરાવના પિતાજી નારાયણરાવ ભાગવત સુપ્રસિદ્ધ વકીલ હતા. ૧૯૨૯માં ચંદ્રપુરમાં જ તેઓ સ્વયંસેવક બન્યા. ઈ. સ. ૧૯૪૧માં વિવેકાનંદ શિલા સ્મારકના નિર્માતા શ્રી એકનાથ રાનડેની સાથે મહાકૌશલ – કટનીમાં પ્રચારક તરીકે ગયા. ત્યાં કાંઈક અનુભવ પછી નાગપુરની બે મહાન હસ્તી શ્રી યાદવરાવ જોશી કર્ણાટક ગયા અને મધુકરરાવ ભાગવત ગુજરાતમાં પહેલાં સુરત આવ્યા અને ત્યાં પારેખ ટેકનિકલ ઈન્સ્ટિટ્યુટમાં


ગુરુજીનું સ્વાગત કર્ણાવતી રેલ્વે સ્ટેશન

સંઘ શાખાનો પ્રારંભ કર્યો. શરૂઆતમાં વડોદરા અને કર્ણાવતીમાં સંઘ-શાખાનો પ્રારંભ થયો. સંપૂર્ણ ગુજરાતમાં સંઘ-વિચાર પહોંચાડવા મધુકરરાવ કૃત-સંકલ્પ હતા. નામને અનુરૂપ ગુજરાતીમાં અત્યંત મધુર બોલતાં શીખી લીધું હતું, એટલું જ નહીં, વડોદરાની શાખામાં, જ્યાં મોટા પ્રમાણમાં મરાઠી સ્વયંસેવકો આવતા હતા, એમને પણ મરાઠી બોલવા પર પ્રતિબંધ મૂક્યો અને ગુજરાતી બોલવા આગ્રહ કરતા હતા. ૧૯૪૧-૧૯૪૮ના સ્વાતંત્ર્ય-આંદોલનની તીવ્રતા વચ્ચે પોતાની અદ્‌ભુત સંગઠન-કુશળતાની ક્ષમતાથી ગુજરાતનાં ૧૧૫ નગરોમાં સંઘકાર્યનો મજબૂત પાકો પાયો નાખ્યો.

ગુજરાત હંમેશ માટે શ્રદ્ધેય મધુકરરાવનું ઋણી રહેશે. સ્વાતંત્ર્ય-આંદોલન અને ભારતવિભાજનના વિકટ કાલખંડમાં સીમાવર્તી ગુજરાતમાં મધુકરરાવે જે રાષ્ટ્રસાધના કરી એને કેવી રીતે ભૂલી શકાય ?

રાષ્ટ્રીય સ્તરના અધિકારીઓને ભાગવતજીના સંગઠન-કૌશલ્ય પર એટલો બધો વિશ્વાસ હતો કે ૧૯૪૩-૪૪માં સંપૂર્ણ ઉત્તર–ભારત અને સિંધપ્રાંત(વર્તમાન પાકિસ્તાન)ના બધા કાર્યકર્તાઓનો પ્રશિક્ષણ-વર્ગ ગુજરાતમાં થવા લાગ્યો. શ્રી લાલકૃષ્ણ અડવાણી જેવા અનેક સ્વયંસેવકોને મધુકરરાવ પાસે શિક્ષણ લેવાનો સુઅવસર પ્રાપ્ત થયો હતો.

માતાજીનો સ્વર્ગવાસ થતાં પરિવારના આગ્રહને કારણે એમણે લગ્ન કરી ગૃહસ્થજીવન સ્વીકાર્યું. લગ્ન પછીના થોડા જ સમયમાં પિતાજીનો પણ સ્વર્ગવાસ થયો. સંઘકાર્યમાં રચ્યા-પચ્યા મધુકરરાવ ગૃહસ્થ પ્રચારક તરીકે ફરીથી એક વાર ગુજરાત પાછા આવ્યા. ગુજરાતના સંઘકાર્યને સ્થિરતા અને પ્રતિષ્ઠા મળે એ માટે એમણે અણથક પરિશ્રમ કર્યો. સ્નેહરૂપ મધુકરરાવના આ કાર્યની કદાચ નિયતિ કસોટી કરવા માગતી હતી. ગુજરાતમાં સંઘ હજી શૈશવકાળમાં જ હતો, ત્યાં ઈ. સ. ૧૯૪૮માં સંઘ પર પ્રતિબંધ આવી ગયો.

સાત વર્ષના સંઘકાર્યરૂપ શિશુ પર લદાયેલ પ્રતિબંધને મધુકરરાવ ચૂપચાપ કેવી રીતે જોઈ રહે ? સૌમ્ય, મિતભાષી, મૃદુ મધુકરરાવના માંહ્યલામાં સંઘર્ષની જ્વાળા ભડકી ઊઠી. મધુકરરાવે એક માની જેમ ૭ વર્ષના શિશુરૂપ સંઘને બચાવવા પોતાની પૂરી શક્તિ લગાવી દીધી. અસત્યની આંધીમાં સત્યની જ્યોત ઝળહળતી રાખવી અને એ પણ ગુજરાતની ધરતી પર, એ કેટલું કઠણ હતું એ તો કલ્પનાથી પણ પર છે. પરંતુ મધુકરરાવ ધૈર્યપૂર્વક તત્કાલીન સ્વયંસેવકોમાં આત્મવિશ્વાસ જગાવતા, સંઘર્ષ માટે તૈયાર કરતા... સત્યાગ્રહની નવી દિશા આપવામાં લાગી ગયા. સ્વાતંત્ર્ય-આંદોલનના કોઈ પણ એક કાર્યક્રમમાં જેટલા લોકોએ સત્યાગ્રહ કરી જેલમાં જવાનું સ્વીકાર્યું ન હતું, તેથી વધુ લોકોએ સંઘ પર મૂકેલા પ્રતિબંધને દૂર કરાવવા ગુજરાતની બધી જેલો ભરી દીધી. કોઈ સારા કાર્ય માટે મનુષ્યના મનને પ્રેરિત કરવામાં વધુ મુશ્કેલી આવતી નથી, પરંતુ સત્કાર્યોને સંકટોથી મુક્ત કરાવવા માટેના સંઘર્ષમાં ખપી જવા એક અલગ પ્રકારની પ્રેરણાની જરૂર હોય છે. મધુકરરાવમાં આ પ્રેરણા પાવાની અદ્‌ભુત ક્ષમતા હતી.

મધુકરરાવ પોતે પ્રચારક રહ્યા અને પોતાના સુપુત્ર શ્રી મોહનરાવ ભાગવતને પ્રચારક તરીકે રાષ્ટ્રચરણે સમર્પિત કરી આ આહુતિયજ્ઞમાં એક નવજ્યોતિ પ્રદાન કરી. પારસમણિના સ્પર્શથી લોખંડ સોનું તો બની જાય છે, પરંતુ પારસમણિના સ્પર્શથી લોખંડ પારસમણિ બનતું નથી. પારસમણિની આ કથાને મધુકરરાવ અને મોહનરાવનું ઉદાહરણ જૂઠી સાબિત કરી દે છે. પારસમણિ મધુકરરાવે પારસમણિરૂપ મોહનજીને તૈયાર કર્યા. મધુકરરાવ સંગઠનશાસ્ત્રની જીવંત વિદ્યાપીઠ હતા.

રાષ્ટ્રનિર્માણની સંસ્કારયાત્રાના આ મહાન યાત્રીનાં પદચિહ્નો પર ભાવપુષ્પ અર્પણ કરીને મારા જેવા સહસ્રો સ્વયંસેવકો પોતાને ગૌરવાન્વિત કરે છે.

મધુકરરાવના જીવનને શત-શત વંદન !





કાર્યનિષ્ઠ
શ્રી અનંતરાવ કાળે...





પ. પૂ. અનંતરાવ રામકૃષ્ણ કાળે

દૃઢ સંકલ્પ અને સ્પષ્ટ યોજના સાથે તેઓ મહારાષ્ટ્રના પ્રસિદ્ધ જોષી કન્સ્ટ્રકશનના કામ માટે ગુજરાતમાં આવ્યા. ખેડા પાસેનો જે વાત્રકનો પુલ છે તે બાંધવાનું કામ હાથ ધર્યું. પુલ બાંધવાના કામનું તો નામ જ હતું. તેમનાં શરીર અને બુદ્ધિ આ નિર્જીવ પુલના બાંધકામની યોજનામાં રત હતાં, પણ હૃદય તો માનવનિર્મિતિની યોજનામાં મશગૂલ હતું. વહેલામાં વહેલી તકે ગુજરાતી ભાષા શીખી લીધી. સંપર્ક વધતાંની સાથે જ સંઘકાર્યનો પ્રારંભ કરી દીધો.

સ્વર મેં સંજીવની હમારે જબ તક રહે ગીત હમ ગાયેં
મુક્તિ-દૂત અપને સાંસોં મેં બંધન કે ભી પંખ લગાયેં






પર્વતોની હારમાળા વચ્ચે વિશાળ વનરાજિ. કુદરતી સંપત્તિથી શોભતા રત્નાગિરિ જિલ્લાના પૂર્વ ભાગે બારેપાટણ નામનો એક નાનકડો તાલુકો છે.

આશરે ૬૦ વર્ષ પૂર્વે પૂ. મહાત્મા ગાંધી અહીંના પ્રજાજનોને આઝાદી કાજે સમર્પિત જીવન જીવવાનો સંદેશો આપવા આવી પહોંચ્યા. જેમની દૂર સુધી ખ્યાતિ પહોંચી હતી એવા મહાત્માના સ્વાગત માટે ચારે તરફ ઉત્સાહનું વાતાવરણ હતું. વિશાળ શમિયાણાની સામે સભામંચ પર નેતાઓ વિરાજમાન છે. દેશનું નેતૃત્વ કરનાર આ મહાનુભાવોની વચ્ચે નજદીકના નાનકડા ગામ ઊંડીલથી બોલાવવામાં આવેલ માંજરી આંખ અને લાલ-ગુલાબી કદાવર શરીરવાળો માંડ અગિયાર વરસની ઉંમરે પહોંચેલો એક બાળક પણ બિરાજમાન છે. હજુ સુધી કોઈનું એના તરફ ધ્યાન નથી.

સોનાનું કડું ધરી દીધું...

મહાત્માજીના આગમન સાથે જ કાર્યક્રમનો પ્રારંભ થાય છે. આ નાનકડો બાળક પોતાના મધુર અવાજે 'વંદે માતરમ્' ગીત લલકારે છે. તેના અવાજની મધુરતા, નિર્ભય વ્યવહાર સૌના આશ્ચર્યનું કેન્દ્ર બને છે.

ગીત પૂર્ણ થતાં જ મહાત્મા ગાંધી આ નાનકડા બાળકને પોતાની પાસે બોલાવે છે, પરિચય પૂછે છે. એના નાનકડા હાથ પર શોભતા સુવર્ણ-કડાને જોવા મથે છે. મહાત્માજીની બાજુમાં બેઠેલા એક સજ્જન આ નાનકડા બાળકને કહે છે : ''મહાત્માજીને તારું આ સોનાનું કડું આપી દે.'' એક પળનોય વિલંબ કર્યા વિના આ બાળકે પોતાના હાથનું કડું દેશોદ્ધાર માટે મહાત્માના હાથમાં મૂકી દીધું ! મહાત્માજી સહિત સૌ બાળકની આ ભાવનાને જોઈ આશ્ચર્ય અનુભવે છે. તેઓ એક શબ્દ બોલે તે પહેલાં તો આ બાળક સડસડાટ મંચ પરથી નીચે ઊતરી ભીડમાં ખોવાઈ જાય છે.

પોતાના વ્યવહારથી બીજાઓનાં હૃદય પર છવાઈ જનાર આ નાનકડો બાળક એટલે સ્વ. પ. પૂ. ડૉ. હેડગેવારજીનો પ્રિય 'અન્તા' અને ગુજરાતમાં રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘમાં સૌના પ્રિય પરિચિત શ્રી અનંતરાવજી કાળે.

સંઘના પરિચયમાં :

અનંતરાવજીના પિતાજીને પોતાના ગામ ઊંડીલમાં પ્રાથમિક શાળા શરૂ કરવાની ખૂબ ઇચ્છા હતી. આવડા નાના ગામમાં અને તાલુકા-કેન્દ્રથી આટલે દૂર સ્કૂલ ચાલુ કરાવવા માટે એમણે એ તાલુકાના શિક્ષણાધિકારીને વિનંતી કરી. તેમના અથાગ પ્રયત્નો પછી એક શરતે તેઓ સહમત થયા. જો ઊંડીલ ગામનાં બાળકો પહેલા ધોરણની પરીક્ષામાં પાસ થાય તો તેઓ આવતા વર્ષે સ્કૂલ શરૂ કરે ! સરકારની આ શરત તેમણે સ્વીકારી લીધી. તે વખતે અનંતરાવજી સાતમા ધોરણમાં બારેપાટણની સ્કૂલમાં અભ્યાસ કરતા હતા. પિતાજીએ તેમને ગામમાં શાળા શરૂ કરવા અંગે વાત કરી. તે માટે અનંતરાવજીએ સાતમા ધોરણ પછી એક વર્ષ માટે અભ્યાસ છોડી દીધો અને એક વર્ષ દરમ્યાન ગામનાં બાળકોમાં અભ્યાસની રુચિ કેળવાય, તેઓ પહેલા ધોરણની પરીક્ષા પાસ કરી શકે તેવી વ્યવસ્થા કરાવી અને એ સ્કૂલ શરૂ કરાવીને જ જંપ્યા.



ગુજરાત આવા જીવનવ્રતીનું ઋણી છે અને આ ઋણ ચૂકવવાનો એક જ માર્ગ છે કે આપણે પણ એક જીવન દ્વારા નિર્માણ પામેલ મૂડીમાં અનેકગણો ઉમેરો કરીએ – આપણા પરિશ્રમથી, આપણા ત્યાગથી, આપણા આદર્શથી અને અક્ષય ધ્યેયનિષ્ઠાથી !

પોતાના ભોગે બીજાના ઉત્કર્ષની આ ભાવના સાથે જ ત્યારબાદ તેઓ આગળના અભ્યાસ માટે પૂના આવ્યા. પૂનામાં તેમને રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘનો સંપર્ક થયો.

નાની ઉંમરે જ તેઓ સંઘમય થઈ ગયા. સંઘસ્થાપક ડૉ. હેડગેવારજીના નિકટ સંપર્કમાં આવ્યા. તેમના જીવનવ્યવહારે અનંતરાવજીના હૃદયમાં સંઘદીપ પ્રજ્વલિત કરી દીધો હતો.

અભ્યાસની કાળજી :

એક વાર એસ. એસ. સી.ની વાર્ષિક પરીક્ષા અને સંઘનો કાર્યક્રમ એક સાથે આવ્યાં ! કાર્યક્રમમાં જવું હોય તો પેપર વહેલું પૂરું કરવું પડે ! અનંતરાવે મિત્રો સાથે નક્કી કર્યું કે કાર્યક્રમ તો ન જ છોડાય. ભાષાનું પ્રશ્નપત્ર હાથમાં આવતાં જ લખવા માંડ્યું. સમય કરતાં એક કલાક વહેલું લેખનકાર્ય આટોપી લીધું. મિત્રો એકબીજાને ઇશારો કરી બહાર જવા

માટે ઊભા થયા. નિરીક્ષકે વધુ એક કલાક રોકાઈને ફરી એક વાર ઉત્તરપત્ર જોઈ જવા આગ્રહ કર્યો, પણ તેઓ ન માન્યા અને સમયસર કાર્યક્રમમાં પહોંચી ગયા. જ્યારે પરિણામ આવ્યું ત્યારે ભાષાના પેપરમાં પ્રથમ વર્ગ મળ્યો હતો. આમ, અભ્યાસની કાળજી સાથે સંઘકાર્યની તત્પરતા એમના જીવનમાં પ્રારંભકાળથી વણાઈ ચૂકી હતી.

૧૯૪૦માં પૂનાના સંઘ શિક્ષા વર્ગોમાં તેઓ શિક્ષક તરીકે ગયા હતા. એ વર્ષે સંઘમાં નવી સંસ્કૃત પ્રાર્થનાનો પ્રવેશ થયો હતો. એક સવારે વર્ગના અધિકારીએ અનંતરાવજીને નવી પ્રાર્થના બતાવી અને સાંજે સંઘસ્થાન પર તે બોલાવવા કહ્યું. સંઘશિક્ષા-વર્ગમાં દિવસભર અનેક કાર્યક્રમોની ભરમાર હોય છે. આટલી વ્યવસ્થા વચ્ચે પણ તેમણે પ્રાર્થના કંઠસ્થ કરી લીધી અને સાંજે શાખામાં ગવડાવી.

સાવરકરજી પ્રભાવિત થયા :

એક વક્તૃત્વસ્પર્ધાના નિર્ણાયક તરીકે વીર સાવરકર હતા. તેઓ અનંતરાવજીના વક્તવ્યથી ખૂબ પ્રભાવિત થયા હતા. તેમણે સામે ચાલીને આ નાનકડા અનંતરાવનો પરિચય કર્યો અને આ પરિચય જીવનપર્યંત ટકાવી રાખ્યો. સાવરકરજી જીવ્યા ત્યાં સુધી વર્ષમાં એક વાર તેમને મળવા જવાનો અનંતરાવજીનો ક્રમ હતો.

પૂનાના સંઘશિક્ષા વર્ગમાં એક સ્વયંસેવક સમય બચાવીને સંગીતના રિયાઝ પાછળ મશગૂલ રહે. પ્રમાણમાં તે બીજાઓ સાથે મળવાનું ટાળે. અનંતરાવજીનું એ તરફ ધ્યાન ગયું. પેલા સ્વયંસેવક જ્યાં જમવા બેસે તેની સામે જ તેઓ મિત્રમંડળી સાથે જમવા બેસતા અને પેલા સ્વયંસેવકની જેમ જાણે સંગીતકારની અદાથી સિતારનો રિયાઝ કરી ચાળા પાડતા. પેલા સ્વયંસેવક ખૂબ ચિડાઈ જતા. આખરે એમણે ડૉ. હેડગેવારજીને ફરિયાદ કરી. ડૉ. સાહેબે અનંતરાવજીને કહ્યું : "ભાઈ, પેલા સુધીર ફડકેને તમે કેમ હેરાન કરો છો...?" બસ, આટલી જ વાત. પ્રસિદ્ધ સંગીતકાર સુધીર ફડકે અનંતરાવજીના મિત્ર બની ગયા !

માનવનિર્મિતિના કાર્યમાં :

ડૉ. હેડગેવારજીનો સંપર્ક તો સાંનિધ્યમાં પરિવર્તિત થઈ ગયો હતો. આથી તેમના જીવનનું લક્ષ્ય નિર્ધારિત થઈ ચૂક્યું હતું. આદ્યસરસંઘચાલકજીના અંતિમ સંદેશથી સંવેદનશીલ અનંતરાવજીનું હૃદય દ્રવી ઊઠ્યું અને ખૂબ નાની વયે વ્યક્તિગત જીવનને તિલાંજલિ આપી. સંપન્ન પરિવારનાં હૂંફ અને સુખ છોડી સંઘની યોજનાથી જીવન જીવવાનો સંકલ્પ કર્યો.

દૃઢ સંકલ્પ અને સ્પષ્ટ યોજના સાથે તેઓ મહારાષ્ટ્રના પ્રસિદ્ધ જોષી કન્સ્ટ્રકશનના કામ માટે ગુજરાતમાં આવ્યા. ખેડા પાસેનો જે વાત્રકનો પુલ છે તે બાંધવાનું કામ હાથ ધર્યું. પુલ બાંધવાના કામનું તો નામ જ હતું. તેમનાં શરીર અને બુદ્ધિ આ નિર્જીવ પુલના બાંધકામની યોજનામાં રત હતાં, પણ હૃદય તો માનવનિર્મિતિની યોજનામાં મશગૂલ હતું. વહેલામાં વહેલી તકે ગુજરાતી ભાષા શીખી લીધી. સંપર્ક વધતાંની સાથે જ સંઘકાર્યનો પ્રારંભ કરી દીધો. પુલના બાંધકામની જવાબદારી પૂર્ણ થતાં જ જોષી કન્સ્ટ્રકશનની નોકરીને રામરામ કરી દીધા. મહારાષ્ટ્ર ભૂલીને ગુજરાત સાથે આત્મસાત્ થયા. લક્ષ્યની પ્રાપ્તિ માટે નડિયાદને કાર્યક્ષેત્ર બનાવ્યું. સંઘકાર્યના એ પ્રારંભના દિવસો માનવીની સામાન્ય જરૂરિયાતો જેવી કે અન્ન, રહેઠાણ-સ્થાન ઇત્યાદિની કોઈ પણ સુવિધા નહીં. અનેકવિધ કષ્ટ વચ્ચે પણ અહર્નિશ સંઘકાર્યની સાધના ચાલતી. જોતજોતામાં અનેક સહકાર્યકરોનું જૂથ તૈયાર થઈ ગયું.

> સંઘકાર્ય કરતાં-કરતાં કોઈ પણ નિર્ણયનાં તત્કાળ અને દૂરગામી પરિણામો શું થશે તે માટેનો તેમને ચોક્કસ અંદાજ રહેતો. પ્રમાણમાં તેઓ ક્યારેક જ અભિપ્રાય આપતા, પરંતુ જ્યારે પણ તેમનો અભિપ્રાય મળતો ત્યારે તેમનો અંદાજ સાચો જ નીકળતો. કટોકટી-કાળના દિવસોની એક ઘટનાનું આજે પણ ઘણું મહત્ત્વ છે.

સંઘકાર્યની તપશ્ચર્યા :

એક વાર એક સ્વયંસેવકે આગ્રહપૂર્વક તેમના માટે ફૂલકોબીજનો દડો શાક બનાવવા માટે ભેટ આપ્યો, પણ રોટલી અને શાક બંને ખાવાનું તો ક્યાંથી પરવડે ? એ દિવસ તો રોટલીના લોટની બચત કરી, ફક્ત બાફેલ કોબીજથી જ ચલાવ્યું અને ભગવાન મળ્યા જેટલો સંતોષ માન્યો. પેલા સ્વયંસેવકને પણ અનંતરાવજીએ પોતાની ભેટ સ્વીકાર્યાનો

આનંદ થયો. એના ઉત્સાહમાં ઉમેરો થયો અને પ્રતિદિન શાક પહોંચાડવા લાગ્યા. અનંતરાવજી દિવસો સુધી લાગલગાટ બાફેલા શાક ઉપર જ રહ્યા અને લોટના પૈસા બચાવ્યા, જેથી નજીકનાં ગામોમાં સંઘકાર્ય માટે કોઈને મોકલવા હોય તો સાઈકલ-બસનું ભાડું ચૂકવી શકાય. સંઘના પ્રારંભકાળની તેમની તપશ્ચર્યામાં આજે પણ કોઈ અંતર આવ્યું નથી. એ સાચું કે તેમને ભોજનમાં મિષ્ટાન્ન ખૂબ પ્રિય, એકબે કિલો શિખંડ, જલેબી કે આઈસ્ક્રીમ ખાવાં એમના માટે રમતવાત અને તેમ છતાંય આજ સુધી તેમણે ક્યારેય સમાજકાર્ય માટે મળેલ ગુરુદક્ષિણાના પૈસામાંથી પોતાના સ્વાદ માટે એક કણ પણ ખાધો નથી.

પ્રસિદ્ધિથી પર :

ગુજરાતમાં દરેક ઉનાળામાં સંઘશિક્ષા-વર્ગ થાય છે. એક મહિનાના આ કૅમ્પમાં ગુજરાતમાંથી ૫૦૦ જેટલા કાર્યકરો શિક્ષણ લેતા હોય છે. પ્રત્યેક વર્ષે પૂ. ગુરુજી જ્યારે આ વર્ગની મુલાકાત લેવા આવે ત્યારે તેમની સાથે ડૉ. આબાજી બધા સ્વયંસેવકો માટે કેરીના કરંડિયા લાવે. એક પણ વર્ષ આ ક્રમ તૂટે નહીં. પણ આ કેરીઓ ક્યાંથી આવે છે, કોણ મોકલાવે છે એની કોઈને ખબર જ નહીં. બહુ મોડેથી હમણાં-હમણાં ખબર પડી કે અનંતરાવજીના ઘરેથી તેમના આંબાની પ્રસિદ્ધ રત્નગિરિની કેરીઓ તેમના પરિવાર તરફથી આવે છે.

પોતાના વિશે કશું પણ ન કહેવાના તેમના સહજ સ્વભાવને કારણે ૧૯૪૬માં જ્યારે તેમનાં માતુશ્રીનો સ્વર્ગવાસ થયો ત્યારે તેઓ સ્થાનિક કાર્યકર્તાઓને કહીને પોતાને વતન ગયા. અહીંના સાથી કાર્યકરો તેમને આશ્વાસનપત્ર લખવા ઇચ્છતા હતા, પણ કોઈ કહેતાં કોઈની પાસેથી તેમના વતનના ગામનું નામ સુધ્ધાં મળી શક્યું નહોતું !

અનંતરાવજીની માતૃભાષા મરાઠી હોવા છતાં તેમણે અનેક છંદોબદ્ધ કાવ્યોની ગુજરાતી ભાષામાં રચના કરી છે. ભાવના અને વિચારોનાં ઉત્કૃષ્ટ કાવ્યોનો એક અલગ સંગ્રહ પ્રસિદ્ધ કરી શકાય તેટલી સંખ્યામાં છે અને છતાંય કાવ્ય સ્વયંસેવકોની જીભે રટતું થઈ ગયા છતાં એના રચયિતા વિશે ગાનાર અજાણ છે. તેઓ માત્ર કવિ જ નહિ, એક સારા ગીતગાયક પણ હતા. અને તેથીયે વધારે તેઓ સારા ગીતશિક્ષક પણ હતા.

અનંતરાવજીને ક્યારેક અસ્વસ્થતા લાગે અથવા તાવ આવે તો કોઈ પોતાની પાસે જામી ન જાય એ માટે ખૂબ પ્રયત્ન કરે. સાથી કાર્યકરોનો સમય પોતાની સેવામાં ન વેડફાય એના માટે સતત ચિંતા રાખે. કટોકટી પછી સંઘના



અખિલ ભારતીય અધિકારીઓની એક બેઠક અમદાવાદમાં મળી હતી. એ દિવસોમાં અનંતરાવજીથી અકસ્માત થવાને કારણે ચાલી શકાતું નહોતું. આવનાર અધિકારીઓને આની જાણ થશે તો તેમને દુઃખ થશે, અને એટલા જ માટે તેઓ તે દિવસો દરમ્યાન સંઘ કાર્યાલય છોડીને પાલડીમાં એક ઓરડીમાં રહેવા જતા રહ્યા, જ્યાં કોઈ જ સુવિધા નહોતી.

શિયાળાની કડકડતી ઠંડીમાં પણ અનંતરાવજી પાસે પહેરવા-ઓઢવા માટે ગરમ કપડાં કે બીજું કશું હતું નહીં, તેથી શ્રી નાથાભાઈ દિલ્હીપ્રવાસેથી આવતાં એક ગરમ શાલ લઈ આવ્યા. તે શાલ આનંતરાવજીને ભેટ આપી. તેમને ગમી પણ ગઈ. પણ જ્યારે તેમણે જાણ્યું કે આ સાલ ૧૦૦ રૂપિયાની કિંમતની છે કે તરત જ એ શાલ તેમણે પરત આપી દીધી. પોતાના જીવન માટે આટલા બધા કઠોર હોવા છતાં સાથી કાર્યકરો માટે તેઓ એટલા જ સહૃદયી. કટોકટી દરમ્યાન સંઘના એક પ્રચારક શ્રી મગનભાઈ ભૂગર્ભવાસ દરમ્યાન પકડાઈ ગયા. જેલમાં પોતાની પાસે કોઈ સામાન નહીં. શિયાળાના દિવસો શરૂ થતાં જ એક દિવસે ભાવનગર જેલ પર એક મુલાકાતી ગરમ સ્વેટર અને ધાબળો લઈને આવી પહોંચ્યો. અનંતરાવજી કટોકટીના દિવસોની માનસિક ખેંચતાણ અને અનેકવિધ કામો વચ્ચે પણ પોતાના સાથીની ચિંતા વીસર્યા નહોતા. આ સામાન અનંતરાવજીએ જ મોકલાવ્યો હતો. *वज्रादपि कठोराणि मृदुनि कुसुमादपि* । એ ઉક્તિને સમજવા માટે અનંતરાવજી કરતાં વધુ યથાર્થ

ઉદાહરણ ક્યું હોઈ શકે ?

એક વાર અમે ટીખળી મિત્રો બેઠા હતા. મિત્રોમાં ચર્ચા ચાલી. પરિસ્થિતિ-નિરપેક્ષ એટલે શું ? અનેકવિધ તર્કવિતર્કની વચ્ચે એક મિત્રે કહ્યું, પરિસ્થિતિ-નિરપેક્ષ એટલે અનંતરાવજી. એમની વાત વ્યાખ્યા માટે નહીં, પણ હૃદય સોંસરી ઊતરી જાય તેવી ટકોરાબંધ હતી. ગમે તે પરિસ્થિતિમાં સૌએ તેમને એવા ને એવા જ જોયા છે. વિપરીત પરિસ્થિતિમાં ક્યારેય ઉશ્કેરાટ નહીં. સફળતા પછી કોઈ ઉમંગની અભિવ્યક્તિ નહીં. બસ... એ જ સાતત્યપૂર્ણ જીવન. ગમે તે ઋતુમાં પણ તેઓ સૌના કરતાં વહેલા સાડાચાર વાગ્યે ઊઠીને તૈયાર થઈ જ ગયા હોય અને એક ખૂણામાં બેસીને મધુર બંસીવાદન કરતા હોય. *या निशा सर्व भूतानाम् तस्याम् जागर्ति संयमी* – આ સૂત્ર જાણે તેમણે આત્મસાત્ કર્યું છે. એક જ પ્રકારનો સફેદ ધોતી-ઝભ્ભો, એ જ વર્ષો જૂની ચશ્માંની ફ્રેમ, ધૂળથી ખરડાયેલ ખાસ્સી વજનદાર મોજડી, હાથમાં બૅગ કે થેલી અને મુખ પર મોહક સ્મિત. ૧૯૪૦માં જોનારને કે ૧૯૮૦માં જોનારને કોઈ કહેતાં કોઈ ફરક જ નહીં. વધતી ઉંમરે વાળ ધોળા કર્યા છે. પ્રવાસમાં બસ અથવા પગપાળા જતા હોય ત્યારે પણ પોતે તો કામમાં જ હોય અને તે કામ એટલે ગીતાપાઠ. પ્રવાસ દરમિયાન તેઓ ગીતાના બધા જ શ્લોકોનું ઉચ્ચારણ કરે. બાલ્યકાળથી જ તેમને પૂરી ગીતા કંઠસ્થ હતી.

બાળપણથી જ શિક્ષણમાં રુચિ ધરાવતા અનંતરાવજીએ પોતાના પરિશ્રમથી પ્રભાવી શિક્ષણસંસ્થાઓનું નિર્માણ કર્યું છે. ધોળકાની સરસ્વતી સ્કૂલ, સિદ્ધપુરની અભિનવ હાઈસ્કૂલ, કડીની આદર્શ હાઈસ્કૂલ, ડીસાની આદર્શ હાઈસ્કૂલ કે દૂર વનવાસીક્ષેત્ર પાલનું સરસ્વતી વિદ્યાલય આજે શિક્ષણનાં સારાં ધામ બન્યાં છે. આ વિદ્યાધામોની નિર્મિતિના મૂળમાં અનંતરાવજી હોવા છતાંય તેઓ ક્યારેય ક્યાંય ટ્રસ્ટી ન રહ્યા કે ન તો સલાહકાર-સમિતિમાં રહ્યા. છતાંય એ શાળાઓ આવા તપસ્વી જીવનની પ્રેરણા અને પરિશ્રમનું પરિણામ છે તેવું ગૌરવ લઈ શકે છે.

સંઘકાર્ય કરતાં-કરતાં કોઈ પણ નિર્ણયનાં તત્કાળ અને દૂરગામી પરિણામો શું થશે તે માટેનો તેમને ચોક્કસ અંદાજ રહેતો. પ્રમાણમાં તેઓ ક્યારેક જ અભિપ્રાય આપતા, પરંતુ જ્યારે પણ તેમનો અભિપ્રાય મળતો ત્યારે તેમનો અંદાજ સાચો જ નીકળતો. કટોકટી-કાળના દિવસોની એક ઘટનાનું આજે પણ ઘણું મહત્ત્વ છે.

સંઘના સ્વયંસેવકોએ તેમની પૂરી શક્તિ જનતાપક્ષને વિજયી બનાવવા ખર્ચવી એવું નક્કી થયું હતું. ચૂંટણીમાં વિજયી થવા બાબત અનંતરાવજી સહિત અમે સૌ ખૂબ આશાવાદી હતા અને બન્યું પણ તેવું જ, પણ એક બાબતે અમારામાં મતભિન્નતા હતી. અને તે મતભિન્નતા એટલે જનતાપક્ષના વિજયનાં દૂરગામી પરિણામો અંગે ચૂંટણી સમયે જ તેમણે ભારપૂર્વક કહ્યું હતું : “લોકશાહી માટે આ બધાને વિજયી બનાવવા એ સમયની આવશ્યકતા છે. પણ સત્તાધીશ બન્યા પછી તેઓ પહેલું કામ આર. એસ. એસ.ને ગાળો દેવાનું કરશે, અને તે માટે આપણે સહન કરવાની તૈયારી રાખવી.” એ વખતે તેમની આ વાત મારા જેવા અનેકોના ગળે ઊતરી નહોતી. અમે ખૂબ આશાવાદી હતા. પણ પરિણામ એ જ આવ્યું, જેવું અનંતરાવજીનું અનુમાન હતું. સંઘને બલિનો બકરો બનાવવાનું કામ આવા મહાનુભાવોએ જ કર્યું. અનંતરાવજીનો અનુભવ અને દીર્ઘદૃષ્ટિ સત્ય પુરવાર થયાં. અમારો ઉમંગ અને અનુભવ ઊણા ઊતર્યા.

ગુજરાતની ભૂમિ પર ચાલીસ-ચાલીસ વર્ષોથી એક તપસ્વીની અખંડ સાધના ! કેટકેટલા પ્રસંગો ! કેટકેટલા અનુભવો ! કેટલાયે પ્રકારનાં કષ્ટોની પરાકાષ્ઠા !

ગુજરાત આવા જીવનવ્રતીનું ઋણી છે અને આ ઋણ ચૂકવવાનો એક જ માર્ગ છે કે આપણે પણ એક જીવન દ્વારા નિર્માણ પામેલ મૂડીમાં અનેકગણો ઉમેરો કરીએ – આપણા પરિશ્રમથી, આપણા ત્યાગથી, આપણા આદર્શથી અને અક્ષય ધ્યેયનિષ્ઠાથી !




માનવંદના



૧૯૪૦માં એન્જિનિયર તરીકે ગુજરાતમાં આવીને રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના પ્રચારક તરીકે રાષ્ટ્રકાર્યને સમર્પિત થઈ ગયેલા શ્રી અનંતરાવ રામકૃષ્ણ કાળેએ ૧૨મી સપ્ટેમ્બરે વતન તરફ વિદાય લીધી.

એમના વતન ઊંડીલ, તા. દેવગઢ, જિ. સિંહદુર્ગ (મહારાષ્ટ્ર) તરફના પ્રયાણની વિદાયવેળાએ કલમમાંથી અનાયાસ સરી પડેલું એક શ્રદ્ધાસુમન.

હસતી...કૂદતી...દોડતી...
કલ્લોલ કરતી...
ધરાને સુજલામ્ સુફલામ્ કરતી
નદી...
જોવાનું કેટલું ગમે છે –
ધસમસતી વાયુવેગી નદી
જ્યારે સાગરની કૂખમાં
સમાઈ જાય છે...
એ વેળા કેટલી અદ્દ્ભુત હોય છે !
સૌંદર્યની છોળોથી
આંખો પણ ઊભરાઈ જાય... !
સૂર્યોદયની વેળા યાદ આવે છે ?
રક્તરંગી આકાશ,
પક્ષીઓનો કલરવ,
ગોધણની ગતિ,
ધરાની ધૂળની રજકણો વચ્ચેથી
ચળાઈને આવતાં
સુકોમળ કિરણોનો સ્પર્શ
કેટલો વહાલો લાગે છે !
મધ્યાહ્નના સૂર્યતેજની પ્રખરતા
આપણને કેવી આંજી દે છે !
સૂર્યની અ-વિરામ ગતિ...
વળી...
ક્ષિતિજની પેલે પાર ડોકાય છે
એક મુકામ...
પળ બે પળનો...
એ જ સૌમ્ય લાલિમા
આંખ સ્થિર થઈ જાય છે...
મન કહે છે આ સૌંદર્યને
કોઈ આભડી ન જાય...
આંખ, મન, બુદ્ધિ –
આ અપ્રતિમ સૌંદર્યસૃષ્ટિને
પામવામાં કેવાં ગૂંથાઈ જતાં
હોય છે !
પણ ક્યારેક
હૃદય કંઈક બીજું જ અનુભવે છે.
આંખે દેખાતા...
મનથી વિચારાતા...
બુદ્ધિથી તર્કમય...
એવા જગતને પેલે પાર
હૃદયનું સ્પંદન
રચે છે
ભાવવિશ્વ !
સાગરમાં સમાઈ
વિલીન થયે
નદી,

કાર્યનિષ્ઠ શ્રી અનંતરાવ કાળે

ચારેકોર છવાતા જતા
અંધકાર વચ્ચે
ક્ષિતિજની પેલે પાર
લોપાઈ ગયેલ
શાંત, સ્વસ્થ, સૂર્યની સ્મૃતિ...
આ ભાવવિશ્વને ક્યારેક
કરુણાના રંગે રંગે છે,
તો ક્યારેક
વિરહના વિષાદમાં ડુબાડી દે છે,
તો ક્યારેક
નદી સાગર થઈ ગયાના
સંતોષનું એકાદ બિંદુ ટપકે છે;
તો ક્યારેક
ઉદિત થતો ચંદ્રમા
શીતળતા રેલાવતી ચાંદની
ટમટમ થતા તારાઓના અહોભાવ
અંધારાં ઉલેચવાની
ચંદ્રની મથામણ
શાંત...સ્વસ્થ...સૂર્ય



નિષ્કામભાવે
અમીનજરે નિહાળી રહ્યો છે...
કૃપા વરસાવી રહ્યો છે.
ગીતાના કર્મયોગનો
સાર્થ ભાવ અનુભવાય છે.
આ ભાવવિશ્વ અમસ્તું નથી રચાયું.
ક્ષિતિજની પેલી પાર
ડોકાવાનું મન થયું
તેની પાછળ
એક ઘટના છે,
એક પ્રેરણા છે.
એક અખંડ તપસ્વી જીવન...
દિવેટની જેમ સતત જલતા રહી
અખંડ જ્યોતિ ફેલાવતું
જીવન...
રત્નાગિરિની
ગિરિકંદરાઓમાં આવેલ
ઊંડીલ જેવા નાનકડા ગામમાં
જન્મેલ એક શિશુ
યૌવનના ઉંબરે પહોંચતાં જ
સર્વસ્વનો ત્યાગ કરી
માતૃભૂમિના કલ્યાણના સંકલ્પ સાથે
આજથી ૪૦ વર્ષ પહેલાં
ગુજરાતને પોતાની કર્મભૂમિ બનાવે છે.
ચહેરા પર સદાય રમતું
સહજ સ્મિત,
આખોમાં ઊભરાતાં સ્વપ્ન,
ક્યારેક વાંસળીના સૂર,
ક્યારેક સૂરીલાં ગીત,
અત્યંત મૃદુ જીવનમાં
વિરાજિત
કર્મકઠોર સાધનાના
કેટકેટલાયે સાક્ષી છે !

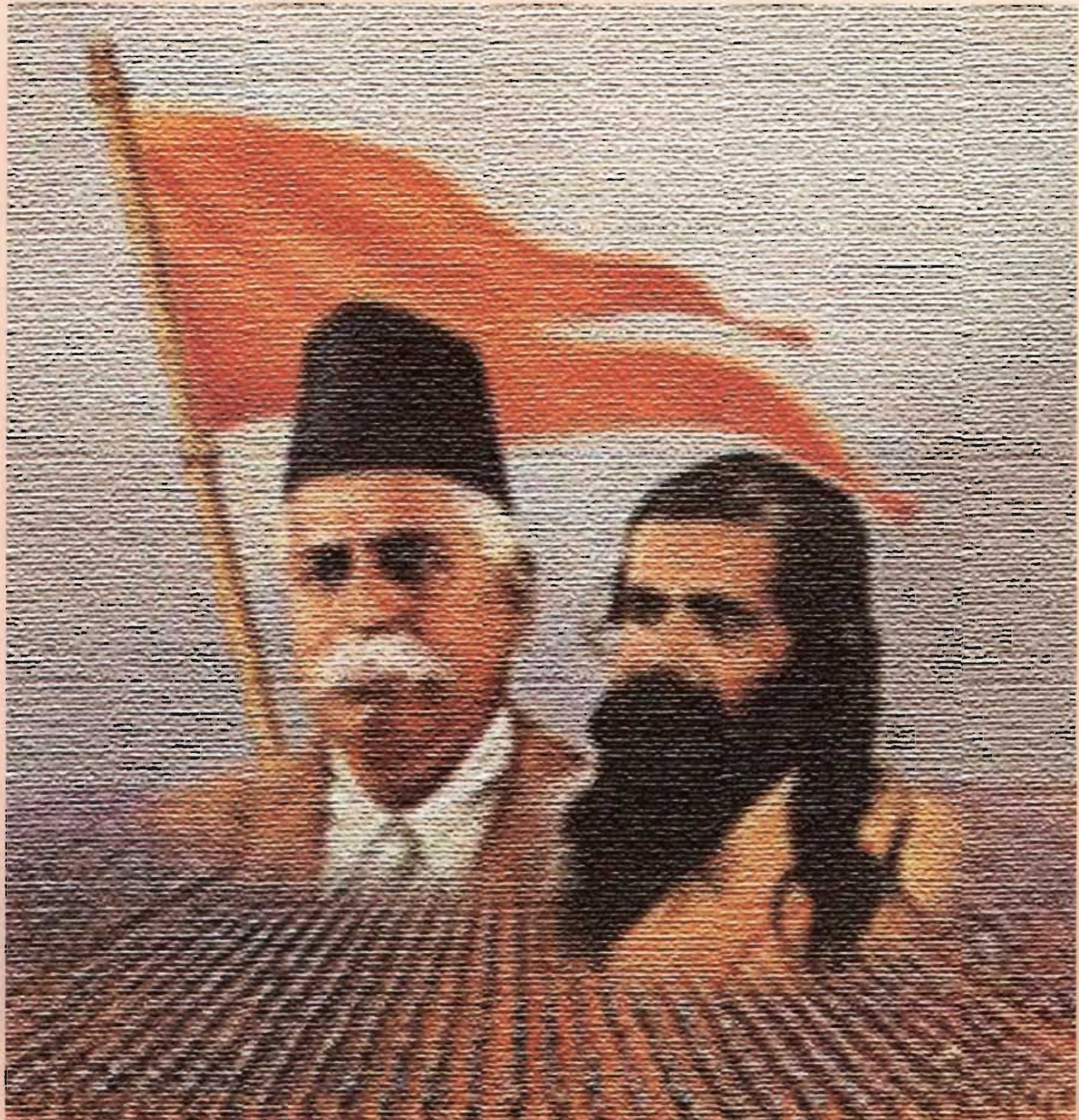
આજે તેમના કર્મની ગાથા કહેવા કલમ નથી ઉપાડી...
આજે તો
ક્ષિતિજની પેલે પારના સૂર્યની વાત,
સાગરમાં સમાયેલ
નદીની વાત કરવી છે.
બારમી સપ્ટેમ્બર ૧૯૮૮ !
વલસાડનું
રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘનું કાર્યાલય...
જેમના કાને વાત પહોંચી ગઈ છે
એવા માંડ બે-ચાર સહકાર્યકરો વચ્ચે
મુક્ત હાસ્ય વેરતું
હજારોને પ્રેરણા આપનારું
સાવ સહજ વ્યક્તિત્વ
નિર્લેપભાવે બેઠું છે.
૪૦ વર્ષ પૂર્વે
રક્તરંગી વર્ણ સાથે
ફાટફાટ થતા યૌવન સાથે
ગુજરાતની ભૂમિ પર આવેલ
આ કર્મવીરનું શરીર
સાવ ક્ષીણ થઈ ગયું છે.
હવે આ શરીર પાસે
માતૃભૂમિને, આ સમાજને
આપવા માટે કંઈ શેષ રહ્યું નથી !
અને તેથી જ તેમણે નિર્ણય કર્યો છે :
૪૦ વર્ષ પછી
ઊંડીલની ભૂમિ પર પાછા જવાનો.
જે ધરા પર જન્મ લીધો હતો
ત્યાં
શેષ જીવન પૂર્ણ કરવાનો...
આજ તેમની વિદાયની પળ છે.
એક પ્રકાશમાન જીવન
ક્ષિતિજની પેલે પાર
શાંત સ્વસ્થ ભાવે
વિરામને વરવા
પ્રસ્થાન કરનારું છે.
ગીતા વાંચીએ છીએ,
ગીતા સાંભળીએ પણ છીએ.
'નિષ્કામ કર્મયોગ'નું
સાક્ષાત્ સ્વરૂપ
આજે પહેલી વાર દષ્ટિગોચર થાય છે.
ખીલતા કે ખીલેલા કમળનું
સૌંદર્ય તો સહુએ માણ્યું હશે.



સૂર્યાસ્તની વેળાએ
પાંખડીઓને બંધ કરી દેતા
કમળના સહજ ભાવને
અનુભવવાની આ વેળા છે.
સાપને પણ સૌંદર્ય હોય છે,
તેની કાંચળીનું.
કાંચળી તેને
સૌંદર્ય જ નહીં રક્ષણ પણ બક્ષે છે –
અને છતાંય
સહજભાવે એ કાંચળીને તે
પોતાથી અલગ કરી દે છે.
બસ...
એટલું જ સહજ...
એટલું જ સ્વાભાવિક...

એટલા જ નિષ્કામ-ભાવે...
શાંત, સ્વસ્થ, સહજ રીતે
કર્મક્ષેત્રથી જન્મક્ષેત્ર
તરફનું આ પ્રયાણ...
પરંતુ ભાગ્ય એમને
પુનઃ ખેંચી લાવ્યું
તીર્થભૂમિ તરફ...
ભૂમિમાં જ
સમાવિષ્ટ થવા માટે...
જે શરીરસંપત્તિ સાથે અહીં આવ્યા,
એ સંપત્તિ પણ પોતાની પાસે
રહેવા દીધી નથી.
જીવનનાં ચાલીસ વર્ષ સુધી
જીવનની પ્રત્યેક ક્ષણ
શરીરના પ્રત્યેક કણને
કર્મયજ્ઞમાં હોમતા રહ્યા છે
અને તેમાંથી પ્રગટી છે
શત-સહસ્રોની પ્રેરણા...
પડઘાયા છે
'રાષ્ટ્રાય સ્વાહા ઇદમ્ ન મમ'
મંત્રો...
આ તેજપુંજ સમા
જીવનનું નામ છે
અનંત રામકૃષ્ણ કાળે...
મા. અનંતરાવજી
તેમના પ્રસ્થાનની પળને
પ્રણામ કરવાની તક મળી ગઈ...
જીવન ધન્યતા અનુભવે છે,
ઊંડે-ઊંડે ગૌરવ પ્રગટે છે કે...
આપણને તેમના સહકાર્યકર બનવાનું
સૌભાગ્ય મળી ગયું.
ફરી સ્મરું છું
સાગરમાં સમાયેલ નદીને...
ક્ષિતિજની પેલે પારના સૂર્યને
બિડાયેલ કમળને...
અને...
હૃદયથી, મનથી, બુદ્ધિથી
કરબદ્ધ વંદન કરવા પ્રેરાઉં છું,
આપની જેમ જ...







ગતિશીલ વ્યક્તિત્વ : શ્રી કેશવરાવ દેશમુખ



 પ. પૂ. શ્રી કેશવરાવ દેશમુખ 

કાશીના વિદ્વાન પરિવારનું
સંતાન. ગંગાની પવિત્ર ધારામાં
તેમણે બચપણ વિતાવ્યું.
તેમનું આખું કુટુંબ સંઘને સમર્પિત. કુટુંબનો દરેક
સભ્ય સંઘકાર્ય માટે વધુ ને વધુ ત્યાગ કરવાની સ્પર્ધા
કરે તેવું પરિવારનું વાતાવરણ. આવા ઉચ્ચ સંસ્કારો
સાથે ગુજરાતને કર્મભૂમિ બનાવનાર
ગંગા-મૈયાના ખોળે ઊછરેલ કેશવરાવનો દેહ
૨ માર્ચ, ૧૯૮૧ના દિવસે
સાબરના સંગે પંચમહાભૂતમાં
વિલીન થઈ ગયો.

સ્વેચ્છા સે જીવન અપના,
રાષ્ટ્ર કે આધીન કિયા,
કાર્યશક્તિ કા એક હૃદય સે
સંગઠના કો દાન દિયા.





મહારાજા સયાજીરાવ યુનિવર્સિટી – વડોદરા

રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘ લગભગ આઠ દાયકા જૂનું માનવનિર્માણનું એક મૂક આંદોલન છે. 'માનવી માનવ થાય તો ઘણું' તે મંત્રને સાકાર કરવાનો સંનિષ્ઠ પ્રયાસ એટલે સંઘકાર્ય. એક પ્રકારે સંઘકાર્ય સંગઠનશાસ્ત્રની ઓપન યુનિવર્સિટી જેવું બની ગયું છે. આઠ દાયકાના અખંડ-એકનિષ્ઠ પુરુષાર્થને કારણે દેશવ્યાપી વ્યવસ્થિત માળખું ઊભું થયું છે. તેમાં યોગ્ય નિર્ણયપ્રક્રિયા વિકસી છે. દરેક કાર્યને રાષ્ટ્રહિતને ત્રાજવે તોલવાનાં ઉચ્ચતમ મૂલ્યો પ્રસ્થાપિત થયાં છે. માળખું, વ્યવસ્થા, પ્રક્રિયા બધું જ ઉપલબ્ધ હોય, તેમ છતાંય તેની સારસંભાળ લેવાની જવાબદારી કોની પાસે છે, તેનું નેતૃત્વ કોણ કરે છે તેના ઉપર ઘણુંબધું નિર્ભર કરતું હોય છે.

ગુજરાતમાં ત્રણચાર દાયકાના અનેકોના પુરુષાર્થ અને ત્યાગ-તપસ્યાને કારણે સંઘનો પાયો મજબૂત બન્યો. માળખું પણ ખાસ્સું વિસ્તર્યું. એવા સમયે સ્વ. શ્રી કેશવરાવ દેશમુખે ગુજરાતમાં સંઘના પ્રાંતપ્રચારક તરીકે કાર્યભાર સંભાળ્યો. સંઘજીવનમાં પ્રાંતપ્રચારક ઘણી મહત્ત્વની ભૂમિકા ભજવી શકતા હોય છે. દેશમુખજીના પ્રાંતપ્રચારક તરીકેના કાર્યકાળને જોઈએ તો તેમની કાર્યશૈલી અને વ્યક્તિત્વની અદ્ભુત છાપ ગુજરાતના સંઘજીવન પર વરતાય છે. સંઘના મજબૂત પાયા ઉપર સમાજને સર્વસ્પર્શી સંઘકાર્યનો વિસ્તાર તેમની પ્રાથમિકતા રહ્યો. ગુજરાતના સંઘજીવનમાં સહજ રીતે કાયાકલ્પ થાય અને ૩૦થી ૫૦ની ઉંમરની નવી ટીમ સમગ્ર કાર્ય કરતી થાય, સંઘની જુનવાણી છબી બદલાય, સંઘ સમાજજીવનથી અલગ-અલગ, એકલો-અટૂલો ટાપુ ન રહેતાં સમાજજીવનનાં સુખ-દુઃખનો હામી બને, સંઘજીવન અને સમાજજીવન સમરસ બને એવાં અનેક સપનાં સાકાર કરવા માટે તેમણે સફળ વ્યૂહ અપનાવ્યો. કેશવરાવ દેશમુખની કાર્યશૈલી સતત વિકાસશીલ રહેતી. નવું આવકારવા-સ્વીકારવા તેઓ સદા તત્પર રહેતા. તેમનું વ્યક્તિત્વ ગતિશીલ હતું. તેમનું જીવન કર્મશીલ હતું, તેમનો પ્રયાસ પરિવર્તનશીલ રહેતો, તેમની શોધ ઊર્જાવાન રહેતી, તેમનો વ્યૂહ પ્રાણવાન રહેતો. શ્રી કેશવરાવ દેશમુખનું જીવન જેટલું ગતિશીલ હતું તેના કરતાં પણ તેમનું મૃત્યુ વધારે ગતિશીલ બની રહ્યું. જોતજોતામાં પલકના ઝબકારામાં હાલતું-ચાલતું, અનેકોને દોરતું વ્યક્તિત્વ શાંત થઈ જાય એ પળની કલ્પના પણ અત્યંત હૃદયવિદારક છે !

વ્યક્તિના જીવનમાં ક્યારેક એવા અંતર્વિરોધની અચંબાભરી ઘટનાઓ આકાર લેતી હોય છે, જેથી ઘટનાની તીવ્રતા અનેકગણી વધી જાય છે. કેશવરાવ દેશમુખનું મૃત્યુ આવ્યું નહોતું, મૃત્યુ જાણે વીજળીની જેમ ત્રાટક્યું હતું. વિધિની વક્રતા તો એ હતી કે વર્ષ-પ્રતિપદાના રોજ જન્મેલા કેશવરાવ દેશમુખ ૬૦ વર્ષ પૂર્ણ કરનાર હતા. કાશીમાં તેમનાં કુટુંબીજનોએ ષષ્ટિપૂર્તિ માટે ધાર્મિક વિધિનું આયોજન કર્યું હતું. પ્રચારક તરીકે યુવાન વયમાં ઘર છોડનાર કેશવરાવ માટે પરિવારનો પહેલો પ્રસંગ હતો. એક વર્ષ પહેલાંથી તૈયારીઓ ચાલતી હતી. આર. એસ. એસ.ના સરસંઘચાલક પ. પૂ. બાળાસાહેબે કાર્યક્રમમાં હાજરી આપવા હા પાડી હતી. કાશીના પંડિતવર્ગમાં પણ વિશિષ્ટ ધાર્મિક અવસરનો અનેરો આનંદ હતો. વર્ષભરથી ચાલતી તૈયારીઓ પૂર્ણ થઈ ગઈ હતી. ગુજરાતમાંથી પણ મારા જેવા અનેક સાથીઓ કાશીમાં તેમની ષષ્ટિપૂર્તિના સમારોહમાં હાજરી આપવાના હતા. માંડ ગણતરીના દિવસો બાકી હતા તે પૂર્વે જ કેશવરાવ દેશમુખે દેહત્યાગ કરી દીધો. આપણે કલ્પના કરી શકીએ કે ષષ્ટિપૂર્તિની ઉજવણી તેના આખરી તબક્કામાં હોય તેવી વેળાએ અચાનક જ તેમની વિદાય થઈ જાય ત્યારે ઘટનાની તીવ્રતા અસહ્ય બની જતી હોય છે.

દેશમુખજીને પ્રાંત-પ્રચારક તરીકે માંડ એક દશકાનો સમય મળ્યો, પરંતુ આટલા ટૂંકા ગાળામાં ગુજરાતના સંઘજીવનને દરેક સ્તરે નવી પેઢી કામ કરતી કરી આપી. પ્રમાણમાં ઘણા જુનિયર કહી શકાય તેવા અનેકોને તેમની ક્ષમતા અને યોગ્યતા પ્રમાણે જવાબદારીઓ આપતા ગયા. સંઘ જેવા વર્ષો જૂના કાર્યમાં અને આટલા વ્યાપક રીતે વિસ્તરેલા કાર્યમાં ઝડપથી વ્યક્તિનું કે વ્યવસ્થાનું પરિવર્તન લાવવું અઘરું હોય છે. પરંતુ દેશમુખજીએ તેમના ટૂંકા સમયના કાર્યકાળમાં સ્થગિતતાને ભેદીને નવી વ્યવસ્થાઓને વિકસાવવાનું સાહસપૂર્ણ કાર્ય કર્યું.

એવી અસહ્ય તીવ્ર વેદના આપનાર બીજા પણ સંજોગો ઊભા થયા. કેશવરાવ દેશમુખનો જન્મદિવસ (ઈ. સ. ૧૯૨૧) અને પ. પૂ. ડૉ. હેડગેવારજીનો જન્મદિવસ ચૈત્ર સુદ ૧નો વર્ષ-પ્રતિપદાનો દિવસ હતો. જોગાનુજોગ કેશવરાવનું મૃત્યુ થયું તે દિવસ પ. પૂ. ગુરુજીનો જન્મદિવસ હતો.

વડોદરામાં સંઘના સ્વયંસેવકોએ પૂ. ગુરુજીનો જન્મદિવસ અનોખી રીતે ઊજવવાનું આયોજન કર્યું હતું. સંઘગીત સાથે, સંગીત મઢેલી એવી 'સ્વરાંજલિ'ના કાર્યક્રમનું

આયોજન કર્યું હતું. વડોદરાના ગાંધીનગરગૃહમાં ગીત, સંગીત અને વૃત્તની ત્રિવેણીના અદ્દભુત યોગે સમગ્ર વાતાવરણને ભાવપૂર્ણ બનાવી દીધું હતું. ગીત-સંગીત દ્વારા પ. પૂ. ગુરુજીના જીવનનો ચિતાર જાણે ખડો કરી દેવામાં આવ્યો હતો. લગભગ બે કલાકનો એ કાર્યક્રમ કોઈ પણ ભાષણ વગર ભાવજગતની સર્વોચ્ચ ઊંચાઈએ લઈ જનાર હતો. સ્વ. વકીલસાહેબ પણ ખાસ આ કાર્યક્રમ માટે મુંબઈથી આવ્યા હતા. આખાયે કાર્યક્રમ પછી બધાના હૃદયમંદિરમાં અવિરત પવિત્ર ઘંટારવ ગુંજતો હોય તેવી અનુભૂતિ થતી હતી.

વડોદરા અનેક વર્ષો સુધી દેશમુખજીનું કાર્યક્ષેત્ર રહેલું. આ પ્રસંગથી તેઓ ખૂબ જ આનંદિત હતા. સમગ્ર કાર્યક્રમે સહુને ભાવજગતના હિમાલયની ટોચે પહોંચાડી દીધા હતા. સહુ કોઈ એ પળને જીવી લેવા માગતા હતા, જતી કરવા નહોતા માગતા અને તેથી લગભગ મૌનનું વાતાવરણ હતું.



આવી ઉત્કૃષ્ટ ઘટનાની થોડીક જ પળો પછી અચાનક કારમો ઘા થયો. માંડ અડધા કલાકમાં કેશવરાવ દેહ છોડી દે એ કેટલું આઘાતજનક હશે ! કેવા બે પીડાદાયક આંતરવિરોધવાળા સંજોગો ! હજુ હમણાં તો દેશમુખજી મન મૂકીને ગુરુજીની સ્વરાંજલિમાં મગ્ન હતા ! ચહેરા પર આનંદ ઊભરાતો હતો ! અને થોડીક જ પળોમાં તેઓ ગુરુજીના જન્મ- દિવસે સહુને છોડીને ગુરુજીની સમીપ પહોંચી ગયા !

"*સ્વરાંજલિ*" કાર્યક્રમની હૃદયસ્પર્શી સફળતાનો આનંદ હૈયે ધરી અમે નીકળ્યા હતા. જીપમાં આગલી બેઠક ઉપર દેશમુખજી, પાછળ વકીલસાહેબ અને નાથાભાઈ ઝગડા બેઠા હતા. હું જીપ ચલાવતો હતો. અમેરિકાથી આવી વડોદરામાં સ્થિર થયેલા અમારા સહુના સ્વજન સુભાષભાઈ મહેતાના ઘરે રાત્રિ-ભોજન હતું. મોડેથી વકીલસાહેબ વડોદરા જવા રવાના થવાના હતા. વડોદરાના ગાંધીનગરગૃહથી આનંદમય વાતાવરણમાં અમે નીકળ્યા. ૨૦-૨૫ મિનિટનો રસ્તો કપાયો હતો. કાર્યક્રમની અસર એટલી પ્રભાવી હતી કે અમે બધા લગભગ મૂક હતા. સુભાષભાઈના ઘરે પહોંચવા સોસાયટી પાસે વળાંક લેતાં અચાનક ડ્રાઈવરની સીટની બાજુમાં જ બેઠેલા કેશવરાવનું શરીર મારા ખોળામાં ઢળી પડ્યું. ઠંડાગાર દેહનો સ્પર્શ – જાણે ખોળામાં બરફનો ટુકડો પડ્યો હોય ! "*દેશમુખજી... દેશમુખજી...*" બે-ચાર વાર બૂમ મારી, ગાડી ચલાવતાં-ચલાવતાં ઢંઢોળવાનો પ્રયાસ કર્યો. બધું જ નકામું. ત્રણેક મિનિટમાં સુભાષભાઈના ઘરે પહોંચી ડૉક્ટર બોલાવ્યા. ડૉક્ટરે મૃત જાહેર કર્યા. અડધા કલાક પૂર્વેની ઉત્કટ આનંદની પળો પછી અસહ્ય વેદનાની પળ... મૃત્યુએ સંઘના એક તારલાને છીનવી લીધો. સમગ્ર ગુજરાતના સંઘપરિવાર માટે આ સમાચાર ગળે ઊતરે તેવા નહોતા. વડોદરામાં '*સ્વરાંજલિ*' કાર્યક્રમમાં આવેલા સ્વયંસેવકો માટે તો જાણે મૃત્યુ એમના જીવન પર ખાબક્યું હોય એવી સ્થિતિ હતી.

જીવનમાં ક્યારેય ન ભુલાય એવી એ પળ હતી. મૃત્યુને આંખ સામે પહેલી વાર જોયું હતું, મૃત્યુને વીજળીની જેમ ત્રાટકતું જોયું હતું. જીવનની નશ્વરતાનો અર્થ પહેલી વાર સમજાયો હતો. જીવનની અનિશ્ચિતતા અને મૃત્યુની નિશ્ચિતતાનું તત્ત્વજ્ઞાન આંખ સામે વિકરાળ રૂપ ધરીને ઊભું હતું.

સામાન્ય રીતે સંઘજીવનમાં પ્રચારક કહેતાં જે છબી ઊપસી આવે તેના કરતાં દેશમુખજીની છબી ખાસ્સી નોખી હતી. કોઈ પણ ગૃહસ્થ કરતાં પણ વધુ સારી રીતે, આયોજનબદ્ધ રીતે કાર્ય કરવા અને જીવવા તેઓ ટેવાયેલા હતા. ઉછેર કાશીમાં થયેલો. વિદ્વત્પરિવારના સંસ્કાર હોવાને કારણે દરેક બાબતમાં તર્ક અને બુદ્ધિગમ્ય બાબતોનું તત્ત્વ અવશ્ય જોવા મળે. ગુજરાતમાં, ખાસ કરીને દક્ષિણમાં – સુરતમાં ઘણો સમય વિતાવ્યો હતો તે કારણે ભોજન અને સ્વાદનો કાશીના આ પંડિતનો શોખ સુરતી લાલાને પણ પાછળ મૂકી દે તેવો હતો. આપણે ત્યાં કહેવત છે : *સુરતનું જમણ અને કાશીનું મરણ.* અહીં તો કાશીના પંડિત સુરતના જમણના જિગરી યાર હતા. અત્યંત સુઘડ અને ટાપટીપવાળી જીવનશૈલી. વસ્તુઓની પસંદગીનાં ધોરણો ઊંચાં. રહન-સહનનો જેટલો પ્રભાવ દેખાય તેટલો જ પ્રભાવ કાર્ય-

યોજનામાં પણ દેખાય.

ગંગાકિનારે કાશીમાં બચપણ વિતાવનાર કેશવરાવ સાબરમતીને કિનારે ગુજરાતની ધરતી પર ધૂણી ધખાવીને બેઠા. દેશમુખજી અસ્સલ ગુજરાતી લાગે. ખાન-પાન, રહન-સહન, ભાષા – સઘળું જાણે ૧૦૦ ટચનું ગુજરાતી વ્યક્તિત્વ.

સંઘ-પ્રચારકના જીવનમાં સાધુની જેમ બધાં જ કામ જાતે કરવાનાં. સહુ પ્રચારકો તે જ રીતે ટેવાયેલા. કપડાં પણ જાતે ધોવાનાં. દેશમુખજીને સાબુની એલર્જી. કપડાં ધોવા માટે સાબુને હાથ લગાવે અને આખા હાથે ફોલ્લા થઈ જાય. પીડા પણ થાય. પરંતુ પીડા સહન કરીને પણ પોતાનું કાર્ય જાતે કરવા વર્ષો સુધી પ્રયાસ કરતા રહ્યા. સ્થિતિ જ્યારે અસહ્ય બની ત્યારે ડૉક્ટરોની સલાહથી તેમણે પોતાનાં કપડાં બીજા પાસે ધોવડાવવાની વાતનો સ્વીકાર કર્યો.

દેશમુખજીને શીરાની એલર્જી. પડોશમાં પણ કોઈના ઘરે શીરો શેકાતો હોય તો સુગંધ-માત્રથી તેમની તબિયત ઉપર અસર થાય. માથું દુખવું, ઊલટી થવી.. અનેક તકલીફો થઈ જાય. તેમના પ્રવાસ દરમ્યાન સ્વયંસેવકો આવી બાબતોની ખૂબ કાળજી રાખતા.

તેઓ ઉત્તરપ્રદેશના વતની હોવા છતાં સમગ્ર ગુજરાતના જીવન સાથે ખૂબ જ એકરૂપ બની ગયા હતા. ગુજરાતને તેમણે પોતાનું વતન ગણ્યું. ભાષા, પહેરવેશ, રીતરિવાજ વગેરે તેમણે એટલાં આત્મસાત્ કર્યાં હતાં કે કોઈ પણ તેમને બિનગુજરાતી તરીકે ઓળખવાનો વિચાર સરખો પણ કરી શકે નહીં. અને આ આત્મીયતાને કારણે તેમણે ગુજરાતમાં સેંકડો એવા કાર્યકર્તા નિર્મિત કર્યા, જેના આધારે આજે સંઘકાર્ય તેજ ગતિથી ગુજરાતમાં વધી રહ્યું છે. સંઘકાર્યની દૃષ્ટિએ સર્વ રીતે ગુજરાત મોખરે રહે એ તેમની તમન્ના હતી અને તે માટે અહર્નિશ તેઓ પ્રયત્નશીલ રહેતા.

દેશમુખજીની કાર્યશૈલી એકાંગી નહીં પણ સર્વાંગી રહેતી. તેમના માહિતીના સ્રોત પણ અનેક રહેતા. દરેક બાબતની છેલ્લામાં છેલ્લી માહિતીથી તેઓ પરિચિત રહેતા. સંઘજીવનની પરંપરાગત બાબતો સિવાય પણ અનેક પ્રકારની માહિતી માટે સમાજના વિવિધ પ્રકારના લોકો સાથે તેમનાં જીવંત સંપર્કસૂત્રો રહેતાં.

સંગઠન માટેના બે મૂળભૂત પાયા - પ્રવાસ અને સંપર્ક, અને આ બંને બાબતોમાં દેશમુખજીની કાર્યશૈલી અજોડ રહી.

સંઘકાર્યમાં પરિવાર-સંપર્કનું ઘણું મહત્ત્વ છે. દેશમુખજીએ પરિવાર-સંપર્કની આગવી શૈલી વિકસાવી હતી. તેમનો પરિવાર-સંપર્ક આગામી કાર્યયોજના સાથે અવશ્યપણે સુસંગત રહે. પરિવાર-સંપર્ક ઘણું કરીને હળવી પળોમાં થતો. ખાણી-પીણી ને મોજમસ્તી સાથે અનૌપચારિક બેઠકનું સ્વરૂપ રહેતું. પરિવાર-સંપર્ક વખતે કાર્ય સાથે સંબંધિત અન્ય લોકોને પણ જે-તે પરિવારમાં બોલાવી લેવા અને ગપસપ કરતાં-કરતાં ભાવિ આયોજન અંગેની મુક્ત ચર્ચા-વિચારણા કરી લેવાની. ઘણી મહત્ત્વપૂર્ણ યોજના અને નિર્ણયોનું ગર્ભાધાન આવી સહજ ગપસપમાં થઈ જાય એ બાબત સંગઠનશૈલીમાં નવતર ભાત પાડનાર હતી.

૧૯૪૫ની સાલમાં ધીકતી નોકરી છોડીને દેશમુખજી પ્રચારક તરીકે નીકળ્યા અને સંઘકાર્ય માટે તેઓ સુરત પહોંચ્યા. આજે બેને મળ્યા, કાલે ચારને મળ્યા. ક્યારેક સ્કૂલની રીસેસના સમયે સ્કૂલે જતા. આમ સંપર્કો કરતા ગયા અને એ પ્રયાસોના પરિપાકરૂપે શાખા શરૂ થઈ. પહેલાં નાનાં બાળકો રમતથી અને તેમનાં વાલીઓ દેશમુખજીનાં વાણી, વ્યવહાર અને અભ્યાસથી આકર્ષાયાં. એટલે સુરતનાં નિવાસીઓ સાથે એકરૂપ થવામાં તેમને વાર ન લાગી. આમ, સુરતમાં સંઘકાર્યના શ્રીગણેશ થયા અને પ્રજા પણ સંઘકાર્ય તરફ આકર્ષાવા લાગી. ત્યાર બાદ નવી યોજના અન્વયે દેશમુખજીને દક્ષિણવિભાગનું કામ સોંપાયું અને તેમનું મુખ્ય મથક વડોદરા બન્યું, એટલે દેશમુખજી વડોદરા આવ્યા.

તેમનો પ્રવાસ-કાર્યક્રમ પણ હાલતી-ચાલતી સંગઠન-શાળા જેવો રહેતો. ઘણું કરીને પ્રવાસ બસમાં કે ટ્રેનમાં હોય. ગુજરાતમાં એક સ્થળેથી બીજે સ્થળે જતા હોય ત્યારે માર્ગમાં પ્રમાણમાં નવા કહી શકાય તેવા કાર્યકરોને સાથે લઈ લે.

અસહ્ય તીવ્ર વેદના આપનાર બીજા પણ સંજોગો ઊભા થયા. કેશવરાવ દેશમુખનો જન્મદિવસ (ઈ. સ. ૧૯૨૧) અને પ. પૂ. ડૉ. હેડગેવારજીનો જન્મદિવસ ચૈત્ર સુદ ૧નો વર્ષ-પ્રતિપદાનો દિવસ હતો. જોગાનુજોગ કેશવરાવનું મૃત્યુ થયું તે દિવસ પ. પૂ. ગુરુજીનો જન્મદિવસ હતો.

એક સ્ટેશનેથી બીજા સ્ટેશન સુધી ખૂબ જ હળવી પળોમાં નિખાલસતાથી નવા કાર્યકર સાથે વાત થાય. વન ટુ વન વાત થાય. વાતાવરણમાં કોઈ ભાર ન અનુભવાય. કાર્યકરનાં સુખ-દુઃખની વાતો થાય, કાર્યકરના પરિવારની વાતો થાય, તેના વિકાસની વાતો થાય. વચ્ચેવચ્ચે કાર્યવિસ્તારની વાત પણ થઈ જાય. આગલા સ્ટેશને અગાઉના કાર્યકર ઊતરી જાય અને નવા કાર્યકર જોડાઈ જાય. તેમની સાથે પણ એવો જ ક્રમ. આમ ત્રણ-ચાર કલાકનો પ્રવાસ હોય, તો માર્ગમાં ત્રણ-ચાર જુદાજુદા કાર્યકરો સાથે નિરાંતની પળોમાં કાર્યકર્તાના વિકાસની અને કાર્યના વિસ્તારની પ્રક્રિયાને તેજ કરે.

સંઘકાર્યના વિસ્તારમાં તેમના પુરુષાર્થની સોડમ છે. આજે હવે તેમના સમર્પિત જીવનને યાદ કરીએ છીએ ત્યારે દેખાય છે કે એક સામાન્ય લાગતા એ જીવનમાં કેટલી વિશેષતાઓ હતી ! સંઘકાર્યને કારણે અનેક સ્થાનોમાં રહેવાનું અને તેથી અનેક લોકોના સંપર્કમાં આવવાનું તો સંઘના પ્રત્યેક કાર્યકર્તાને થતું હોય છે. પરંતુ સંપર્કમાં આવેલી વ્યક્તિની વૃત્તિને પામવી, તેની શક્તિનો અહેસાસ કરવો, તેનામાં રહેલી ગુણસંપદાને વિકસાવવા માટેની તક આપવી – દેશમુખજી તેમ કરવામાં માહિર હતા. દરેક વ્યક્તિ માટે કામ અને દરેક કામ માટે વ્યક્તિ – આ મૂળ મંત્રને સાકાર કરવા તેઓ સતત પ્રયાસ કરતા. નાનામાં નાના સ્વયંસેવક કે તેનાં પરિવારજનો પાસેથી કોઈ સૂચન આવ્યું હોય, નવી કલ્પના કાને પડી હોય, તો તેમ કરવામાં તેઓ ક્યારેય હિચકિચાટ ન અનુભવે. દેશમુખજીની કાર્યશૈલીનું એક મહત્ત્વનું અંગ એ હતું કે તેઓ બીજાને નિશ્ચિત બીબામાં ઢાળવા માટે કોઈ સંસ્કારપ્રક્રિયા પાછળ વધુ સમય ન વિતાવે, પરંતુ વ્યક્તિમાં સહજ વિકસેલ ગુણસંપદાને સહેજ વળાંક આપી, રાષ્ટ્રના વ્યાપક હિતમાં કામ કરવા પ્રેરિત કરે. પરિણામે વધુ ને વધુ વ્યક્તિઓની શક્તિને તેઓ કામે લગાડી શકતા.

ગુજરાતના સંઘજીવનમાં સાહસપૂર્ણ નિર્ણયો માટે દેશમુખજીનો કાર્યકાળ હંમેશાં યાદ રહેશે. તેઓ કાર્યને સરવાળાને બદલે ગુણાંકમાં વધારવા માટે પ્રયાસ કરતા. એક જમાનો હતો જ્યારે ગુજરાતના સંઘજીવનમાં ૩૫ હજાર રૂપિયાની રકમ મોટા પહાડ જેવી લાગતી. ફેબ્રુઆરી ૧૯૮૧માં મીનાક્ષીપુરમ્‌માં દલિતોના ધર્માંતરણની ઘટનાથી સમગ્ર દેશમાંથી ચેતવણીનો અવાજ ઊઠ્યો હતો. સંઘે સમગ્ર દેશમાં જાગરણ-અભિયાન ઉપાડ્યું હતું અને દલિતો, આદિવાસીઓના કલ્યાણ માટે કાયમી આયોજનનો રચનાત્મક અભિગમ હાથ લીધો. ગુજરાતમાં તે નિમિત્તે નિશ્ચિત સમયગાળામાં ધનસંગ્રહનું અભિયાન હાથ ધરાયું. જે સમયે ૩૫ હજાર રૂપિયા અધધધ લાગતા હતા તે સમયે ૩૫ લાખ રૂપિયાનું ભંડોળ એકત્ર કરી ગુજરાતે સમગ્ર દેશના સંઘજીવનમાં અસર ઊભી કરી હતી. અનેકોના પુરુષાર્થનું એ પરિણામ હતું, પરંતુ તેમાં નિર્ણય કરવાની દેશમુખજીની સાહસિકતાની છાયા જરૂર જોવા મળે.

જે કોઈ કામ તેઓ હાથમાં લે તેના તત્કાળ લાભને બદલે આગામી ૫-૧૦ વર્ષો પછીના પરિણામનો વિચાર કરીને કામ ગોઠવતા. આને લીધે દક્ષિણ ગુજરાતમાં સંઘકાર્ય



સિવાય પરિવાર-ક્ષેત્રનાં અન્ય કાર્યોને પણ સારો એવો પ્રતિસાદ સાંપડ્યો. સુરત શહેર-જિલ્લો, વડોદરા શહેર-જિલ્લો અને પંચમહાલના વનવાસી વિસ્તારોમાં જનસંઘ – (ભાજપ) વનવાસી કલ્યાણ પરિષદને મળેલો પ્રતિસાદ દેશમુખજીના દૂરંદેશીપણાની સાક્ષી પૂરે છે.

૧૯૭૩-૭૪ના નવનિર્માણ આંદોલન અને ૧૯૭૫ના કટોકટીના કાળા દિવસો ગુજરાતના જાહેર જીવનની નાનીસૂની ઘટનાઓ નથી. આવા મહત્ત્વપૂર્ણ સમયગાળામાં દેશમુખજી ગુજરાતના પ્રાંત-પ્રચારક તરીકે કાર્યભાર સંભાળતા હતા. જેલમાં ગયેલા કાર્યકરોના પરિવારોની આર્થિક ચિંતા, સંઘપરિવારના જુદાજુદા ઘટકો ઉપર સરમુખત્યાર કોંગી શાસકોનો દમન-દોર, ભયનો ઓથાર – આવા વાતાવરણમાં કાર્ય સાથે જોડાયેલા સહુના ધૈર્યને ટકાવી રાખવું, લોકશાહી માટેની લડતને આંચ ન આવવા દેવી – આ સમગ્ર બાબતને તેમણે સુપેરે પાર પાડી હતી.

૧૧ ઑગસ્ટ ૧૯૭૯ની મોરબીમાં મચ્છુની હોનારતની યાદ આજે પણ કાળજું કંપાવનારી ઘટના છે. પળ-બે-પળમાં સેંકડો લોકો કાળનો કોળિયો થઈ ગયા હતા. મોરબીના પડોશમાં જ રાજકોટની સંઘપ્રવૃત્તિનો પાયો મજબૂત હતો. પ્રમાણમાં રાજકોટની સંઘ-શાખાની શક્તિ સારી હતી. વળી દેશમુખજી પ્રાંત-પ્રચારક બનતાં પહેલાં છેલ્લે રાજકોટ વિભાગના પ્રચારક હતા, તેથી તે વિસ્તારના કાર્યકરો સાથે તેમનો ઘરોબો પણ સારો હતો અને તેમના પર ભરોસો પણ ઠીકઠીક હતો. સંઘે મોરબીમાં સેવાનું અભિયાન ઉપાડ્યું. દેશ અને દુનિયાનાં પ્રચાર-માધ્યમોએ સંઘના મોરબીના સેવા-કાર્યનાં ભરપેટ વખાણ કર્યાં. દેશવાસીઓ પણ સંઘની નિઃસ્વાર્થ સેવાથી પ્રભાવિત થયા. પરિણામે મોરબીના પુનર્નિર્માણ માટે દેશભરમાંથી ધનનો પ્રવાહ શરૂ થયો. દેશમુખજીએ સેવા અને રાહતનું કાર્ય કરીને અટકી જવાને બદલે મોરબીના પુનર્નિર્માણ સુધી કાર્ય આગળ ધપાવવાનો નિર્ણય કર્યો.

સંઘ-પ્રચારકના જીવનમાં સાધુની જેમ બધાં જ કામ જાતે કરવાનાં. સહુ પ્રચારકો તે જ રીતે ટેવાયેલા. કપડાં પણ જાતે ધોવાનાં. દેશમુખજીને સાબુની એલર્જી. કપડાં ધોવા માટે સાબુને હાથ લગાવે અને આખા હાથે ફોલ્લા થઈ જાય. પીડા પણ થાય. પરંતુ પીડા સહન કરીને પણ પોતાનું કાર્ય જાતે કરવા વર્ષો સુધી પ્રયાસ કરતા રહ્યા. સ્થિતિ જ્યારે અસહ્ય બની ત્યારે ડૉક્ટરોની સલાહથી તેમણે પોતાનાં કપડાં બીજા પાસે ધોવડાવવાની વાતનો સ્વીકાર કર્યો.

મચ્છુ હોનારતને કારણે મોરબી અને આસપાસના વિસ્તારોનો વિનાશ થઈ ગયો હતો. સંઘના સ્વયંસેવકો તાત્કાલિક રાહતકાર્ય, આરોગ્યસેવા, સફાઈ- અભિયાન, સડી જવાને કારણે માનવ તેમ જ પશુના દુર્ગંધ મારતા મૃતદેહોને અગ્નિ-સંસ્કાર જેવાં અનેક કામોમાં અગ્રેસર રહ્યા. મોરબી દુર્ઘટના પછી લગભગ ત્રણ વર્ષ સુધી પુનર્નિર્માણના કામમાં ખૂંપી ગયા. માત્ર ગુજરાત જ નહીં, સમગ્ર દેશના સંઘજીવનમાં મોરબી હોનારત સમયે થયેલી સેવાપ્રવૃત્તિ આગળ જતાં સંઘ-સંસ્કારોનું પ્રગટ સંસ્થાગત રૂપ બની. આજે દેશના કોઈ પણ ખૂણામાં કોઈ પણ કુદરતી આફત આવે તો સંઘના સ્વયંસેવકો પહોંચ્યા જ હોય. એક અર્થમાં પ્રાંત-પ્રચારક તરીકે દેશમુખજીની તે સમયની દીર્ઘદૃષ્ટિ અને કુનેહ આજે સંઘજીવનની અનેક પ્રવૃત્તિઓ પૈકીની એક મહત્ત્વની સેવાપ્રવૃત્તિ તરીકે વિકસી છે.

સંઘકાર્યની સમગ્ર રચના વ્યવસ્થિત અને આયોજનબદ્ધ છે. ઘણું કરીને આખા વર્ષનું સમયપત્રક, કાર્યક્રમોના પ્રકાર, નાના-મોટા સહુ અધિકારીઓના પ્રવાસ – બધું જ એકધારું ચાલ્યા કરતું હોય છે. દેશમુખજીની વિશેષતા એ હતી કે આ એકધારા ચાલતા કાર્યમાં સતત નવીનતા કેમ લાવવી, તેમાં પ્રાણ કેમ પૂરવા, સતત ઉત્સાહ અને ઉમંગનું વાતાવરણ કેમ નિર્માણ કરવું. દેશમુખજી સંગઠક હોવા ઉપરાંત સારા યોજક હતા. કોઈ કાર્ય અંગે આપણે તેમને જાન્યુઆરીમાં વાત કરતા હોઈએ ત્યારે તેમના વિચારો વિજયાદશમી અને દિવાળી આસપાસના કાર્યક્રમોમાં ગૂંથાયેલા જોવા મળે. લગભગ ૮થી ૧૦ મહિના પહેલાં તેઓ દરેક બાબતનો વિચાર કરતા અને સાથીઓની ટીમને તેમ કરવા માટે પ્રેરતા હતા.

માણસમાં એકાદ ગુણ તેની પરાકાષ્ઠાએ પહોંચેલો હોય તોપણ તે મહાન બની શકે છે, ત્યારે દેશમુખજીએ તો પોતાના સમર્પિત જીવનમાં અનેક ગુણો વિકસાવી સંઘકાર્યને

અર્પણ કર્યા. સ્વયંસેવકો, વિસ્તારકો, પ્રચારકોને માર્ગદર્શન અને ઉત્સાહ પૂરાં પાડીને કાર્યમાં હંમેશ પ્રવૃત્ત રાખવા અને તે બધાના પ્રયત્નોને એક દિશામાં વાળવા એ કંઈ નાનુંસૂનું કામ નથી, પણ તેઓ તે કામ એટલી સહજતાથી કરતા કે જાણે કોઈ મોટું કામ નથી એવું સહુને લાગે. તેઓ એક અચ્છા વ્યવસ્થાપન - નિષ્ણાત હતા. વ્યક્તિની શક્તિનું વ્યવસ્થાપન કઈ રીતે સરળતાથી, સહજતાથી કરવું તેમાં તેઓ નિપુણ હતા.

સંઘના સ્વયંસેવકો દ્વારા રાષ્ટ્રીય વિચારોને બળ મળે તે માટે 'સાધના' સાપ્તાહિક ચાલે. તેના માટે જૂના જમાનાના ટ્રેડલ મશીન સાથેનું પ્રિન્ટિંગ પ્રેસ. અહીં પણ દેશમુખજીની દીર્ઘદૃષ્ટિ અને સાહસિક સ્વભાવને કારણે 'સાધના'નું આધુનિક પ્રિન્ટિંગ પ્રેસ, 'સાધના'ની આધુનિક ઑફિસનું નિર્માણ થયું.

સંઘના સ્વયંસેવકોએ સહકારી પ્રવૃત્તિ દ્વારા સમાજના આર્થિક વિકાસમાં સક્રિય ભૂમિકા નિભાવવી જોઈએ એવું તેમને લાગ્યા કરે. સુરતમાં પંચશીલ સહકારી બેંક વહીવટમાં કથળી રહી હતી. દેશમુખજીના વ્યાપક સંપર્કને કારણે તેમનું ધ્યાન તેની તરફ ગયું. થોડાક સ્વયંસેવકોને તેમાં પ્રવૃત્ત થવા પ્રેરિત કર્યા. જોતજોતામાં બેંકનો વહીવટ સ્વયંસેવકોના હાથમાં આવ્યો. થોડાંક જ વર્ષોમાં એ બેંકને આબરૂદાર બેંક બનાવવામાં સફળતા મેળવી.

દેશમુખજીને પ્રાંત-પ્રચારક તરીકે માંડ એક દશકાનો સમય મળ્યો, પરંતુ આટલા ટૂંકા ગાળામાં ગુજરાતના સંઘજીવનને દરેક સ્તરે નવી પેઢી કામ કરતી કરી આપી. પ્રમાણમાં ઘણા જુનિયર કહી શકાય તેવા અનેકોને તેમની ક્ષમતા અને યોગ્યતા પ્રમાણે જવાબદારીઓ આપતા ગયા. સંઘ જેવા વર્ષો જૂના કાર્યમાં અને આટલા વ્યાપક રીતે વિસ્તરેલા કાર્યમાં ઝડપથી વ્યક્તિનું કે વ્યવસ્થાનું પરિવર્તન લાવવું અઘરું હોય છે. પરંતુ દેશમુખજીએ તેમના ટૂંકા સમયના કાર્યકાળમાં સ્થગિતતાને ભેદીને નવી વ્યવસ્થાઓને વિકસાવવાનું સાહસપૂર્ણ કાર્ય કર્યું.

કાશીના વિદ્વાન પરિવારનું સંતાન. ગંગાની પવિત્ર ધારામાં તેમણે બચપણ વિતાવ્યું. તેમનું આખું કુટુંબ સંઘને સમર્પિત. કુટુંબનો દરેક સભ્ય સંઘકાર્ય માટે વધુ ને વધુ ત્યાગ કરવાની સ્પર્ધા કરે તેવું પરિવારનું વાતાવરણ. આવા ઉચ્ચ સંસ્કારો સાથે ગુજરાતને કર્મભૂમિ બનાવનાર ગંગા-મૈયાના ખોળે ઊછરેલ કેશવરાવનો દેહ ૨ માર્ચ, ૧૯૮૧ના દિવસે સાબરના સંગે પંચમહાભૂતમાં વિલીન થઈ ગયો.









મધ્યાહ્ને સૂર્યાસ્ત
શ્રી વસંતભાઈ



 મા. શ્રી વસંતરાવ ગજેન્દ્રગડકર 

બપોરે ૨-૩૦ કલાકે તેમની કર્મભૂમિ ખાડિયાના જનસંઘ કાર્યાલયથી સ્મશાનયાત્રા નીકળી. બસ ! એટલું જ કહેવું બસ થશે કે રાજકીય નેતાઓની આવી સ્મશાનયાત્રાઓ ભાગ્યે જ નીકળતી હશે. એણે રાજ કર્યું હતું લોકોનાં હૈયાં ઉપર - આજે એ હૈયાં સૂનાં બની ગયાં હતાં, લાખો આંખો આંસુથી છલકાતી હતી.

આજ સ્વાર્થ દ્વેષ કલુષિત, રાષ્ટ્ર કા દુ:ખપૂર્ણ જીવન
હો તુમ્હારી પ્રેરણા સે, ચિર-સુગંધિત રાષ્ટ્ર કણ-કણ
હમ કરેં સર્વસ્વ દેકર, રાષ્ટ્ર કી નવ દિવ્ય રચના
હો ચુકી અબ વેદી રચના.







ગુજરાત યુનિવર્સિટી – કર્ણાવતી

ક્યારેય પણ સમુદ્રનું શબ્દોમાં વર્ણન કરવું હોય તો ?

સમુદ્ર એટલે ?

વિશાળ જલાશય – ?

વિશાળ એટલે – ?

બસ વિશાળ. ...

એને કોઈ મર્યાદા નહીં...

જોયા વગર, નજીક ગયા વગર સમુદ્રને જાણી ન શકાય...

બસ ! એવું જ...

આપણા વસંતભાઈનું વ્યક્તિત્વ...

વિદ્વાન, વ્યવહારુ, વિચારક, વિનોદી,

વેગીલું, વૈવિધ્યસભર, વિશાળ વ્યક્તિત્વ એટલે વસંતભાઈ ગજેન્દ્રગડકર.

વસંતભાઈ અનેકને મળ્યા હશે, અનેક ઘરોમાં રહ્યા પણ હશે, સૌના અનુભવ પણ નોખાનોખા હશે. પણ મારું તો સાવ જ વિપરીત છે. એમના જીવનના સફળ દિવસોમાં જ મારે એમના ઘરે ખૂબ લાંબા સમય સુધી રહેવાનું થયું.

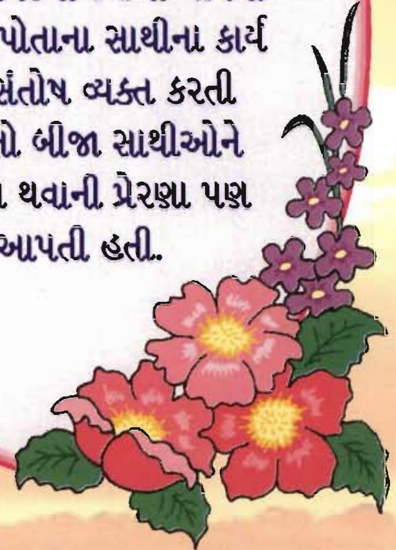
અમારા અંતરંગ વર્તુળમાં અમે વસંતભાઈને 'રાવસાહેબ' તરીકે ઓળખતા. 'રાવસાહેબ' નામકરણનો જન્મ કેવા સંજોગોમાં થયો એ તો નામકરણ કરનાર એવા મને પણ યાદ નથી. હા, પણ આ નામનું ઉચ્ચારણ અમે સૌ ખૂબ વહાલથી કરતા.

રાજકારણમાં હોવું તે અકસ્માત :

આપણે ત્યાં પ્રચલિત બનેલ રાજકીય પ્રવૃત્તિઓ અને રાજકીય નેતાઓનાં જીવન તપાસીએ તો એ સૌના સંદર્ભમાં વસંતભાઈ રાજકારણમાં હતા તે એક અકસ્માત હતો એવું લાગ્યા વગર ન રહે. રાજકારણને જાણે મૂલ્યો જોડે કશી લેવાદેવા જ ન હોય એવી અવસ્થામાં પણ વસંતભાઈએ મૂલ્યોના ભોગે ક્યારેય રાજકારણને પ્રાધાન્ય ન આપ્યું.

૧૯૭૧ની સંસદની ચૂંટણીઓ... એક વિરુદ્ધ એકનો મોરચો મંડાય તો પરિવર્તનની સંભાવના સૌ રાજકીય પક્ષો જોતા હતા. અમદાવાદની બેઠકના સંભવિત ઉમેદવારોમાં વસંતભાઈનું નામ મોખરે હતું. એ વખતની રાજકીય સ્થિતિ જોતાં વસંતભાઈને ટિકિટ ન મળવાનું કોઈ કારણ નહોતું. ચૂંટણી લડવાના ઇરાદાથી જનસંઘે તૈયારીઓ શરૂ કરી. અમદાવાદમાં ઠેરઠેર પ્રચાર માટેનાં બોર્ડ લખાઈ ગયાં. ચારે બાજુ ઉત્સાહપૂર્વક કાર્યકરો કામે લાગી ગયા. અને છેક છેલ્લી ઘડીએ દિલ્હીમાં અનપેક્ષિત નિર્ણય લેવાયો : વસંતભાઈ ચૂંટણી ન લડે. ઉત્સાહપૂર્વક કાર્ય કરી રહેલ

વસંતભાઈના જીવનઘડતરમાં જેમનો સીધો સંબંધ રહ્યો, વસંતભાઈના વ્યવહારમાં જેમનાં ચિંતન અને મનનની છાંટ જોવા મળતી હતી એ પંડિત દીનદયાળ ઉપાધ્યાયની તસવીર પોતાના સાથીના કાર્ય અંગે સંતોષ વ્યક્ત કરતી હતી, તો બીજા સાથીઓને દુઃખી ન થવાની પ્રેરણા પણ આપતી હતી.



કાર્યકરો માટે આ અણધાર્યો આઘાત હતો. કેટલાક રોષે પણ ભરાયા : વસંતભાઈને ટિકિટ નહીં તો કામ પણ નહીં ! આવી સ્થિતિમાં પોતાને ટિકિટ નથી મળી તેનો જરાયે રંજ રાખ્યા વગર એમણે કાર્યકરોને નક્કી થયેલ ઉમેદવાર શ્રી જયકૃષ્ણભાઈને વિજયી બનાવવા પૂર્ણ નિષ્ઠાથી તનતોડ મહેનત કરવાની વાત કરી. નિરુત્સાહી થયેલા કાર્યકરોને વ્યક્તિગત મળીને આખાયે વાતાવરણને પલટી નાખ્યું. નાના-મોટા સૌ કાર્યકરોને તેઓ સક્રિય કરી શક્યા. દેશહિત માટે જે કંઈ નિર્ણય થાય તેને વ્યક્તિ તેમ જ પક્ષના ભોગે પણ યશસ્વી બનાવવા માટે તન-મન-ધન-પૂર્વક પ્રયાસ કરવો – એ મૂલ્યોની જાળવણીની આગ્રહી વ્યક્તિઓ માટે જ સંભવી શકે.

આ જ દિવસોમાં ધંધુકામાં શ્રી શંભુ મહારાજ જનસંઘના ઉમેદવાર તરીકે ચૂંટણી લડી રહ્યા હતા. ચૂંટણીની વાતો શરૂ થતાં જ જનસંઘે શંભુ મહારાજનું નામ વહેતું મૂક્યું હતું. પ્રચારકાર્ય પણ શરૂ થઈ ગયું હતું. એવામાં ધંધુકા સંસદીય મતવિસ્તારના આગેવાન અને આખાયે મતવિસ્તાર પર વગ ધરાવનાર એક જાણીતા નેતા વસંતભાઈને મળવા આવ્યા. ઉમેદવારીપત્રો ભરવાના થોડાક દિવસ બાકી હતા. તેઓ શંભુ મહારાજ કરતાં પણ વધારે મજબૂત અને વગદાર

વ્યક્તિનું નામ લઈને આવ્યા હતા. સંજોગોવશાત્ આવનાર વ્યક્તિએ સૂચવેલું નામ વસંતભાઈના જ એક નિકટના મિત્રનું હતું. બધી રીતે એ વ્યક્તિ યોગ્ય તો હતી જ... છતાંયે વસંતભાઈએ આખીયે વાત સાંભળ્યા પછી સ્પષ્ટપણે ના કહી દીધી. એ જ મતવિસ્તારની વગદાર વ્યક્તિને "ના" કહેવાનાં પરિણામો શાં હોઈ શકે એ કલ્પના કરવી મુશ્કેલ નથી. છતાંય આવનાર મિત્રે આગ્રહ રાખ્યો – "વસંતભાઈ, રાજકારણમાં તો બધું ચાલે...", "શંભુ મહારાજને બેસાડી દેવામાં વાંધો શું ?", "રાજકારણમાં વચનો હોતાં હશે ?" – આવી ઘણીબધી વાતો પછી વસંતભાઈનો જવાબ સ્પષ્ટ હતો... "ભાઈ, બીજાના રાજકારણમાં કદાચ વચનોની કિંમત નહીં હોય, આ જનસંઘમાં છે. અમારાં વચનો અમારાં જીવનમૂલ્યોની જ અભિવ્યક્તિ છે. ચૂંટણી હારવાનો અમને રંજ નહીં થાય, પણ વચનભંગ અમારા માટેના વિશ્વાસને તોડી નાખશે..." તત્કાળ તો આવનાર નેતા આભા જ બની ગયા. તેઓ ત્યાંથી વિદાય થયા, પણ વસંતભાઈના શબ્દોએ તેમના હૃદયમાં તોફાન જગાવ્યું, તેમને મંથન કરવા પ્રેર્યા અને પરિણામે એક જ વર્ષમાં એ મિત્ર જનસંઘના આગેવાન કાર્યકર બની ગયા – વસંતભાઈની મૂલ્યનિષ્ઠાથી પ્રભાવિત બનીને જ.

સસ્તી લોકપ્રિયતા નહિ : સંઘર્ષથી દૂર પણ નહિ :

ગુજરાતમાં નવનિર્માણ આંદોલન તેની ચરમ સીમા પર હતું. જનસંઘ તરફથી એક પછી એક બંધના સફળ કાર્યક્રમોએ સંપૂર્ણ ગુજરાતને આંદોલનમય બનાવી મૂક્યું હતું. એવામાં જ ગુજરાત સામ્યવાદી પક્ષતરફી કેટલાંક બળોએ ગુજરાત બંધનું એલાન આપ્યું. એલાન આપનારાઓની મુરાદ શંકા જગાવે તેવી હોવાથી જનસંઘે ગુજરાત બંધને પોતાનો ટેકો જાહેર કર્યો નહોતો. વળી જનસંઘનું એમ પણ માનવું હતું કે આંદોલનનો દોર અમુક પ્રકારનાં તત્ત્વોના હાથમાં જશે તો ગુજરાતનું હિત જોખમાશે. આ સ્થિતિમાં જનસંઘે મૌન સ્વીકાર્યું. જનસંઘના મૌનથી ચીમનભાઈ પટેલ(તત્કાલીન મુખ્યમંત્રી)ના મનમાં કંઈક આશાનો સંચાર થયો. ચીમનભાઈએ વસંતભાઈને મળવાની ઇચ્છા વ્યક્ત કરી. મુલાકાત ગોઠવાઈ. મુલાકાત દરમ્યાન શ્રી ચીમનભાઈ પટેલે કહ્યું, "વસંતભાઈ, ગુજરાત બંધથી જો જનસંઘ દૂર રહે તો બાકી લોકોને પહોંચી વળવાની પહોંચ મારામાં છે." ત્યારે વસંતભાઈનો જવાબ સ્પષ્ટ હતો: "ગુજરાત બંધના કાર્યક્રમને જનસંઘ ટેકો આપે કે ન આપે... પણ અમારો સંઘર્ષ મૂલ્યો માટેનો છે. જનસંઘ સસ્તી લોકપ્રિયતા માટે ભલે બંધની હવામાં ભળી ન જાય, પણ તેથી સરકાર વિરુદ્ધ મૂલ્યોની પુનઃસ્થાપના અર્થે શરૂ થયેલા સંઘર્ષથી દૂર રહેવાનું પસંદ નહીં કરે." વસંતભાઈનો આ બેધડક જવાબ હતો, અને પછી થોડાક જ દિવસોમાં જનસંઘના નેતાઓને 'મિસા' અંતર્ગત પકડી લેવાયા હતા.

મૂલ્યોનું મહત્ત્વ :

જાહેરજીવનની અનેક ઘટનાઓની જેમ જ વ્યક્તિગત જીવનમાં પણ વસંતભાઈ મૂલ્યો માટેના એવા જ આગ્રહી. વસંતભાઈ લૉ કૉલેજમાં અધ્યાપક હોવાથી યુનિવર્સિટી તરફથી પેપર જોવાનું કામ પણ આવતું. આજકાલ પેપર-પરીક્ષકોને ત્યાં વિદ્યાર્થીઓ અને તેમના વાલીની અવરજવર જાણે સ્વાભાવિક ક્રમ થઈ પડી છે. આવા પ્રસંગો વસંતભાઈને ત્યાં પણ અવારનવાર બનતા. એક વાર એમના જ એક મિત્ર અને સાથી કાર્યકરે પોતાના એક નિકટના સગાનાં પેપર વસંતભાઈ પાસે આવ્યાં હોવાથી મદદની અપેક્ષા વ્યક્ત કરી. સંબંધ એટલા નિકટના હતા કે વસંતભાઈ રૂબરૂ હા કે ના કશું કહી શક્યા નહીં. પણ પરિણામ આવ્યું ત્યારે પેલા મિત્રના સગા વસંતભાઈએ જે પેપર તપાસ્યું હતું તેમાં જ નાપાસ થયા.

ઘણું કરીને કોઈ પણ સંગઠનની સફળતાના મૂળમાં એ સંગઠનના આગેવાનોના વ્યવહારનો પ્રભાવ અધિક હોય છે. ગુજરાત જનસંઘની સફળતા અને અડીખમ કાર્યકરોની હારમાળામાં વસંતભાઈના જીવનવ્યવહારની ઝાંખી થયા વગર રહે જ નહીં.



સંવેદનશીલ સ્વભાવ :

વસંતભાઈ સંવેદનશીલ વ્યક્તિ હોવાને કારણે નારાજ પણ થઈ જાય. નારાજ થવાનાં કારણો પણ સાવ જ જુદાં... વસંતભાઈનો મારો પ્રારંભિક પરિચય સામાન્ય સ્વયંસેવક તરીકેનો, એટલે સ્વાભાવિક રીતે જ તેઓ અમારા નેતા હોઈ અમારી વચ્ચે Respectable distance હોય. પણ થોડાક જ સમયમાં હું અમદાવાદમાં સંઘના પ્રચારક તરીકે કામ કરતો થયો. વસંતભાઈના હૃદયમાં પ્રચારક માટે પૂર્ણ આદર. પ્રચારક પોતાને ઘરે આવે, મળવાનું થાય, ચર્ચાવિચારણા થાય, એ બધું તેમને ગમે. પણ હું ક્યારેય નિરાંતે તેમના ઘરે જતો નહીં અને કારણ એક જ – પહેલેથી જ ઊભું થયેલું Respectable distance. એવામાં એક વાર એક કાર્યક્રમમાં અમે ભેગા થઈ ગયા. રામરામ – નમસ્કાર કરતાંની સાથે જ વસંતભાઈએ પોતાની નારાજગી ઉગ્ર શબ્દોમાં વ્યક્ત કરવી શરૂ કરી : "હા, તમે તો હવે માનનીય પ્રચારક ને ! બહુ મોટા થઈ ગયા ને !! હું પણ સ્વયંસેવક છું હોં... મારા ઘરે ન જ આવવાના હો તો ના કહી દો..." બસ આટલું કહીને તેઓ ચાલતા થયા. વસંતભાઈની નારાજગીને હું જાણતો હતો. એ જ સાંજે હું એમના ઘરે પહોંચ્યો. સવારની વાત જાણે બની જ નથી એવી રીતે રાત્રે મોડે સુધી ગપસપ કરી આગ્રહપૂર્વક ભોજન પણ કરાવ્યું, એટલું જ નહીં, દર ગુરુવારે મારે તેમના ઘરે જ ભોજન કરવું તેવો આગ્રહ પણ કર્યો અને ગુરુવારના અમારા સહભોજનનો ક્રમ લગભગ છેવટ સુધી ચાલુ રહ્યો.

વસંતભાઈનાં ધર્મપત્ની વિદ્યાબેન છેલ્લે વિદાય આપવા વસંતભાઈના દેહ પાસે આવ્યાં. વીસ વર્ષ પૂર્વે જેમણે એ મંગળસૂત્ર ભેટ ધર્યું હતું તેમને જ એ આજે પરત કરવાનું હતું... વિદ્યાબેને ધ્રૂજતા હાથે મંગળસૂત્ર ઉતાર્યું... એ પળો... ફરીથી ગમગીનીને વધુ ઘેરી બનાવી ગઈ.

૫ જૂન ૧૯૭૩ના દિવસે પૂ. ગુરુજીનો સ્વર્ગવાસ થયો. રાતભર સંઘના કાર્યાલયમાં પ્રવૃત્તિ ચાલતી રહી. વસંતભાઈ પાટણના પ્રવાસે ગયા હતા. વસંતભાઈને માહિતી આપવાનું રહી ગયું. પૂ. ગુરુજીના સ્વર્ગવાસના સમાચાર એમણે બીજે દિવસે સવારે છાપામાં વાંચ્યા – તરત જ તેઓ પાટણથી મારતી ઝડપે સવારે લગભગ આઠ વાગ્યે અમદાવાદ આવી પહોંચ્યા. બધા અધિકારીઓ સવારના પ્લેનમાં મુંબઈ થઈ નાગપુર જવા રવાના થઈ ગયા હતા. વસંતભાઈ સીધા જ મારા રૂમમાં આવ્યા. લગભગ ભાંગી પડેલ વસંતભાઈ ઘણા ઉદાસ હતા. તેઓ એક જ વાક્ય બોલ્યા, "શું, નરેન્દ્રભાઈ, મને રાત્રે એક ટ્રંકકૉલ કે તાર પણ ન કરી શક્યા ?" અને...એમની આંખમાંથી અશ્રુધારા વહેવા માંડી. પૂ. ગુરુજી પ્રત્યેની તેમની અપાર શ્રદ્ધાનું જ આ પરિણામ હતું.

વસંતભાઈની કર્તૃત્વશક્તિનાં દર્શન તો અનેક વાર થતાં. તેમાંય કેટલીય ઘટનાઓ તો કાયમ માટે આપણાં મન ઉપર વિશિષ્ટ છાપ મૂકી ગયા વગર રહે જ નહીં. નવનિર્માણ આંદોલન દરમ્યાન જનસંઘના કાર્યકરોને 'મિસા' હેઠળ પકડવામાં આવ્યા હતા. એ દિવસોમાં વસંતભાઈ સાધના પુસ્તક પ્રકાશન તરફથી પ્રકાશિત થનાર 'શ્રી ગુરુજી' પુસ્તક લખી રહ્યા હતા. વસંતભાઈ જેલમાં જાય તો પુસ્તક-પ્રકાશનમાં વિલંબ થવાની પૂરી શક્યતાઓ હતી. આથી ધરપકડ થવાની શક્યતાઓ ઊભી થતાંની સાથે જ વસંતભાઈ ભૂગર્ભમાં ચાલ્યા ગયા હતા. મારે બહારના આંદોલન સાથે સંપર્કમાં રહી વસંતભાઈને પળેપળની વિગતોથી વાકેફ રાખવાના હતા. એ દિવસોમાં આંદોલન તેની ચરમસીમા પર હતું. ગુજરાત જનસંઘના મોટા ભાગના નેતાઓ જેલમાં હતા. બહાર ચારે તરફ ગોળીબારનો ધોધ વરસતો હતો. એક પછી એક બલિદાનોની હારમાળા ખડકાયે જતી હતી. ગુજરાત આખુંયે કર્ફ્યુની કાળી છાયામાં સપડાયેલ હતું. આવી સ્થિતિમાં એક સંવેદનશીલ નેતાને ભૂગર્ભમાં રહેવું પડે ત્યારે તેની માનસિક સ્થિતિ જોનારા ભલભલાને પિગળાવી દે તેવી હતી. દરેક પળે ગુજરાત આખાની માહિતી જાણવા તેઓ આતુર રહેતા. સમાચાર મળવામાં સહેજ પણ વિલંબ થાય તો તેઓ આકુળ-વ્યાકુળ થઈ જતા. જનઆંદોલન દરમિયાન થતી હિંસા અને માનવહત્યા તેમના હૃદયને હચમચાવી મૂકતી હતી. આ વખતે એમણે બે મોરચે સફળતાથી કામ પાર પાડ્યું. ભૂગર્ભમાં રહી સંઘર્ષ સાથે સંબંધ રાખવાની સાથેસાથે મનને એકાગ્ર કરી 'શ્રી ગુરુજી' પુસ્તકનું લેખનકાર્ય પણ પૂર્ણ કર્યું. આ ઘટનાઓએ મારા મન પર તેમની એકાગ્રતા અને સંવેદનશીલતાની ઊંડી છાપ મૂકી.

ગંભીર જવાબદારીઓ વચ્ચે પણ હળવાશ :

સૌના નેતા વસંતભાઈ પરિવારની સૌથી વધારે ટીખળી વ્યક્તિ તરીકે જાણીતા હતા. ઘરના દરેક સાથે હંસી-મજાક તોફાન-મસ્તી એ જાણે એમનો સ્વભાવ હતો. વસંતભાઈનાં લગ્ન થયાં ત્યારે વિદ્યાભાભી ચા નહોતાં પીતાં. વસંતભાઈની

ઇચ્છા કે તેઓ પણ ચા પીએ. આથી તેમણે વિદ્યાભાભીને એક માસમાં ચા પીવાની શરૂ કરવાની મહેતલ આપી. ૯ ફેબ્રુઆરીએ વસંતભાઈનાં લગ્ન થયાં હતાં અને ૯ માર્ચ સુધીમાં વિદ્યાભાભીએ ચા પીવી શરૂ કરવી તેવી તેમની ઇચ્છા અને આગ્રહ પણ ખરો ! છતાંય તેની રજૂઆત સાવ જ અનોખી ! લગ્ન પછીના થોડાક જ દિવસમાં એક વહેલી સવારે વસંતભાઈ અને તેમના ભત્રીજા વિનોદે સૂત્રોચ્ચાર પ્રારંભ કર્યો :

'विद्याकाकी नउ मार्चला काय करणार ?

चहा पीणार...चहा पीणार !

આ ક્રમ રોજનો બની ગયો. વિદ્યાબેને માન ખાતર એક રકાબી ચા પીધી. તે પછી વિદ્યાબેને ચા પીધી નહિ. વસંતભાઈએ વધુ આગ્રહ પણ કર્યો નહિ.

ધમાચકડીમાં ઘર આખાને માથે લેવું વગેરે પ્રસંગો વસંતભાઈના ટીખળી સ્વભાવનાં દર્શન કરાવતા. વસંતભાઈને વરસાદમાં નાહવાનો ભારે શોખ. તબિયત ખરાબ હોવા છતાંય જો વરસાદ આવે તો પહેરેલ કપડે પલળ્યા વગર રહે જ નહીં. એમના જીવનનું છેલ્લું વરસાદી સ્નાન અમે સાથે જ કર્યું. મુસળધાર વરસાદ શરૂ થતાં જ રાવસાહેબ તો કપડાં પહેરીને તૈયાર થઈ ગયા. આગ્રહપૂર્વક મને પણ સાથે લીધો. એમના ઘરની સામેના પરિમલ ગાર્ડનમાં અમે જઈને બેઠા... એ દિવસે ખાસ્સા બે કલાક ચાલેલ વરસાદમાં અમે પલળતા જ રહ્યા. રાવસાહેબ નાના બાળકની જેમ વર્ષા - બિંદુઓને ઝીલતા કુદરતને માણતા રહ્યા...એ એમના જીવનનું છેલ્લું ચોમાસુ હતું. ગંભીર જવાબદારીઓ વચ્ચે પણ વ્યક્તિગત જીવનમાં કેટલી હળવાશ !



મા. શ્રી વસંતભાઇની અંતિમયાત્રા - સંઘ પરિવાર સાથે નરેન્દ્ર મોદી

વસંતભાઈને ડાયાબીટીસ હતો, પણ ખાવાના ભારે શોખીન. હું ગુરુવારે તેમના ઘરે જમવા જતો હતો. આથી વર્ષમાં ચાર-પાંચ ગુરુવારે વિદ્યાભાભીને મારો જન્મદિવસ છે એમ કહી કંઈક મીઠી વાનગી બનાવડાવે અને જમ્યા પછી કહે કે આજે નરેન્દ્રભાઈનો જન્મદિવસ નથી હો... ? સૌ. શાંતાભાભીની વસ્તુઓ સંતાડી દેવી, તેમને ડરાવવાં, ક્યારેક વંદો પકડીને શાંતાભાભીની ઉપર નાખી તેમને કામ કરતાં-કરતાં હેરાન કરવાં, તો ક્યારેક ભત્રીજા અજય સાથેની

વસંતભાઈની જીવનયાત્રા ટૂંકી હતી, પરંતુ ભવ્ય હતી. આ જમાનાનાં મૂલ્યોના જતનનો જીવતોજાગતો દસ્તાવેજ તેઓ હતા. એમના જીવનની સફળતામાં ત્રણ અતિ મહત્ત્વનાં પાસાં – clarity of thought, faith in conviction અને character to act – ખૂબ સબળ હતાં, અને એ જ એમની જીવનસાધના હતી. વસંતભાઈના જીવનના છેલ્લા દિવસો અતિશય શ્રમવાળા રહ્યા. કટોકટી દ્વારા થયેલો લોકશાહી પરનો કારમો ઘા, મોરચાનું પક્ષીય તેમ જ

શાસકીય ચાલન ઉપરાંત દેશનાં અન્ય રાજ્યોમાં ચાલતા સંઘર્ષમાં સહાયરૂપ થવાની જવાબદારીને કારણે એમના અસ્વસ્થ શરીરને પણ ઘણો જ શારીરિક-માનસિક બોજ વહન કરવો પડતો. શરીર વધારે કામ આપતું થાય એ ઇરાદાથી મુંબઈ ઑપરેશન માટે જવાનું નક્કી થયું.

૬ ફેબ્રુઆરી ૧૯૭૬. રાત્રે ગુજરાત મેલ પર અમે કેટલાક મિત્રો વસંતભાઈને મૂકવા ગયા હતા. હંમેશની જેમ જ હળવી પળોમાં અમારી વાતચીત ચાલતી હતી. એ દિવસોમાં ગુજરાતમાં રાજસભાની ચૂંટણીઓ પણ આવવાની હોઈ વસંતભાઈ રાજસભા માટેના લગભગ નિશ્ચિત ઉમેદવાર હતા. તેના અનુસંધાનમાં જ મેં સ્ટેશન પર એક વાત કરી, "શું, રાવસાહેબ, આપણે તો દિલ્હી જવાની તૈયારીઓ કરવાની હતી ત્યાં આ મુંબઈ ભણી ઊપડ્યા ! આપણી ગાડી રીવર્સમાં જ ચાલતી હોય." હસવામાં કહેલ મારી આ વાત તેમની સાથે છેલ્લી વાતચીત હતી. રીવર્સમાં ગયેલ ગાડીને દિલ્હી ભણી જવાનો વારો જ ન આવ્યો. ૯ ફેબ્રુઆરીએ વસંતભાઈને બૉમ્બે હૉસ્પિટલમાં દાખલ કરાયા. ૧૨મી તારીખે ગુજરાતની મોરચા સરકારના ટેકેદાર કિમલોપનું વિસર્જન થયું. વસંતભાઈએ મુંબઈમાં આ સમાચાર જાણ્યા... એ પળથી જ એમના મનમાં ઉદ્વેગ થયો... તેઓ સતત એમ જ કહ્યા કરતા કે, "આવે વખતે હું ગાંધીનગર હોત તો સારું થાત. મારે કંઈક જવાબદારી અદા કરવાનો સમય આવ્યો છે, ત્યારે હું અહીં પથારીમાં પડ્યો છું." વગેરે અનેક વાતો તેઓ બબડતા રહ્યા. આ સમાચારોએ અવશ્યપણે તેમના મન ઉપર મોટો આઘાત કર્યો હતો. બસ પછી તો એમની તબિયત બગડતી જ ગઈ અને ૧૬ ફેબ્રુઆરીની સાંજે ૬-૪૦ મિનિટે તેઓ દિવંગત થયા. તે સમાચાર ફોન ઉપર સાંભળવાનું દુર્ભાગ્ય મને પ્રાપ્ત થયું.

જેણે પોતાના ખભા ઉપર સેંકડો કાર્યકરોને બેસાડી સામાજિક જીવનની શ્રેષ્ઠતાઓ બક્ષી હતી એ વસંતભાઈને કાંધ આપવાનો વખત આવશે એવી કલ્પના પણ હૃદયવિદારક છે... છતાંય આજે એ સત્યઘટના બની ચૂકી હતી. તા. ૧૭મીએ એમના દેહને અમદાવાદ લાવવામાં આવ્યો. ઍમ્બ્યુલન્સમાંથી બહાર કઢાતા દેહને કાંધ આપવા કાર્યકરોનો કાફલો ખડો થઈ ગયો... હા, વસંતભાઈના દેહને ઊંચકનાર સૌની અહીં બેવડી જવાબદારી હતી. તેમણે વસંતભાઈના દેહને ઊંચકવાની સાથેસાથે વસંતભાઈના જીવનલક્ષ્યની જવાબદારી પણ વહન કરવાની પળનો પ્રારંભ થઈ ગયો હતો, અને માટે જ એ બધા આ બેવડી જવાબદારીના ભારથી દબાયેલ લાગતા હતા.

વસંતભાઈના દેહને તેમના ઘરના આગળના રૂમમાં રાખવામાં આવ્યો. અર્ધખુલ્લાં નેત્રોવાળો વસંતભાઈનો દેહ હંમેશની જેમ કોઈને પણ આવકારવા તૈયાર નહોતો, રૂમમાં ક્યાંય હાસ્યની છોળો ઉડાવતા વસંતની બહાર નહોતી. અહીં સૂતેલા વસંતની સામે ફક્ત ચાર જ વસ્તુઓ હતી : સામેની ભીંત પર તેમની જમણી તરફ તેમની જનેતાની તસ્વીર હતી. પોતાના પુત્રના જીવનકર્મથી સંતુષ્ટ થઈ ગૌરવ અનુભવતી એ 'મા'ની તસ્વીર પણ દીકરાની વહેલી વિદાયથી કંઈક વ્યથિત જણાતી હતી. આંખની બિલકુલ સામે વસંતભાઈના જીવન-આદર્શ એવા બે મહાપુરુષો – ડૉ. હેડગેવારજી અને પૂ. ગુરુજી – નાં ચિત્રો હતાં... વસંતભાઈની આંખો ત્યાં જ ચોટી ગઈ હતી – મૂક વદન જાણે એ કહેવા માટે આતુર હતું કે મને સોંપેલા કાર્યને અધવચ્ચે મૂકી હું ચાલતો થયો છું તેનું આપને દુઃખ તો નથી ને ?

અમારા અંતરંગ વર્તુળમાં અમે વસંતભાઈને 'રાવસાહેબ' તરીકે ઓળખતા. 'રાવસાહેબ' નામકરણનો જન્મ કેવા સંજોગોમાં થયો એ તો નામકરણ કરનાર એવા મને પણ યાદ નથી. હા, પણ આ નામનું ઉચ્ચારણ અમે સૌ ખૂબ વહાલથી કરતા.

* વસંતભાઈના જીવનઘડતરમાં જેમનો સીધો સંબંધ રહ્યો, વસંતભાઈના વ્યવહારમાં જેમનાં ચિંતન અને મનનની છાંટ જોવા મળતી હતી એ પંડિત દીનદયાળ ઉપાધ્યાયની તસવીર પોતાના સાથીના કાર્ય અંગે સંતોષ વ્યક્ત કરતી હતી, તો બીજા સાથીઓને દુઃખી ન થવાની પ્રેરણા પણ આપતી હતી.
* અહીં સૂતેલા જીવને શરીરને ક્યારેય સ્નેહ કર્યો નહોતો !
* પોતાની જીવનજ્યોત દ્વારા જ તેણે દીપ પ્રજ્વલિત કર્યે રાખ્યા હતા... !
* શ્રમની એને સૂગ નહોતી...

* લોકહિતનાં સોણલાં સાકાર કરવા આરામને એણે રામરામ કર્યા હતા.
* હજારોની ચિંતા કરવાની વૃત્તિ એને ચિતા તરફ જતો રોકવા અસમર્થ બની ગઈ હતી.

વસંતભાઈની મહાયાત્રાની તૈયારીઓ ચાલતી હતી. જેને માટે શબ્દો પણ વામણા પડે એવી વિદાયની પળ...

વસંતભાઈનાં ધર્મપત્ની વિદ્યાબેન છેલ્લે વિદાય આપવા વસંતભાઈના દેહ પાસે આવ્યાં. વીસ વર્ષ પૂર્વે જેમણે એ મંગળસૂત્ર ભેટ ધર્યું હતું તેમને જ એ આજે પરત કરવાનું હતું... વિદ્યાબેને ધ્રૂજતા હાથે મંગળસૂત્ર ઉતાર્યું... એ પળો... ફરીથી ગમગીનીને વધુ ઘેરી બનાવી ગઈ.

બપોરે ૨-૩૦ કલાકે તેમની કર્મભૂમિ ખાડિયાના જનસંઘ કાર્યાલયથી સ્મશાનયાત્રા નીકળી. બસ ! એટલું જ કહેવું બસ થશે કે રાજકીય નેતાઓની આવી સ્મશાનયાત્રાઓ ભાગ્યે જ નીકળતી હશે. એણે રાજ કર્યું હતું લોકોનાં હૈયાં ઉપર - આજે એ હૈયાં સૂનાં બની ગયાં હતાં, લાખો આંખો આંસુથી છલકાતી હતી.

સ્મશાનમાં એમને ભવ્ય અંજલિઓ અપાઈ. શ્રદ્ધાંજલિ અર્પવા આવનાર દરેકે કંઈક ગુમાવ્યું હતું...એ અંજલિઓમાં ઔપચારિકતા નહોતી... સૌનાં હૃદયોની વ્યથાની કથા હતી. તે રાત્રે મારી ડાયરીમાં મેં નોંધ્યું :

दोस्ती का जाम पीने से पहले ही टूट गया !
सूरज शाम से पहले ढल गया !!







શ્રી વસંતભાઈની પ્રથમ પુણ્યતિથિએ...

ભાઈ,
આવું તે શું તમને
ઘેલું લાગ્યું ?
બસ,
પ્રગટાવ્યા જ કર્યા
પ્રગટાવ્યા જ કર્યા
ગામે...ગામ,
ઘેરે...ઘેર,
બસ,
દીપક પ્રગટાવ્યા જ કર્યા !
જરા
પાછળ વળીને જોવું તો હતું...!!
ક્યાંક
આ પ્રગટાવનારો જ
પ્રજ્વળી ઊઠશે !
પણ ભાઈ,
ગઈ વસંતથી
આ વસંત સુધી
દૂધેશ્વરના ઓવારેથી
નીકળતા
પ્રકાશ-પુંજને સહારે
વસંત વિના
ઘણુંયે ચાલ્યા...
ઘણાયે ચાલ્યા...
માટે જ તો
પ્રથમ પુણ્યતિથિ પૂર્વે જ
'મોરચો'
'પક્ષ' બની ગયો
લોકશાહીની જ્યોતિને
જલતી રાખવા... !







માનવ કલ્યાણ

પ્રલોભન-આકર્ષણ દ્વારા
હિન્દુ ધર્મે લોકોને
પોતા પ્રત્યે આકર્ષિત કરવાનો
પ્રયત્ન કદી કર્યો નથી.
કારણ એમાં શાશ્વત કલ્યાણ નથી.
હિંદુ સંસ્કૃતિએ તો જ્ઞાન માંગ્યું –
અંધકારમાંથી પ્રકાશ તરફ,
મૃત્યુ તરફથી અમૃત તરફ જવા માટે,
કલ્યાણ, માનવજીવનનું એમાં છે.





વિચાર બિંદુ

માનવ જીવન

કમળ ઉપર જળનાં બિંદુ હોય છે.
સુંદર લાગે છે. પણ તે ક્ષણિક હોય છે.
સૂર્યનાં કિરણો સાથે
કમળ ઉપરનાં જળ બિંદુ નષ્ટ થાય છે.
ક્યારે નષ્ટ થાય છે
તેની ખબર પણ પડતી નથી.
માનવ જીવન પણ એવું જ છે.



(વસંતભાઈની ડાયરીમાંથી)





સુખ શામાં ?

સુખ વસ્તુમાં નથી.
ધર્માધિષ્ઠિત મનમાં છે.
મિઠાઈ બહુ ભાવે છે.
ખાવાથી સુખ મળે છે.
પણ કેટલી ખાશો ?
ક્યાં સુધી ખાશો ?
બહુ ખાશો તો ઊલટી થશે.
મિઠાઈ પ્રત્યે અભાવ થશે.

૧૦

સેવા - સમર્પિત ડૉ. વણીકર





મા. ડૉ. વિશ્વનાથ અનંતરાવ વણીકર



ડૉ. વણીકરજીની યાદોનો અંબાર છે. તેઓ દુખિયારાંના બેલી હતા. કરુણા તેમની સહજતા હતી. તેઓ કર્મવીર હતા. સંતો-મહંતો પાસે શ્રદ્ધાથી બેઠા હોય ત્યારે તેમનામાં સાધકનાં દર્શન થાય. વટાળ-પ્રવૃત્તિ સામેનો રોષ અનુભવીએ તો તેમનામાં સંઘર્ષવીરનાં દર્શન થાય. તેઓ જીવનના અંતકાળ સુધી સમાજ માટે ખપતા રહ્યા. અંગત જીવન લગભગ સમાજ-ચરણે ધરી દીધું હતું.



શૂલ ભરે કંટક-પથ પર
આજીવન અભિયાન કિયા હૈ
મૈં મધુસે અનભિજ્ઞ આજ ભી, જીવનભર વિષપાન કિયા હૈ.







સંઘસ્થાન

સેવા - સમર્પિત ડૉ. વણીકર

અમદાવાદના પ્રતિષ્ઠિત પરિવારોમાં વણીકર પરિવારની આગવી પ્રતિષ્ઠા હતી. જૂની પેઢીના મિલમાલિક પરિવારોમાં વણીકર પરિવારની આગવી શાખ હતી. શ્રી અનંતરાવ વણીકર વ્યવસાયે એન્જિનિયર. વર્ષો સુધી અમદાવાદમાં ચીફ એન્જિનિયર તરીકે સેવાઓ આપેલી. આજથી લગભગ ૧૦૦ વર્ષ પૂર્વે એન્જિનિયર તરીકે અનેક નવા કીર્તિમાન સ્થાપિત કર્યા હતા. શ્રી અનંતરાવ વણીકર મૂળ તો મહારાષ્ટ્રના નાશિક પાસેના વણી ગામના, પરંતુ પેઢીઓથી અમદાવાદમાં ભાઉની પોળમાં વસેલા. શ્રી વિશ્વનાથ વણીકર તેમનું એકમાત્ર સંતાન. પિતા એન્જિનિયર, પરંતુ વિશ્વનાથ વણીકરજીએ ડૉક્ટર બનવાનું પસંદ કર્યું. ખાસ્સો ઊંચો શારીરિક બાંધો. પ્રભાવી વ્યક્તિત્વ. લંડનમાં ભણીને ભારત પરત આવવાની મહેચ્છા સાથે વિદેશમાં ડીગ્રી પ્રાપ્ત કરી વેળાસર ભારત પરત આવી ગયા. ડૉ. વણીકરે ગુજરાતના પ્રથમ પૅથૉલોજિસ્ટ ડૉક્ટર તરીકે ખ્યાતિ પ્રાપ્ત કરી હતી.

આજથી પચાસ વર્ષ પૂર્વે ડૉક્ટર તરીકે સમાજમાં ગૌરવ અને આદર ખૂબ ઊંચાં હતાં. તેમાંય વિદેશમાં ડીગ્રી મેળવીને આવેલ વ્યક્તિ તરફ જોવાનો સમાજનો અહોભાવ અનન્ય રહેતો. ભરયુવાનીમાં આવાં માન-મરતબો મળે ત્યારે માનવમન કેવા ઉછાળા મારતું હોય તેનો અંદાજ કરવો મુશ્કેલ નથી. પરંતુ ડૉ. વણીકરજીના સંસ્કાર જ સાવ જુદા હતા. ડૉક્ટર થયા પછી પણ સાઈકલ પર ફરવું તેમને માટે સહજ હતું. અત્યંત સાલસ વ્યક્તિત્વ. પરગજુ જીવનપ્રવૃત્તિ. ગુજરાતના ઉચ્ચ પરિવારોમાં ડૉક્ટર તરીકે સર્વપ્રિય સ્વજન બની રહ્યા. તેમની યોગ્યતા અને પ્રતિષ્ઠા જોઈ વર્ષો પહેલાં અમદાવાદ મ્યુનિસિપલ કૉર્પોરેશને નવી બનેલી એલ. જી. હૉસ્પિટલ સંભાળવા તેમને વિનંતી કરી. ધીકતી કમાણી છોડી અમદાવાદની સુખાકારી માટે તેમણે એલ. જી. હૉસ્પિટલના વિકાસની ચિંતા માથે લીધી અને અમદાવાદના પૂર્વ-વિસ્તારના – ખાસ કરીને મિલ મજૂરોના રહેણાકવાળા સમગ્ર ક્ષેત્રને આરોગ્યસેવા પૂરી પાડવા માટે તનતોડ મહેનત આદરી.

ડૉ. વણીકરજીને મન આરોગ્યની સેવા એ પ્રભુસેવા હતી. ડૉક્ટરી તેમને માટે કારકિર્દીનું સાધન નહોતી. જીવનભર લાખો દર્દીઓની સેવા કરી હશે. લાખો ઈન્જેકશન આપનારા ડૉ. વણીકરજીના મનમાં એક ઘટના ખૂબ જ પીડાદાયક હતી. તેમના મનને એ વાત કાયમ સતાવતી રહેતી. ઘટના એવી હતી કે ડૉ. વણીકરજીનાં પૂ. માતુશ્રી – માઈ બીમાર પડ્યાં હતાં. લગભગ ૯૦ વર્ષની ઉંમર. ડૉ. વણીકરજી પુત્ર-ભાવથી તેમની સેવા કરતા. લાખો દર્દીઓને ઈન્જેકશન આપનાર ડૉક્ટર માટે પોતાની માતાને ઈન્જેકશન આપવાનો પ્રસંગ આવ્યો. ડૉક્ટરે સહજભાવે તે કર્તવ્ય બજાવ્યું. પરંતુ અહીં ડૉક્ટર કરતાં તેઓનો પુત્રભાવ પ્રગટ થઈ ગયો. પોતાની માતાને ઈન્જેકશન આપતાં સહેજ હાથ ધ્રૂજી ગયો. પરિણામે આઈને જ્યાં ઈન્જેકશન આપ્યું હતું ત્યાં પાક થઈ ગયો. માઈને પીડા થતી તેના કરતાં વધારે પીડા વણીકરજીને થતી. માઈના સ્વર્ગવાસ પછી પણ વણીકરજી પોતાને હાથે થયેલ આ આઘાતને ભૂલી નહોતા શકતા. ઘટના યાદ આવે ત્યારે લાગણીશીલ થઈ જતા.

ડૉ. વણીકરજી બાલ્યકાળથી આર. એસ. એસ.ના સ્વયંસેવક. પ. પૂ. ગુરુજી સહિતના અનેક મહાનુભાવો સાથે તેમના પરિવારનો અતૂટ નાતો. ગુજરાતમાં રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની પ્રવૃત્તિ સાવ સામાન્ય સ્થિતિએ હતી તે વખતે પણ વણીકરજીની પ્રતિષ્ઠાને કારણે ગુજરાતના અગ્રગણ્ય આગેવાનોને તેઓ સંઘની નિકટ લાવવામાં સફળ થતા. ગુજરાતમાં અનેક વાર રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના કોઈ ઉચ્ચ પદની જવાબદારી વણીકરજી સંભાળે તેવી ચર્ચા થાય, તેમને વિનંતી થાય, દરેક વખતે તેઓ પદ લેવાની ના કહે, એટલું જ નહીં, એક જ અઠવાડિયામાં એ પદ માટે વધુ યોગ્ય વ્યક્તિને શોધી સંઘ સાથે પરિચય કરાવી દેતા. પોતે પદ ન લે, પણ પદ માટે યોગ્ય અનેક નવા આગેવાનોને સંઘ સાથે જોડવાનો તેમનો પ્રયાસ જીવનપર્યંત ચાલ્યો. ડૉ. વણીકરજીએ એલ. જી. હૉસ્પિટલમાંથી નિવૃત્ત થતાં જ પોતાનું સમગ્ર જીવન સમાજસેવામાં ખર્ચવાનો નિર્ધાર કર્યો. હિન્દુ સમાજ સંગઠિત થાય, સમાજમાં ઘર કરી ગયેલી અસ્પૃશ્યતા નષ્ટ થાય, સમાજની વાડાબંધી નેસ્તનાબૂદ થાય, હિન્દુ ગૌરવભેર

આજથી પચાસ વર્ષ પૂર્વે ડૉક્ટર તરીકે સમાજમાં ગૌરવ અને આદર ખૂબ ઊંચાં હતાં. તેમાંય વિદેશમાં ડીગ્રી મેળવીને આવેલ વ્યક્તિ તરફ જોવાનો સમાજનો અહોભાવ અનન્ય રહેતો. ભરયુવાનીમાં આવાં માન-મરતબો મળે ત્યારે માનવમન કેવા ઉછાળા મારતું હોય તેનો અંદાજ કરવો મુશ્કેલ નથી. પરંતુ ડૉ. વણીકરજીના સંસ્કાર જ સાવ જુદા હતા.

પોતાની મહાન સંસ્કૃતિ અને મહાપુરુષો માટે ગૌરવ કરતો થાય તેવી તેમની મથામણ રહેતી. ગુજરાતમાં વિશ્વ હિન્દુ પરિષદના કામના પાયામાં કોઈ એક વ્યક્તિનું નામ લેવું હોય તો તે ડૉ. વણીકરજી. સાચા અર્થમાં તેમણે વિશ્વ હિન્દુ પરિષદના વિકાસ માટે પોતાની જાતને ખપાવી દીધી હતી. ગુજરાતમાં વિશ્વ હિન્દુ પરિષદની પાપા-પગલી હતી. આજથી ત્રીસ વર્ષ પહેલાં બે પાનાંનું **'વિશ્વ હિન્દુ સમાચાર'** પાક્ષિક પત્ર પ્રગટ કરી જાગૃતિનું કામ આરંભેલું.

ડૉ. વણીકરજીનું વ્યક્તિત્વ સમસ્ત ગુજરાતમાં અને મોભાદાર કુટુંબોમાં ખૂબ જ આદર-પ્રાપ્ત હતું. સુખી કુટુંબોમાંથી દાન મેળવી વિશ્વ હિન્દુ પરિષદનું કાર્ય ચલાવવું તેમના માટે મુશ્કેલ નહોતું. પરંતુ તેમણે એમ કરવાને બદલે સમાજના સામાન્ય માનવીને પરિષદના કાર્ય સાથે જોડવાની આગવી વ્યવસ્થા ઊભી કરી. એ જમાનામાં "દાન-પેટી" યોજના બનાવી. નાના-નાના દુકાનદારોને ત્યાં 'વિશ્વ હિન્દુ સમાચાર'ની પત્રિકાઓ અને દાનપેટી મૂકવા માટે જાતે જાય, દુકાનદારોને પ્રેરિત કરે અને તેમને ત્યાં આવતા ગ્રાહકો દાનમાં કંઈ આપે તો પેલી પત્રિકા મફત આપવાનું ગોઠવે. દુકાનદારો ઘણી વાર આવી જવાબદારી લેવાની આનાકાની કરે. ડૉક્ટરસાહેબ જાતે જઈ સમજાવે, મહિનામાં પાંચ રૂપિયા નીકળશે તોપણ ઘણા છે, એવો વિશ્વાસ આપે. ડૉ. વણીકરજીએ પોતાના અથાગ પ્રયાસોથી ગુજરાતનાં નાનાંમોટાં શહેરોમાં પાંચ હજાર કરતાં પણ વધારે સ્થાનો ઉપર આવી દાનપેટીઓ મુકાવી દીધી. જોતજોતામાં વિશ્વ હિન્દુ પરિષદની વાત પહોંચાડવા માટે વિશાળ નેટવર્ક ઊભું થઈ ગયું. ધીરેધીરે નાનાંમોટાં મંદિરો સામે ચાલીને પોતાને ત્યાં દાનપેટી મૂકવા લાગ્યાં. વિશ્વ હિન્દુ પરિષદને ચલાવવા માટે સામાન્ય માનવીના બે આના-ચાર આનાનું દાન સંગઠન ઊભું કરવાનો મોટો આધાર બની ગયું. નાના લાગતા આ કામ માટે વણીકરજીએ ભારે જહેમત ઉઠાવી હતી. તેમની વ્યક્તિગત પ્રતિષ્ઠાને કારણે ગુજરાતનાં અનેક નગરોનાં મઠ-મંદિરોમાં તેને વ્યાપક આવકાર મળ્યો હતો.

વિશ્વ હિન્દુ પરિષદનો જન્મ ૧૯૬૪માં થયો હતો. પરંતુ પાંચ જ વર્ષના ટૂંકા ગાળામાં ડૉ. વણીકરજીએ ગુજરાતને ખૂણેખૂણે વિશ્વ હિન્દુ પરિષદનું નામ ગાજતું કરી દીધું હતું. ૧૯૭૨માં વિશ્વ હિન્દુ પરિષદના ગુજરાત એકમનું ભવ્ય સંમેલન કરવાનું સાહસ ડૉ. વણીકરજી જ કરી શકે. ગુજરાતના અને દેશના ગણમાન્ય મહાત્માઓને સિદ્ધપુરની સરસ્વતીના પટમાં એકત્ર કરવામાં તેમને અદ્‌ભુત સફળતા મળી હતી. ગુજરાતના લાખો નાગરિકો પહેલી વાર હિન્દુત્વની છત્રછાયા નીચે બધા જ પંથના આચાર્યો, સંતો, મહંતો, મંડલેશ્વરોના આશીર્વાદ મેળવી ધન્ય થયા હતા.

૧૯૭૨-૭૩ના દુષ્કાળ દરમ્યાન ડૉ. વણીકરજીએ આદિવાસીઓની સેવા કરવાનું બીડું ઉઠાવ્યું. સાબરકાંઠાના પાલ, ચિતરિયા, ભિલોડા, ખેડબ્રહ્મા, વિજયનગર – આ સમગ્ર વિસ્તાર ખૂંદી વળ્યા. અઠવાડિયામાં ત્રણ દિવસ તેમના ડેરા-તંબુ આદિવાસીઓની વચ્ચે જ હોય. અવારનવાર પોતાના પરિચિત મિલમાલિકોને સાથે લઈ દારુણ સ્થિતિમાં જીવતા આદિવાસી વિસ્તારનાં દર્શન કરાવે.

પ. પૂ. ગુરુજી કૅન્સરની જીવલેણ બીમારીનો ભોગ બન્યા હતા, તેમ છતાંય પૂર્ણ સમય માટે આ વિરાટ હિન્દુ સંમેલનમાં હાજર રહી માર્ગદર્શન આપ્યું હતું. ડૉ. વણીકરજી ઉપર પ. પૂ. ગુરુજીના આશીર્વાદ હરહંમેશ રહેતા.

પાંચ-સાત વર્ષના ટૂંકા ગાળામાં ગુજરાતના જાહેર જીવનમાં વિશ્વ હિન્દુ પરિષદે પોતાનું આગવું સ્થાન ઊભું કરી દીધું હતું. પરંતુ ડૉક્ટર વણીકરજી જુદી માટીના માનવી હતા. સાચા અર્થમાં સંત જેવું તેમનું જીવન હતું. તેમને મન સંસ્થાનું કદ, તેનો પ્રભાવ, તેની ઝાકઝમાળ જેવી બાબતોથી સંતોષ નહોતો. તેઓ કશુંક વધુ નક્કર થાય – કંઈક વધુ સાચી સારી સેવા કરવા માટે તત્પર રહેતા. ગુજરાતમાં અવારનવાર દુષ્કાળની સ્થિતિ સર્જાય. ૧૯૭૨-૭૩ના દુષ્કાળ દરમ્યાન ડૉ. વણીકરજીએ આદિવાસીઓની સેવા કરવાનું બીડું ઉઠાવ્યું. સાબરકાંઠાના પાલ, ચિતરિયા, ભિલોડા, ખેડબ્રહ્મા, વિજયનગર – આ સમગ્ર વિસ્તાર ખૂંદી વળ્યા. અઠવાડિયામાં ત્રણ દિવસ તેમના ડેરા-તંબુ આદિવાસીઓની વચ્ચે જ હોય. અવારનવાર પોતાના પરિચિત મિલમાલિકોને સાથે લઈ દારુણ સ્થિતિમાં જીવતા આદિવાસી વિસ્તારનાં દર્શન કરાવે. સમાજ માટે કશુંક કરવાની ભાવના સુખી-સંપન્ન લોકોમાં જાગે તે માટે તેઓ સતત પ્રયાસ કરે. ક્યાંક છાશકેન્દ્ર ચલાવે, તો ક્યાંક દુષ્કાળ-પીડિતો માટે રસોડાં ચલાવે, તો કેટલીક જગ્યાએ દુષ્કાળ-પીડિતો માટે પોષક આહાર પહોંચાડવા સુખડી અભિયાન ચલાવે. ઈંગ્લૅન્ડની ધરતી પર ઉચ્ચ પદવી

ધારણ કરી આવેલ આ ડૉક્ટરને આદિવાસીઓની વચ્ચે જંગલમાં ભટકતા જોઈને કોઈને પણ કલ્પના ન આવે કે આવું કોઈ સમર્પિત જીવન પણ હોઈ શકે.

સાબરકાંઠાના વિજયનગર તાલુકાના પાલ-ચિતરિયા વિસ્તારમાં આશ્રમ-શાળા અને આદિવાસીઓ માટે ખેતીવાડી શાળાનું નિર્માણ કર્યું, જે આજે પણ ત્યાંના આદિવાસી પરિવારો માટે શિક્ષણ અને સંસ્કારનું ધામ બની રહ્યાં છે.

ડૉ. વણીકરજી જ્યારે આદિવાસી વિસ્તારમાં સેવા-રત હતા ત્યારે ત્યાં ચાલતી વટાળ-પ્રવૃત્તિએ તેમને બેચેન બનાવી દીધા. ગરીબ આદિવાસીઓના ભોળપણનો લાભ લઈ ચાલની વટાળ-પ્રવૃત્તિથી તેઓ ચોંકી ગયા. સાધુ-મહાત્માઓને મળીને પોતાની પીડા તેમની વચ્ચે વહેંચતા રહ્યા. મઠાધિપતિઓને આગ્રહ કરી - કરીને આદિવાસીઓનાં ઝૂંપડાં સુધી લઈ જવા માટે અવિરત પ્રયાસ કરતા રહ્યા. વટાળ-પ્રવૃત્તિ સામે વંટોળ ઊભો કરવાનો તેમણે નિષ્ઠાપૂર્વક પ્રયાસ કર્યો. ડૉ. વણીકરજીનું વ્યક્તિત્વ અલગારી હતું. સાવ સાદું-સીધું વ્યક્તિત્વ. જેને ઓલિયા કે ફકીર કહીએ તેવું તમને ડગલે ને પગલે લાગે. મહેનત કરવામાં ઉંમર ક્યારેય આડે ન આવે. જીવનના અંત સુધી નિયમિત સૂર્યનમસ્કારનો વ્યાયામ કરવો તેમના માટે નિત્યક્રમ હતો. પરિશ્રમ કરવામાં તેઓ ક્યારેય પાછું વળીને જોતા નહીં. દર અઠવાડિયે આદિવાસી વિસ્તારોમાં સેંકડો માઈલ રઝળપાટ કરે. પોતાની એક જૂની ગાડીને પણ સમાજસેવા માટે સમર્પિત કરી દીધી. જાતે ગાડી લઈને નીકળી પડે. સતત દોડધામને કારણે થાક કે ઊંઘ જેવું લાગે તો રસ્તાને કિનારે ગાડી ઊભી કરી દે. નીચે જમીન પર કશું પણ પાથર્યા વગર સૂઈ જાય અને જોતજોતામાં ઘસઘસાટ ઊંઘી જાય. ઊંઘ ઊડે એટલે ફરી ગાડી લઈ આગળ ચાલતા થાય. આવા અનુભવો તો તેમની સાથે પ્રવાસ કરનાર દરેકને થતા.

ગુજરાતમાં *'સાધના'* સાપ્તાહિક – એક વૈચારિક મુખપત્ર પ્રગટ કરવામાં તેમનું યોગદાન ઘણું મહત્ત્વનું હતું. *'સાધના'*ના ટ્રસ્ટી તરીકે *'સાધના'*ને સક્ષમ બનાવવામાં તેમનું યોગદાન ઘણું મોટું હતું. આ *'સાધના'*એ આગળ જતાં કટોકટી સામે લોકશાહીની રક્ષા માટે રણશિંગું ફૂક્યું હતું. શ્રીમતી ઇંદિરા ગાંધીની સરકારને નાનકડું *'સાધના'* જેવું સાપ્તાહિક પડકારે એ વાત કોંગી સરકાર કેવી રીતે સાંખી લે ? *'સાધના'*ના પ્રૂફરીડર, કંપોઝિટર, એડિટર અને ટ્રસ્ટીઓ – બધાને *'મિસા'*ના કારાવાસમાં જેલ ભેગા કરી દેવામાં આવ્યા. ડૉ. વણીકર લોકશાહીની આ લડાઈમાં ન ડગ્યા તે ન જ ડગ્યા. ડૉ. વણીકરજીનું સામાજિક વર્તુળ સમાજના સુખી-સંપન્ન લોકોનું હતું. દરેક સરકારમાં તેમની પહોંચ હોય તેવા લોકો હતા. ડૉ. વણીકરજી જેવા સંતની ધરપકડથી તેઓ સહુ ડઘાઈ ગયા હતા. તેમની રીતે તેઓ વણીકરજીને જેલમાંથી છોડાવવા પ્રયત્ન કરતા હતા. ત્યારે ડૉ. વણીકરજીએ સહુ સ્વજનોને સ્પષ્ટ સંદેશો મોકલ્યો હતો કે લોકશાહીની પુનઃસ્થાપના થયા વગર, કટોકટીનો ખાત્મો બોલાવ્યા વગર મને જેલની બહાર આવવાની જરા પણ ઇચ્છા નથી, અને જ્યાં સુધી કટોકટીનો કાળો કાળ રહ્યો ત્યાં સુધી તેમણે જેલમાં રહેવાનું જ પસંદ કર્યું.



રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘનું આજે જે પ્રાંત કાર્યાલય છે 'હેડગેવાર ભવન' તેના નિર્માણ પાછળ ડૉ. વણીકરજીની દીર્ઘદૃષ્ટિ હતી. કદાચ એ જમાનામાં ડૉ. વણીકરજીનો આગ્રહ અને આયોજન ન હોત તો સંઘ પાસે આવું કાર્યાલય પણ ન હોત.

ડૉ. વણીકરજીની યાદોનો અંબાર છે. તેઓ દુખિયારાંના બેલી હતા. કરુણા તેમની સહજતા હતી. તેઓ કર્મવીર હતા. સંતો-મહંતો પાસે શ્રદ્ધાથી બેઠા હોય ત્યારે તેમનામાં સાધકનાં દર્શન થાય. વટાળ-પ્રવૃત્તિ સામેનો રોષ અનુભવીએ તો તેમનામાં સંઘર્ષવીરનાં દર્શન થાય. તેઓ જીવનના અંતકાળ સુધી સમાજ માટે ખપતા રહ્યા. અંગત જીવન લગભગ સમાજ-ચરણે ધરી દીધું હતું.

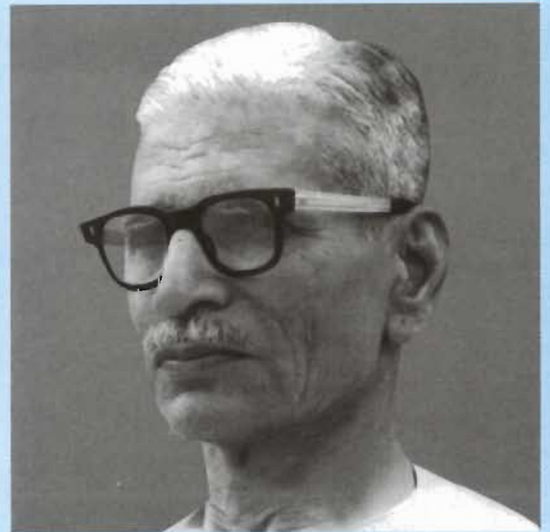
૭૩ વર્ષની ઉંમરે પણ ડેડિયાપાડાનાં જંગલોમાં આદિવાસીઓની સેવા કરીને પરત આવતા હતા ત્યારે ભરૂચ પાસેથી હાઈવે ઉપર જીપમાંથી ઊતરીને રસ્તો વટાવવા જતાં રાત્રે ૧૦-૩૦ વાગ્યે મેટાડોરની ટક્કરે તેમના પ્રાણ હરી લીધા. જીવનની અંતિમ ક્ષણો પણ આદિવાસીઓની સેવામાં લાગેલી હતી.

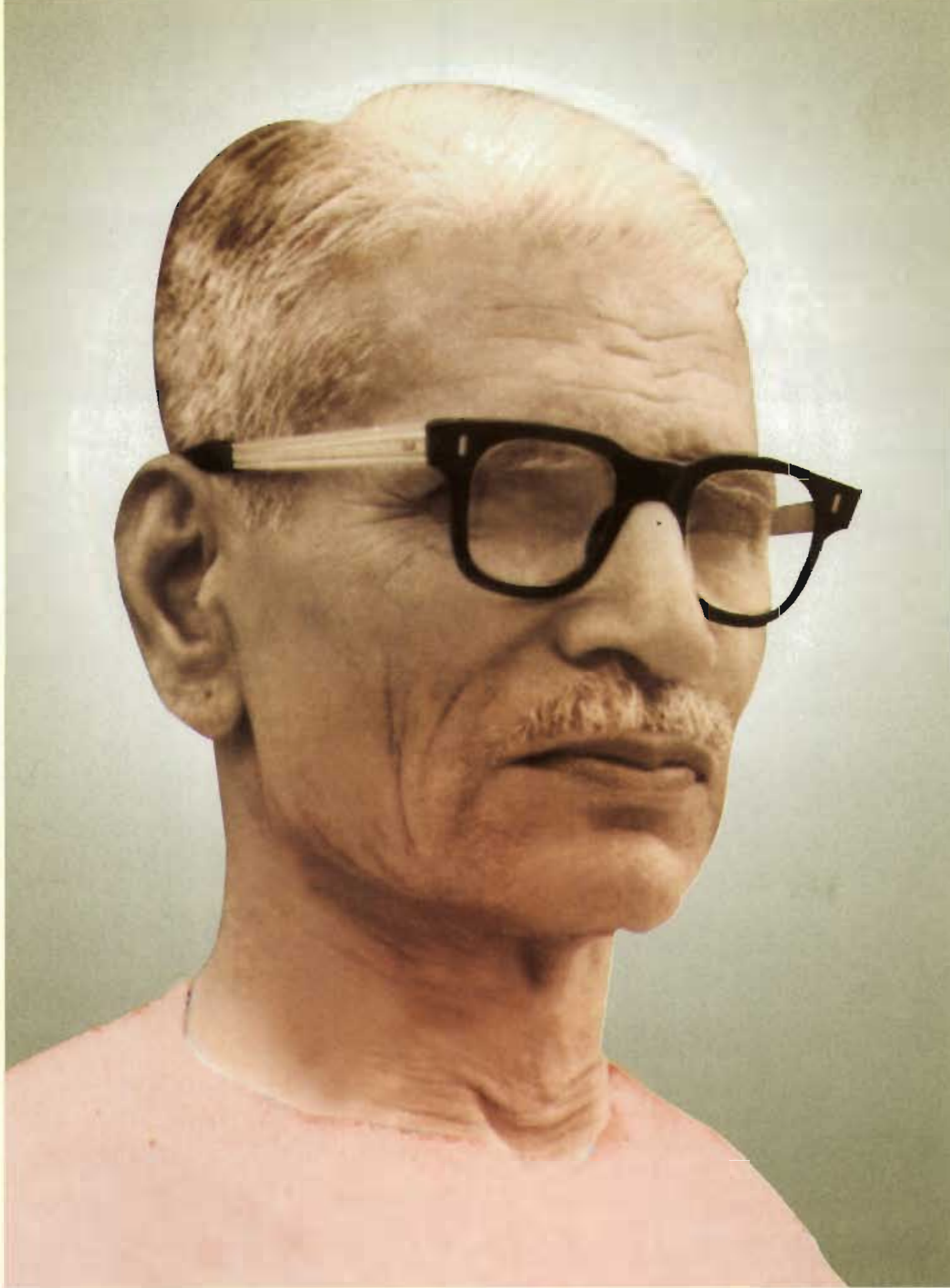
આજની પેઢીને કદાચ ડૉ. વણીકરજીનું નામ અપરિચિત લાગતું હશે, પરંતુ ગુજરાતનાં જંગલોમાં, આદિવાસીઓમાં તેમના જીવનની સુવાસ આજે પણ મહેકે છે. આ મહેક આપણા ભવિષ્યને પુલકિત કરનારી અવિરત પ્રેરણા છે. ફક્કડ જીવનના અલગારી જીવ એવા ડૉ. વણીકરજી સમાજના છેવાડાના માનવીની સેવા કરનાર માટે પ્રેરણારૂપ બની રહેશે.

ડૉ. વણીકરજી બાલ્યકાળથી આર. એસ. એસ.ના સ્વયંસેવક. પ. પૂ. ગુરુજી સહિતના અનેક મહાનુભાવો સાથે તેમના પરિવારનો અતૂટ નાતો. ગુજરાતમાં રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની પ્રવૃત્તિ સાવ સામાન્ય સ્થિતિએ હતી તે વખતે પણ વણીકરજીની પ્રતિષ્ઠાને કારણે ગુજરાતના અગ્રગણ્ય આગેવાનોને તેઓ સંઘની નિકટ લાવવામાં સફળ થતા. ગુજરાતમાં અનેક વાર રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના કોઈ ઉચ્ચ પદની જવાબદારી વણીકરજી સંભાળે તેવી ચર્ચા થાય, તેમને વિનંતી થાય, દરેક વખતે તેઓ પદ લેવાની ના કહે, એટલું જ નહીં, એક જ અઠવાડિયામાં એ પદ માટે વધુ યોગ્ય વ્યક્તિને શોધી સંઘ સાથે પરિચય કરાવી દેતા. પોતે પદ ન લે, પણ પદ માટે યોગ્ય અનેક નવા આગેવાનોને સંઘ સાથે જોડવાનો તેમનો પ્રયાસ જીવનપર્યંત ચાલ્યો.

૧૧

કર્મઠ શ્રી કાશીનાથજી





પ. પૂ. શ્રી કાશીનાથ બાગવડે

કાશીનાથજીના જીવનમાં
અદ્ભુત વ્યવસ્થાનાં
દર્શન થતાં. જીવનનો નિત્યક્રમ,
કામોની પ્રાથમિકતા, પૂર્વાયોજન,
આવશ્યક માહિતી – સઘળું તૈયાર
જ હોય. અત્યંત વ્યવસ્થિત જીવન
એ તેમની વિશેષતા હતી.

જલાકર સ્વયં કો કિયા માર્ગ ઝગમગ
હમેં પ્રેરણા કી ડગર મિલ ગઈ હૈ



ડાબેથી પહેલા શ્રી નરેન્દ્ર મોદી, મા. એકનાથજી રાનડે, શ્રી કાંતિભાઇ વ્યાસ, શ્રી કાશીનાથ બાગવડે



દરબાર ગઢ – આયના મહેલ – ભૂજ

સામાન્યમાં સામાન્ય માનવીમાં પણ ઘણુંબધું અસામાન્ય હોય છે. ક્યારેક સંજોગ તો ક્યારેક અવસર માનવીને તેની અસામાન્ય શક્તિઓનો અહેસાસ કરાવે છે અથવા તો તેનું સહજ પ્રગટીકરણ થાય છે. કેટલીક એવી વિરલ વ્યક્તિ હોય છે જે જાતે જ ટાંકણું-હથોડો લઈ મૂર્તિકારની જેમ પોતાની જાતને ઘડતી હોય છે.

આઝાદી પૂર્વે દેશ માટે કંઈક કરવાની લલક યુવાજગતમાં સહજ પ્રસરેલી હતી. સહુ કોઈને દેશ માટે કશુંક કરી છૂટવાની ખેવના હતી. જે યુવાનોના દિલમાં આઝાદીની આગ હતી અને સમય પર યોગ્ય માવજત મળી, તેઓ આંદોલનનો હિસ્સો બની ગયા.

મહારાષ્ટ્રના સતારા જિલ્લાના વાઈ નામના નાનકડા ગામમાં વિષ્ણુપંત બાગવડેનો અત્યંત સામાન્ય પરિવાર... એ પરિવારમાં જન્મેલા કાશીનાથ બાગવડેના યુવા હૃદયમાં પણ આઝાદી માટેની આગ તેમને દેશ માટે કંઈક ને કંઈક કરવાની પ્રેરણા આપતી રહેતી. દેશદાઝની આ તીવ્ર ભાવનાએ યુવાન કાશીનાથજીને રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘ તરફ વાળ્યા. પરિવારની સામાન્ય આર્થિક સ્થિતિના કારણે ભાઈઓ સાથે નડિયાદમાં ન્યૂ શોરોક મિલમાં નોકરી માટે આવવાનું થયું. ગુજરાતમાં ખેડા જિલ્લો આઝાદીના આંદોલનમાં ચેતનવંતો જિલ્લો હતો. અહીં કાશીનાથજીમાં પડેલું સંઘ-સંસ્કારનું બીજ વધુ ખીલી ઊઠે તે સ્વાભાવિક હતું. મૅટ્રિક સુધી ભણેલ કાશીનાથજીનો બાંધો એકવડો હતો. પરિવારની આર્થિક સ્થિતિ અને મહેનતકશ જિંદગી એમના દેહ ઉપર ડોકાતી હતી. તેમની કર્મકઠોર મુખમુદ્રામાં દેશભક્તિની તીવ્રતા નજરે ચઢ્યા વગર ન રહે. નડિયાદની ન્યૂ શોરોક મિલના તાણાવાણા ગૂંથવામાં જિંદગી ડહોળાઈ જાય એવું એ યૌવન નહોતું. યુવાન કાશીનાથને કાપડના તાણાવાણા ગૂંથવાનો ઉમંગ હતો. ભણતર સામાન્ય હતું પણ ઘડતર પાકું હતું. મજબૂતમાં મજબૂત કાપડના તાણાવાણા પણ તેમને બંધનોમાં બાંધી ન શક્યા. વ્યક્તિગત જીવનમાં કશુંક કરવું, વાઈ જેવા ગામડામાંથી નડિયાદ જેવા નગરની જિંદગી માણવી, પોતાના માટે કંઈક કરવું જેવી બાબતો તેમને સ્પર્શતી જ નહોતી. યુવાન કાશીનાથજીને પરિવારજનોએ વાઈથી વિદાય આપી ત્યારે કેટકેટલાં સપનાં સેવ્યાં હશે : દીકરો ઘર માટે મદદરૂપ થશે ! પરિવાર બે પાંદડે થશે ! ...યુવાન કાશીનાથ કુટુંબની સ્થિતિ, કુટુંબની આવશ્યકતા, કુટુંબની અપેક્ષા – બધાથી બરાબર પરિચિત હતા. પરંતુ યુવાન કાશીનાથના હૈયામાં વવાયેલું સંઘ-બીજ અને આઝાદીની લલક તેમને ચેનથી બેસવા નહોતાં દેતાં. ગરીબીની બેડીઓમાં જકડાયેલ ઘર અને ગુલામીની બેડીઓમાં તડપતો દેશ યુવાન કાશીનાથને કશુંક કરવા માટે પોકારતાં હતાં. પરિવારના અને સંઘના સંસ્કારો આખરે વિજયી થયા. માનસિક ઘમસાણ વચ્ચે ૧૯૪૫માં ભરયુવાનીમાં કાશીનાથે દેશહિત ખાતર સર્વસ્વ ન્યોછાવર કરવાનો સંકલ્પ કરી લીધો. ઘર છોડ્યું, નોકરી છોડી, કુટુંબીજનો છોડ્યાં અને ગુલામીમાંથી મુક્તિ માટે હિન્દુ સમાજને સંગઠિત કરવાના સ્વપ્ન સાથે સંઘકાર્યમાં પ્રચારક તરીકે સમર્પિત થઈ ગયા.



પ્રારંભિક દિવસોમાં ખેડા જિલ્લામાં સંઘકાર્યમાં પ્રવૃત્ત રહ્યા. એ દિવસોમાં ગુજરાતી ભાષા શીખવા માટે જિજ્ઞાસુ-ભાવથી સતત પ્રયાસ કરતા રહ્યા. ખૂબ જ ઓછા સમયમાં ભાષાથી તેઓ ગુજરાતી બની ગયા. સંઘકાર્યને અનુકૂળ જીવન-વિકાસ માટેના જાગૃત પ્રયાસ અનેક સાથીઓ ઉપર અનેરો પ્રભાવ પાડતા હતા. વિશાળ ગુણસંપદા, સાદગી અને મહેનતને કારણે શિક્ષણની ડિગ્રીનો અભાવ તેમના માટે ક્યારેય અવરોધક ન બની શક્યો. પ્રચારક-જીવનની શરૂઆતમાં જ કાશીનાથજીએ ખેડા જિલ્લામાં ઠીકઠીક પકડ જમાવી લીધી હતી. સંગઠન-કાર્યની હથોટી આવી ગઈ હતી.

ઘણાં વર્ષો સુધી ગુજરાતમાં – તેમાંય ખાસ કરીને કોઈને કચ્છમાં જવાનું હોય તો તેને સજાપાત્ર ગણાતું. જ્યારે યુવાન કાશીનાથજીની કર્મઠતાને કારણે ખેડા જિલ્લાના હર્યાભર્યા વાતાવરણમાંથી સીધી વેરાન કચ્છની જવાબદારી સોંપાઈ. આઝાદી પહેલાં કચ્છ જવા માટે સમુદ્રમાર્ગનો પણ ઉપયોગ કરવો પડતો. યુવાન કાશીનાથે કચ્છમાં ધામા નાખ્યા. આવાગમનનાં ટાંચાં સાધનો વચ્ચે પણ તેઓ જોતજોતામાં કચ્છ ખૂંદી વળ્યા. કચ્છની વિશેષતાઓ, કચ્છની લાગણી, કચ્છની આંતરિક શક્તિઓના પ્રવાહને તેઓ બરાબર પામી ગયા. આજેય કચ્છની પ્રથમ પેઢીના સ્વયંસેવકો કાશીનાથજીની પદયાત્રા, સાઈકલયાત્રા અને ભોજન ન મળે તોપણ શરીરને પારાવાર કષ્ટ આપીને કાર્ય કરવાની વાતો કહેતાં થાકતા નથી. એ જમાનામાં તેમણે



ઉઠાવેલાં કષ્ટો અને પરિશ્રમની પરાકાષ્ઠાની વાતો આજની પેઢીને દંતકથા લાગે એવી જહેમત તેમણે ઉઠાવી હતી.

ગુજરાતમાં આર. એસ. એસ.ની વિચારયાત્રા અને વિકાસયાત્રામાં બે મહત્ત્વપૂર્ણ ઘટનાઓ તરફ ધ્યાન જાય છે. આ બંને ઘટનાઓમાં શ્રી કાશીનાથજી પણ એક નિમિત્ત હતા, તેથી એ બે ઘટનાઓની નોંધ લેવાનું સ્વાભાવિક છે.

સંઘમાં દેશભક્તિ, સમાજભક્તિના પાઠ ભણાવાતાં સતત કહેવાય છે કે એક કલાક શાખા અને ૨૩ કલાક દેશ અને સમાજ. આ વાત વ્યવહારની કસોટીએ સમાજની નજરે ચઢે એવી એક ઘટના બની. ૧૯૫૬માં કચ્છના અંજારમાં ભૂકંપ આવ્યો. એ જમાનામાં એ મોટી હોનારત હતી. પ્રધાનમંત્રી પંડિત નહેરુ જાતે કચ્છ દોડી આવ્યા હતા. અંજારના ભૂકંપ સમયે કાશીનાથજીના પ્રયાસોથી સંઘકાર્ય પાપા-પગલી કરતું થયું હતું. કચ્છમાં કે સમગ્ર ગુજરાતમાં સંઘની શક્તિ આટલા ભયાનક ભૂકંપમાં અસરગ્રસ્તોની પૂરેપૂરી સારસંભાળ લઈ શકે તેટલી નહોતી. સંગઠનની શક્તિ સામાન્ય હતી, પરંતુ સંકલ્પશક્તિ અસામાન્ય હતી.

અંજારના ભૂકંપના સમાચાર મળતાં જ કાશીનાથજીએ અસરગ્રસ્તોની સેવાનો યજ્ઞ આરંભી દીધો. શરૂઆતમાં જિલ્લાભરમાંથી અને પછી રાજ્યભરમાંથી જેટલી પણ મદદ પહોંચાડી શકાય તે પહોંચાડી. અંજારના ભૂકંપ પછી અંધાધૂંધીનું વાતાવરણ હતું. મદદ આપનાર અને જરૂરિયાતવાળા વચ્ચેનો સેતુ જ નહોતો રચાતો. કૉંગ્રેસના એક મોટા વર્ગ માટે અંજારનો ભૂકંપ ફોટો પડાવવાનો અને કેન્દ્રીય નેતાઓ સુધી પહોંચવા માટેનો અવસર બની ગયો હતો. આવા સમયે કાશીનાથજીએ માનવસેવાના આ કાર્યને ઈશ્વરનો પ્રસાદ માની સ્વીકારી લીધું. કચ્છના દૂરદૂરના વિસ્તારોમાંથી કાર્યકરોએ પોતાની સાથે ત્રણત્રણ-ચારચાર દિવસનું ભાથું, ઓઢવા-પાથરવાનો જરૂરી સામાન અને મદદરૂપ થાય એવાં નાનાંમોટાં ઓજાર-સાધનો લઈને અંજારની ધરતી પર પડાવ નાંખ્યો. સમાજ પાસેથી કોઈ પણ વ્યવસ્થા લીધા વગર શરીરશ્રમ કરીને દુખિયારાંઓની જેટલી સેવા થઈ શકે તે કરી. સરકારી તંત્રને પણ અસરગ્રસ્તોની સાચી માહિતી માટે કાશીનાથજી અને તેમની સ્વયંસેવકોની ટીમ ઉપર ભરોસો રાખવો પડતો.

માનવસહજ વૃત્તિ પ્રમાણે ફોટા પડાવવા પહોંચી જતા નેતાઓ ખાખી-ચડ્ડી-ધારી સ્વયંસેવકોને કામ કરતા જોઈ મોં બગાડતા, કચવાટ અનુભવતા, પરંતુ છેલ્લે ફોટામાંથી નવરા પડ્યા પછી તેમને પણ કોઈ માહિતી જોઈતી હોય, સુવિધા જોઈતી હોય, તો સંઘના સ્વયંસેવકો પાસે જ આવવું પડતું. સંકલ્પશક્તિના બળે, સમાજ પ્રત્યેના સમર્પણભાવને કારણે, ટાંચાં સાધનો હોવા છતાંય, પ્રમાણમાં તદ્દન યુવાન કહી શકાય એવા સ્વયંસેવકો દ્વારા કરાયેલા આ સેવાયજ્ઞ માટે કાશીનાથજીને યાદ કરવા જ રહ્યા. સંઘની વિકાસયાત્રામાં સેવાનો આ યજ્ઞ એક અદકેરી ઘટના હતો. ભારતવિભાજનને કારણે સિંધ છોડીને અંજાર વસેલા પરિવારો ઉપર આ બીજી આફત હતી ત્યારે સંઘની હૂંફ એમના માટે નવી આશા બની હતી.

ચીન સાથેના યુદ્ધ પછી કાશીનાથજી મહેસાણા જિલ્લાનું કાર્ય સંભાળવા લાગ્યા. તેમના પરિશ્રમનું પરિણામ એટલું વ્યાપક હતું કે સંઘકાર્યનો વિસ્તાર મહેસાણા જિલ્લામાં ખૂબ જ ઝડપથી થવા લાગ્યો. સંઘના વ્યાપનો વિચાર કરીએ તો ગુજરાતના બધા જ જિલ્લાઓમાં મહેસાણા હંમેશાં પ્રથમ ક્રમે જ હોય અને તેના મૂળમાં કાશીનાથજીના પરિશ્રમની સુવાસ અનુભવાય જ. કાશીનાથજીનું શારીરિક રીતે કદ બહુ નાનું હતું. એ જમાનામાં આવતી સાઈકલ ઉપર બેસી પગ ન પહોંચે તોપણ કાશીનાથજી ઊભા પગે સાઈકલ ચલાવે, શારીરિક શ્રમ બેવડાઈ જાય, તેમ છતાંય ગામડાંઓ ખૂંદવા માટે કાચા-પાકા રસ્તા ઉપર સાઈકલ દોડાવતા જોવા મળે.

કાશીનાથજીના જીવનમાં અદ્ભુત વ્યવસ્થાનાં દર્શન થતાં. જીવનનો નિત્યક્રમ, કામોની પ્રાથમિકતા, પૂર્વાયોજન, આવશ્યક માહિતી – સઘળું તૈયાર જ હોય. અત્યંત વ્યવસ્થિત જીવન એ તેમની વિશેષતા હતી. જેમ ઈશ્વર પ્રત્યે શ્રદ્ધા રાખનાર વ્યક્તિ સવારે પ્રભુદર્શન કરે, પૂજન-અર્ચન કરે અને તેમાં ક્યારેય ખંડ ન પડવા દે, તેમ કાશીનાથજી સવારે ચાર-સાડાચાર વાગ્યે તૈયાર થઈ, પચાસ જેટલાં પોસ્ટકાર્ડ લઈ બેસી જાય. સૂર્યોદય થતાં પૂર્વે ગામેગામ પોસ્ટકાર્ડ દ્વારા પહોંચવાનો પ્રયાસ કરે. દરેક પત્ર અલગ હોય, સૂચના એક જ હોય, પણ કાર્યકર્તાના સ્તર પ્રમાણે તેની રજૂઆત કરી હોય. પત્રમાં માત્ર સ્વયંસેવક નહીં, તેના કુટુંબની દરેક વ્યક્તિને પોતીકાપણું લાગે તેવી લાગણીની છાંટ હોય. રોજ સવારે સ્વહસ્તે આટલા બધા પત્રો લખતા હોય, છતાં ક્યારેય અક્ષરોમાં મરોડ ન બદલાય, અક્ષરોમાં પણ થાક ન વરતાય. ભાષા-શુદ્ધિનો આગ્રહ હોય. ઘણી વાર એમ લાગે કે સાતત્યપૂર્ણ રીતે ત્રીસ વર્ષ સુધી અખંડ રીતે કોઈ વ્યક્તિએ જાતે લાખો પોસ્ટકાર્ડ લખી સંગઠનની ગૂંથણી કરી હોય તેવી ઘટના આજના યુગમાં 'રેકૉર્ડ બ્રેક' કરનારી લેખાય.

બીજી એક મહત્ત્વની ઘટનામાં કાશીનાથજીને એક કાર્યકર્તા તરીકે, એક સંગઠક તરીકે, એક આયોજક તરીકે નિકટથી જોવાનો અવસર મળ્યો. ૧૯૬૪માં વિશ્વ હિન્દુ પરિષદની સ્થાપના પછી ગુજરાતમાં કાર્યનો પ્રારંભ થયો. ગુજરાતની ધાર્મિક પ્રકૃતિના કારણે કાર્યને ઝડપથી આવકાર મળ્યો. ગુજરાતમાં વિશ્વ હિન્દુ પરિષદનું પ્રથમ રાજ્ય-કક્ષાનું સંમેલન સિદ્ધપુરમાં થયું. રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના પ. પૂ. ગુરુજી, પૂ. શંકરાચાર્ય, દેશના ગણમાન્ય સંતો, મહંતો, આચાર્યોનો આટલો વિરાટ મેળાવડો ગુજરાતની ધરતી પર પહેલી વાર થયો હતો. હજારો સંતો, મહંતો, મંડલેશ્વરો અને લાખો નાગરિકોનો આ અદ્ભુત સંગમ હતો. ૧૯૭૧-૭૨માં યોજાયેલ આ સંમેલનની સંપૂર્ણ વ્યવસ્થાની ચિંતા કાશીનાથજી સંભાળતા હતા. આ સંમેલન સામાન્ય કક્ષાનું નહોતું. દરેક સંત એક સ્વતંત્ર સંસ્થારૂપ હોય છે. દરેકના જુદા-જુદા યમ-નિયમ હોય, આચાર-વિચારના આગ્રહ હોય, પોતપોતાની આગવી પરંપરાઓ અને મહિમા હોય; અને આ સઘળું સાચવવું અને તે પણ સન્માનપૂર્વક સાચવવું, સમયસર સાચવવું. બીજી બાજુ ભક્તિભાવથી ભરેલાં લાખો ભક્તજનોની વ્યવસ્થાનાં બધાં જ કામો એમણે જે સુચારુ ઢંગથી, સ્વસ્થતાથી પાર પાડ્યાં તે એક મોટી સિદ્ધિ હતી. માત્ર ને માત્ર જનશક્તિ અને સંગઠનની શક્તિ દ્વારા આવું આયોજન આયોજકના અદ્ભુત કૌશલ્ય વગર સંભવી જ ન શકે. કાશીનાથજીએ ખૂબ ઉમદા રીતે આ કાર્ય કરી નવાં સીમાચિહ્નો પ્રસ્થાપિત કર્યાં.

ચાર દાયકા કરતાં પણ વધુ સમય અવિરત ભ્રમણ, કષ્ટમય જીવન, કર્મઠ જીવનની હોડ, સંઘજીવન નિયમિત, પરંતુ વ્યક્તિગત જીવનમાં ભારોભાર અનિયમિતતા, સ્વ પ્રત્યેની ઉદાસીનતા અને ઉપેક્ષા... આ બધાને પરિણામે જીવનનો આખરી તબક્કો અનેક વ્યાધિઓનો બન્યો. શ્રવણશક્તિ લગભગ ગુમાવી દીધી. હૃદયરોગ પણ તકલીફ કરી ગયો. આવા સમયે કાશીનાથજીની તબિયતની કોઈ પૃચ્છા કરે તો તેમને જરાયે ન ગમે. કાશીનાથજીને શારીરિક તકલીફની પીડા કરતાં પોતાનું શરીર હવે રાષ્ટ્રકાર્ય માટે ખાસ કંઈ કરી શકતું નથી તેની પીડા વધુ હતી.

તેમનો જીવનદીપ બુઝાયો, પરંતુ તેમણે જીવનભર અનેક દીપ પ્રગટાવ્યા. દરેક દીપ ક્યાંક ને ક્યાંક અંધારાં ઉલેચવા મથામણ કરતો રહે એ જ તેમને સાચી અંજલિ છે.





પ. પૂ. ડૉ. હેડગેવારની દૃષ્ટિએ રાષ્ટ્રીય સ્વરૂપ



આપણા રાષ્ટ્રીય સ્વરૂપના નિશ્ચિત અને સ્પષ્ટ
સાક્ષાત્કારની અનુભૂતિ થતાં જ એમણે રાષ્ટ્રની અવનતિ,
હ્રાસ અને પરાજયનું વિશ્લેષણ
સત્ય માર્ગદર્શક ઇતિહાસની સાખે કર્યું :
'આપણા સમાજની વ્યક્તિઓમાં સામાજિક ભાવનાનો અભાવ,
માતૃભૂમિ, ધર્મ, સંસ્કૃતિ વગેરેનું
કેવળ સિદ્ધાંતવાદી અને ઔપચારિક
સ્મરણ અને પાલન પૂરતું નથી,
પરંતુ સમસ્ત વિદેશી હુમલાઓથી
એના રક્ષણ માટે જીવ હથેળીમાં લઈને
ખેલવાની તૈયારી રાખવી પડે છે,
એ વિષયનું અજ્ઞાન,
સામાજિક અને રાષ્ટ્રીય કર્તવ્યો પ્રત્યે ઉદાસીનતા,
પરસ્પર સહાય કરવાની નિત્ય તત્પરતા ન હોવી,
ક્ષુદ્ર સ્વાર્થપરાયણતા જેવા અનેક અવગુણો
વ્યાપ્ત હોવાને કારણે સમાજ અસંગઠિત,
ખોખલો અને દુર્બળ બની ગયો છે.
આ શક્તિહીનતાને કારણે જ એણે પરાજય,
પરતંત્રતા તેમજ બધાં ક્ષેત્રોમાં નિકૃષ્ટ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી છે.'
આ સત્ય એમણે હૃદયંગમ કરી સંપૂર્ણ સમાજ સમક્ષ મૂક્યું.
એમણે એ પણ તારણ કાઢ્યું
અને દેશને બતાવ્યું કે આવી ખરાબ સ્થિતિમાંથી
બહાર નીકળવાનો એક જ ઉપાય છે કે
'વ્યક્તિ વ્યક્તિ પર સામાજિક તેમજ રાષ્ટ્રીયજીવનના
સદ્સંસ્કાર કરી એને એકસૂત્રમાં બાંધીને
અનુશાસિત શક્તિના અંગ રૂપે સિદ્ધ કરવામાં આવે
તથા આ પ્રકારની તમામ વ્યક્તિઓના સ્નેહમય વ્યવહાર,
એકાત્મતા તથા રાષ્ટ્રની સમષ્ટિમાં
પોતાના વ્યક્તિત્વને વિલીન કરવાના ગુણને આધારે
એક અખિલ દેશવ્યાપી અનુશાસિત તેમજ
સંગઠિતશક્તિ નિર્માણ કરવામાં આવે.'



- પ. પૂ. મા. સ. ગોળવલકર (શ્રી ગુરુજી)

૧૨

ગણતર અને ઘડતરની જીવનનૌકા એટલે શ્રી નાથાભાઈ ઝગડા





મા. શ્રી નાથાભાઈ ઝગડા



નાથાભાઈના અવાજમાં રૌદ્રતા હતી, પરંતુ ઋજુ, સંવેદનાસભર પરગજુ વ્યક્તિત્વ હતું. નાથાભાઈનું જીવન ભણતર નહોતું પામ્યું, પરંતુ ગણતરમાં પારંગતતા મેળવી હતી. નાથાભાઈનું જીવન ગણતર અને ઘડતરનું બેમિસાલ મિલન હતું.

મત દેખો કિતની દૂરી હૈ કિતના લંબા માર્ગ હૈ,
ઔર ન સોચો સાથ હમારે આજ કહાં તક જગ હૈ.







શ્રી જગન્નાથજી રથ યાત્રા – કર્ણાવતી

જીવનભર સંઘર્ષ કરનાર નાથાભાઈ છેલ્લા કેટલાય સમયથી મૃત્યુ સામે સંઘર્ષ-રત રહ્યા. શરીર સાથ નહોતું આપતું છતાંય મૃત્યુને હાથતાળી આપવામાં એ અનેક વાર સફળ રહ્યા.

ગુજરાતમાં ઠેરઠેર જાહેરસભાઓ ગજવતા નાથાભાઈને જોઈને કોઈનેય અંદાજ ન આવે કે જિંદગીમાં કેવા સંઘર્ષ કરીને તેઓએ કદ કાઢ્યું છે.

જનસંઘના વિસ્તારનો મૂળ મંત્ર હતો : કાર્યકરનો એક પગ રેલમાં અને બીજો પગ જેલમાં. એક પગ રેલમાં મતલબ અવિરત ભ્રમણ કરવું અને જેલમાં મતલબ પ્રજાહિત માટે નિરંતર સંઘર્ષ કરવો. નાથાભાઈ આ મૂળ મંત્રને લઈ ગુજરાતમાં જનસંઘનો દીવો ઝળહળતો રાખતા રહ્યા.

બાળપણથી જ ગરીબીમાં ઉછેર. ભણવાનું તો ક્યાંથી નસીબમાં હોય ! માંડ બેચાર ચોપડી શાળાએ જવાનું થયું. ગરીબીમાં જીવતા પરિવારને આર્થિક રીતે મદદરૂપ થવા, રમવા-ખેલવા-કૂદવાની ઉંમરે જ પેટિયું રળવાનો નાનકડો પ્રયાસ હાથ ધર્યો. હજુ તો માંડ ૧૦-૧૨ વર્ષની ઉંમર થઈ હશે. કર્ણાવતીના ઘીકાંટા વિસ્તારના પ્રકાશ સિનેમામાં હાથમાં થાળી લઈને ચૉકલેટ, બિસ્કિટ અને પીપરમીંટ વેચીને પરિવારમાં મદદરૂપ થવાનો પ્રયાસ શરૂ કર્યો. પાંચ-સાત વર્ષનું જીવનનું હસતું-ખેલતું બાળપણ હોમી દીધું. જુવાનીમાં પગભર થવાના ઇરાદાથી પરિવારનો પરંપરાગત સોનીકામનો ધંધો શીખવાનું શરૂ કર્યું. એ જ દિવસોમાં કાલુપુરમાં રા. સ્વ. સંઘના સંપર્કમાં આવ્યા. સોનું ઘડવાના કારીગર બનવાની અને સ્વયંસેવક બનવાની પ્રક્રિયા એકસાથે જ શરૂ થઈ.

સ્વ. રાજપાલપુરીજી, સ્વ. મધુકરરાવજી ભાગવત, સ્વ. લક્ષ્મણરાવ ઇનામદાર(વકીલસાહેબ)ને નિકટથી જોવાનું તેમને સૌભાગ્ય મળ્યું. વકીલસાહેબના કહેવાથી સોનીકામ શીખતાં-શીખતાં માણેકચોકના સંઘ-કાર્યાલયમાં રહેવા લાગ્યા. પરિવાર-સંપર્ક અને આગતા-સ્વાગતા એ નાથાભાઈના અદ્‌ભુત ગુણો હતા. સંઘકાર્યની અનેક નાનીમોટી જવાબદારીઓ એમના ઉપર આવવા લાગી. જેમ-જેમ જવાબદારી વધતી ગઈ તેમ-તેમ નાથાભાઈએ સ્વ-વિકાસ તરફ પણ ધ્યાન કેન્દ્રિત કર્યું.

૧૯૬૧-૬૨ના ગાળામાં નાથાભાઈએ પ્રચારક-જીવનની શરૂઆત કરી. સોનું ઘડવાનું છોડી જીવનઘડતરના કામમાં જીવન લગાવ્યું. એ દિવસોમાં જનસંઘનું કામ ધીરેધીરે ડગ માંડી રહ્યું હતું. નાથાભાઈના પ્રચારક-જીવનની શરૂઆત જનસંઘના સંગઠન-મંત્રીથી થઈ. વસંતભાઈ–નાથાભાઈની જોડી જનસંઘના વિકાસ અને વિસ્તાર માટે દોડતી રહી. વસંતભાઈની બુદ્ધિપ્રતિભા અને નાથાભાઈની કોઠાસૂઝની જોડીએ જનસંઘનો પાયો મજબૂત કર્યો.

નાથાભાઈના જીવનમાં અનેક ઉતાર-ચઢાવ આવ્યા. એક અર્થમાં કહીએ તો નાથાભાઈને ખરેખર સંતોષકારક કામ કરવા માટે માંડ દોઢ દાયકાનો સમય મળ્યો. પરંતુ દોઢ દાયકામાં નાથાભાઈએ ગજબનું કાઠું કાઢ્યું.

સ્વ-વિકાસ :

નાથાભાઈ શાળાએ જઈને ભણ્યા નહોતા, પરંતુ પોતાની આગવી શક્તિથી વિકાસ સાધ્યો હતો. સિત્તેરના દાયકામાં નાથાભાઈ ગુજરાતના ટોચના વક્તાઓ પૈકીના એક હતા. તેમની જાહેરસભાઓ મેળવવા માટે કાર્યકરો પડાપડી કરતા. લોકો પણ નાથાભાઈની પ્રભાવી વાક્છટા, તર્કબદ્ધ રજૂઆત, ગામઠી તળપદી વાર્તાઓ, વાતમાં વ્યક્ત થતી નિર્ભીકતાથી સૌને આકર્ષતા હતા. નાથાભાઈ જાહેરસભાઓ ગજવતા, એટલું જ નહીં, બુદ્ધિજીવીઓના મંચ હોય, લાયન્સ કે રોટરી ક્લબ જેવા સંગઠનમાં બોલવાનું હોય, તો જનસંઘની નીતિવિષયક વાતો, રાષ્ટ્ર સમક્ષના પ્રશ્નો અંગેનું ગંભીર ચિંતન વ્યક્ત કરવામાં તેમની પ્રખરતા સર્વમાન્ય હતી. તેઓ બહુશ્રુત હતા. અભ્યાસ કરવાની આદત પણ તેમણે કેળવી હતી.

અંગ્રેજીનું ભણતર તો એમના નસીબમાં ક્યાંથી હોય ? પરંતુ નાથાભાઈની સ્વ-વિકાસની ઇચ્છા એટલી પ્રબળ હતી કે કટોકટી વખતે સંઘ-કાર્યાલય – હેડગેવાર ભવન સરકારે જપ્ત કર્યું, સામાનની યાદી બનાવી, ત્યારે નાથાભાઈના કબાટમાંથી અંગ્રેજી પાઠમાળા અને 'ઝડપી અંગ્રેજી બોલતાં શીખો' જેવાં પુસ્તકો નીકળ્યાં હતાં.

વર્ષો પહેલાં એક વાર – ઘણું કરીને ૧૯૬૯ના કોમી હુલ્લડો વખતે – શ્રી ઉદયન ચીનુભાઈને ઘરે શ્રી નાથાભાઈ સાથે મળવા જવાનું થયું. શ્રી ઉદયનભાઈનાં પત્ની સ્વ. મોનાબહેન નાથાભાઈ સાથે અંગ્રેજીમાં જ વાતચીત કરે. પ્રશ્નો પણ અંગ્રેજીમાં જ પૂછે. એ વખતે મેં આશ્ચર્ય વચ્ચે જોયું કે

નાથાભાઈએ અંગ્રેજીમાં પુછાયેલ દરેક પ્રશ્નનો તદ્દન સાચો જવાબ ગુજરાતીમાં આપ્યો હતો. આ સિદ્ધિ નાનીસૂની નહોતી. નાથાભાઈ હંમેશાં 'Organiser' વાંચવાનો પ્રયાસ કરતા.

રાજકીય પક્ષ તરીકે જનસંઘ ગુજરાતમાં નવોસવો પ્રયાસ હતો. પક્ષના નામથી ઓળખાણ કરાવવાના એ દિવસો હતા. વસંતભાઈ ગજેન્દ્રગડકર અને નાથાભાઈની જોડી જનસંઘનો વ્યાપ વધારવા અથાક પ્રયાસ કરતી. સ્વતંત્ર પક્ષના ભાઈકાકા જનસંઘના નેતાઓની મજાક કરતાં કહેતા : દીવાલો પર દીવા ચીતરવાથી ચૂંટણીઓ ન જિતાય. એ વખતે જનસંઘનું પ્રતીક દીવો હતું.

જનસંઘના વિસ્તારનો મૂળ મંત્ર હતો : કાર્યકરનો એક પગ રેલમાં અને બીજો પગ જેલમાં. એક પગ રેલમાં મતલબ અવિરત ભ્રમણ કરવું અને જેલમાં મતલબ પ્રજાહિત માટે નિરંતર સંઘર્ષ કરવો. નાથાભાઈ આ મૂળ મંત્રને લઈ ગુજરાતમાં જનસંઘનો દીવો ઝળહળતો રાખતા રહ્યા.

ભારતીય જનતા પાર્ટીની આજની જાહોજલાલી જોઈ ભાગ્યે જ કોઈ અનુમાન કરી શકશે કે જનસંઘના જમાનાની પ્રથમ પેઢીએ કેવી તપશ્ચર્યા કરીને આ વિરાટ વટવૃક્ષનું સંવર્ધન કર્યું છે.

જનસંઘના પ્રારંભિક દિવસોમાં નાથાભાઈ અનેક રોલ ભજવતા. અમદાવાદ શહેરના કોઈ વિસ્તારમાં જનસંઘની જાહેરસભા હોય તો પાંચ-પંદર સાથીઓને લઈ અઠવાડિયાં સુધી રાત્રે દીવાલો ઉપર જાતે સૂચના અને સૂત્રો લખવા નીકળી પડે. જે દિવસે સભા હોય તે દિવસે જાતે નાનકડું માઈક લઈ સાઈકલ પર, તો ક્યારેક ત્રણ પૈડાંવાળી પૅડલ રિક્ષામાં બેસી શહેરની પોળોમાં, ગલી-મહોલ્લામાં જઈ સભાની જાહેરાત કરે. સભાની સાંજે જાતે માઈક બાંધે અને નજીકના ઘરે જઈ વ્યવસ્થિત કપડાં બદલીને આવી મંચ પર બેસી ભાષણ કરે. બધાં જ કામ જાતે કરવાં પડે. ભાષણની ઓજસ્વિતા જોઈ કોઈ ભાગ્યે જ વિચારી શકે કે આવું પ્રભાવી વ્યક્તિત્વ દીવાલો ચીતરે, રિક્ષામાં માઈક લઈ પ્રચાર-ફેરી કરે, જાતે સાંજે માઈકનાં ભૂંગળાં બાંધે અને રાત્રે અપટુડેટ કપડાં પહેરી ખુદ જ નેતા બની પ્રભાવી ભાષણ કરે. હા...નાથાભાઈએ આવા બધા જ રોલ એકસાથે નિભાવી જનસંઘનો પાયો મજબૂત કર્યો હતો.

કૉંગ્રેસનું સમગ્ર દેશમાં એકચક્રી શાસન હતું, પરંતુ કૉંગ્રેસ સ્વભાવે અંગ્રેજોની જેમ સત્તામાં શંકા-કુશંકાઓના ભાર વચ્ચે જ જીવતી. કૉંગ્રેસે અંગ્રેજોનો આ વારસો પૂરેપૂરો જાળવી રાખ્યો. પરિણામે કૉંગ્રેસ સાથે ન હોય તેવી બધી જ પ્રવૃત્તિની તરફ શંકાની નજરે જોવું, જાસૂસીતંત્ર પૂરેપૂરું અંગ્રેજોની જેમ જ વિરોધીઓ પાછળ લગાડી દેવું એ વારસો બરાબર જાળવ્યો હતો. જનસંઘના બધા મુખ્ય નેતાઓ


અડાલજ વાવ

કૉંગ્રેસ સરકારની જાસૂસીતંત્રની છાયામાં રહેતા. જાસૂસીતંત્ર માટે નાથાભાઈ માથાનો દુખાવો હતા. નાથાભાઈ અમદાવાદમાં જનસંઘના કામ માટે સાઈકલ ઉપર એક ખૂણેથી બીજે ખૂણે સતત દોડતા હોય. રોજ ૬૦થી ૭૦ કિ.મી. સાઈકલ પર દોડતા રહેવું એ નાથાભાઈ માટે ડાબા હાથનો ખેલ હતો. જાસૂસીતંત્રમાંથી આવેલ પોલીસના કર્મચારી માટે નાથાભાઈનો પીછો કરવો હોય તો મોઢે ફીણ આવી જાય. પોલીસતંત્રમાં કામ કરતા સહુ નાથાભાઈની જાસૂસીના કામથી ફફડતા. સમગ્ર તંત્રમાં જાસૂસીનું એ કામ સજાપાત્ર કામ ગણાતું. નાથાભાઈના પરિશ્રમની પરાકાષ્ઠાનો આ જીવતોજાગતો નમૂનો છે.

સિત્તેરના દાયકામાં સુવર્ણધારાને કારણે કૉંગ્રેસ સરકાર સામે દેશભરમાં સુવર્ણકારોએ આંદોલન ચલાવ્યું હતું. ત્યારે નાથાભાઈએ ગુજરાતમાં સુવર્ણકારોના આંદોલનને અભૂતપૂર્વ બળ પૂરું પાડીને લોકશક્તિનાં દર્શન કરાવ્યાં હતાં.

કટોકટી સામેની લડાઈ નોખી હતી. લોકતંત્રની પુનઃસ્થાપના માટે આપખુદ, દમનખોર સરકાર સામે લડવાનું હતું. નાથાભાઈનું સંગઠન-કૌશલ્ય અને ગુજરાતને ગામડે-ગામડે પથરાયેલાં હજારો કુટુંબો સાથેનો જીવંત સંપર્ક સમગ્ર લડતમાં ખૂબ જ લેખે લાગ્યાં.

૧૯૬૧-૬૨ના ગાળામાં નાથાભાઈએ પ્રચારક-જીવનની શરૂઆત કરી. સોનું ઘડવાનું છોડી જીવનઘડતરના કામમાં જીવન લગાવ્યું. એ દિવસોમાં જનસંઘનું કામ ધીરેધીરે ડગ માંડી રહ્યું હતું. નાથાભાઈના પ્રચારક-જીવનની શરૂઆત જનસંઘના સંગઠન-મંત્રીથી થઈ. વસંતભાઈ–નાથાભાઈની જોડી જનસંઘના વિકાસ અને વિસ્તાર માટે દોડતી રહી. વસંતભાઈની બુદ્ધિપ્રતિભા અને નાથાભાઈની કોઠાસૂઝની જોડીએ જનસંઘનો પાયો મજબૂત કર્યો.

રાજકીય મંચ ઉપર તરવરિયા લાગતા નાથાભાઈ સ્વભાવે પરગજુ હતા. ગુજરાતભરમાંથી કાર્યકરો અમદાવાદમાં હૉસ્પિટલમાં કે સારા ડૉક્ટરને ત્યાં સારવાર લેવા આવે, તો તેમની પૂરતી કાળજી લેવા તેઓ ખૂબ પ્રયાસ કરતા. ઘણી વાર તો દિવસો સુધી તેઓ એ કામમાં ખૂંપી જતા. તેમના આ સેવાભાવને કારણે ડૉક્ટરોનું વિશાળ વર્તુળ તેમના નિત્ય સંપર્કમાં રહેતું.

નાથાભાઈને સિનેમા જોવાનો શોખ ભારે. કેન્દ્રમાંથી જનસંઘના કોઈ નેતા આવે તો તેમના અનેક કાર્યક્રમો સાથે એક કાર્યક્રમ રાત્રે ફિલ્મ જોવાનો ગોઠવે જ. વળી સાથે શહેરના અનેક સાથીઓને પણ નોતરે. બાબત ગમે તે હોય, જ્યાં સુધી મેળાવડો ન જામે ત્યાં સુધી નાથાભાઈને બધું જ અધૂરું લાગે.

પરિવાર-ભાવ :

સંઘકાર્યમાં એકત્વ-શક્તિ (સીમેંટિંગ ફોર્સ) તરીકે જે અખૂટ શક્તિનો ભંડાર (સ્રોત) વહી રહ્યો છે તે છે પરિવાર-ભાવ. સંઘકાર્યમાં પરિવારો સાથે ન જોડાઈ શકીએ તો તે કાર્યની ઊણપ ગણાય. નાથાભાઈમાં આ કુનેહ વિશિષ્ટ રીતે વિકસી હતી. ગુજરાતનાં સેંકડો ગામોમાં હજારો પરિવારોમાં નાથાભાઈ એક કુટુંબના જ સભ્ય બની રહ્યા હતા. કટોકટીના દિવસોમાં જ્યારે ભૂગર્ભ ચળવળ ચાલતી હતી, નાનામોટા અનેક કાર્યકરો ભૂગર્ભમાં રહેતા હતા ત્યારે સહુએ અનુભવ કર્યો હતો કે નાથાભાઈ દ્વારા તૈયાર થયેલ અનેક કુટુંબ અને તેમનાં ઘર કટોકટી સામેની લડાઈના અભેદ્ય કિલ્લા પુરવાર થયાં હતાં.

અપાર આત્મવિશ્વાસ :

નાથાભાઈ કાર્ય કરતી વખતે ક્યારેય પોતાનામાં હીનભાવ અનુભવતા નહોતા. પોતે કેટલું ભણ્યા છે, આર્થિક સ્તર ક્યો છે, વગેરે બાબતોથી તે પર થઈ ગયા હતા. યુનિવર્સિટીમાં જઈ ખુરાંટ પ્રાધ્યાપકો સામે દબદબાપૂર્વક વાત મૂકવા કે વકીલોના બારમાં કે ડૉક્ટરોના ઍસોશિએશનમાં કે પત્રકારો વચ્ચે તર્કબદ્ધ રીતે પોતાની વાત મૂકવા તે ટેવાયેલા હતા.

૧૯૬૭-૬૮માં કર્ણાવતી મ્યુનિસિપલ કૉર્પોરેશનની ચૂંટણીઓ હતી. ચૂંટણી પૂર્વે જનસંઘ તરફથી પ્રભાવી ઉમેદવારો શોધવાનો પ્રયાસ ચાલતો હતો. નાથાભાઈ સેંટ ઝેવિયર્સ કૉલેજમાં પ્રાધ્યાપક-ખંડમાં મજમો જમાવીને બેઠા. પ્રાધ્યાપકો રાજકારણીઓ પર તૂટી પડ્યા. રાજકારણીઓ ઉપર અનેક આરોપો કર્યા. નાથાભાઈએ એક પણ વાતનો બચાવ ન કર્યો. બધા થાક્યા એટલે

નાથાભાઈએ ધીરેકથી કહ્યું : "આગામી કૉર્પોરેશન ચૂંટણીમાં તમારામાંથી થોડાક મિત્રો ઉમેદવારી કરો. જનસંઘ આપને ટિકિટ આપશે." બધા પ્રાધ્યાપકોએ હાથ ઉપર કરી દીધા. નાથાભાઈએ તરત જ ચોપડાવ્યું : "લોકશાહીમાં કોઈ જગ્યા ખાલી નથી રહેતી. તમે નહીં આવો તો ગુંડાઓ, નબળા લોકો એ જગ્યા ભરી કાઢશે. પછી તમને રાજકારણીઓને કોઈ ગાળો દેવાનો અધિકાર રહેતો નથી." ૨૫થી ૩૦ અધ્યાપકોનું આખુંય ટોળું ચૂપ થઈ ગયું. મોં પરથી માખી ઉડાડવાના પણ હોશ નહોતા.

કેન્દ્ર(દિલ્હી)માં જનતાપક્ષના પતન પછીની ચૂંટણીમાં જનતાપક્ષનો કારમો પરાજય થયો. દિલ્હીના એક પત્રકાર નાથાભાઈને મળવા આવ્યા. પરાજય બાબતે વિસ્તારથી વિશ્લેષણ કરવા માગતા હતા. નાથાભાઈને પૂછ્યું, "ચૂંટણીમાં આવો કારમો પરાજય કેમ થયો ?" નાથાભાઈએ તડાક દઈને એક જ વાક્યમાં જવાબ દીધો, "લોકોએ વોટ ના આપ્યા એટલે હારી ગયા." પેલો પત્રકાર આભો જ બની ગયો. સાવ ટૂંકું વિશ્લેષણ.

જાણીતા હાસ્યલેખક શ્રી વિનોદ ભટ્ટ જેવા અનેક બુદ્ધિજીવી મિત્રો શ્રી નાથાભાઈ સાથે ગપાટા મારવા હેડગેવાર ભવનમાં આવતા હતા. વળી નાથાભાઈ હોંશેહોંશે જાતે બનાવીને સાબુદાણાની ખીચડી એમને જમાડતા. હા, નાથાભાઈ સાબુદાણાની ખીચડી બનાવવામાં એક્કા (એક્સપર્ટ) હતા.

વસંતભાઈ ગજેન્દ્રગડકર વકીલાત કરતા હતા. નાથાભાઈનું તેમને મળવાનું સ્થળ એટલે કોર્ટ. જોતજોતામાં સ્થિતિ એવી થઈ ગઈ કે નાથાભાઈ કૉર્ટમાં આવે તેની વકીલો રાહ જોતા. નાથાભાઈ સાથે દરબાર ભરવા સહુ આતુર રહેતા. અઠવાડિયે એકાદ વાર નાથાભાઈ સાથે આ સીનિયર વકીલોની પંચાયત ન મળે તો જ આશ્ચર્ય.

ભોજનપટુ :

નાથાભાઈ હોય અને દરબાર ન ભરાયો હોય એવું જવલ્લે જ બને અને દરબાર એટલે લૂખો-સૂકો નહીં. ફાફડા, ગાંઠિયા, ખમણ કે ભજિયાં વિના તો દરબાર કેવો ! કાર્યકર્તા મળવા આવે એટલે હક્કપૂર્વક કહે, "કેમ, ખાલી હાથે હેંડ્યા આવ્યા ?"

નાથાભાઈના પરિવાર-ભાવમાં ભાભીઓનું અનેરું સ્થાન હતું. કઈ ભાભી ઢોકળાં સરસ બનાવે છે, કઈ ભાભી પીઠલું ભાત સરસ બનાવે છે, કઈ ભાભી હાંડવો સરસ બનાવે છે, કઈ ભાભી મેથીના ગોટા સરસ બનાવે છે... બધી જ તેમને ખબર અને એ ઘરમાં પ્રવેશતાં જ બંને પક્ષો સમજી

નાથાભાઈના જીવનમાં અનેક ઉતાર-ચઢાવ આવ્યા. એક અર્થમાં કહીએ તો નાથાભાઈને ખરેખર સંતોષકારક કામ કરવા માટે માંડ દોઢ દાયકાનો સમય મળ્યો. પરંતુ દોઢ દાયકામાં નાથાભાઈએ ગજબનું કાઠું કાઢ્યું.

જાય કે આજે શું રાંધવું. નાથાભાઈના કેટલાક વિશેષ પરિવાર હતા : પાણીપૂરી પરિવાર, દહીંવડા પરિવાર, ઢોકળાં પરિવાર... વગેરે...વગેરે...

એક વાર એક કાર્યકર્તા નાથાભાઈ પાસે કલકત્તા કાર્યાલયમાં રહેવા માટે પરિચયપત્ર લેવા આવ્યા. નાથાભાઈએ પૂછ્યું, 'પરિચયપત્ર પછી, પહેલાં બોલો, ટ્રેનમાં જવાના ? રસ્તામાં કયાં સ્ટેશન આવે, ખબર છે ? કયા સ્ટેશને શું ખાવાનું મળે એ ખબર છે ?' પેલા ભાઈ બિચારા પ્રશ્નો સાંભળીને નાથાભાઈ સામે જોઈ રહ્યા. નાથાભાઈ કહે, 'જોઈ શું રહ્યા છો ? કાગળ કાઢો... લખો... નડિયાદ સ્ટેશને ટમટમ, આણંદ સ્ટેશને ગોટા, વડોદરામાં લીલો ચેવડો... ભરૂચમાં ખારી સિંગ, સુરતમાં ઘારી, બારડોલીમાં પાતરાં... છેક કલકત્તા સુધીના દરેક સ્ટેશનની વાનગી લખાવી દીધી. પછી કહ્યું, 'બોલો, દરેક સ્ટેશને ઊતરીને મને યાદ કરીને કંઈ ને કંઈ ખાશો ને ? તો જ ચિઠ્ઠી મળશે.'

સંવેદનશીલ પરગજુ :

નાનીમોટી મુસીબત વેળાએ ગુજરાતભરમાંથી કાર્યકરો કર્ણાવતી દોડી આવે. ખાસ કરીને હૉસ્પિટલોમાં સારવાર માટે આવતા કાર્યકરો અને તેમનાં પરિવારજનોનો આવરો ઘણો વધારે. કૉર્ટ-કચેરી અને સરકારી કામે આવનારાઓનો પ્રવાહ પણ નિરંતર રહે. બધાને કંઈ ને કંઈ મદદ જોઈએ. દરેક નાથાભાઈનું જ નામ લઈને આવે. કોઈને દર્દી માટે લોહી જોઈતું હોય, કોઈ દર્દીના કુટુંબને રહેવા માટે જગ્યા જોઈતી હોય, કોઈને સારા ડૉક્ટરની શોધ હોય, કોઈ દીકરી માટે સારો છોકરો શોધતા હોય. આવાં તો અનેક કામો નાથાભાઈ એકલે હાથે કરતા રહેતા.

કર્ણાવતીમાં એક વાર સાબરમતીમાં પૂર આવ્યું. પાલડીની એક આખી સોસાયટી તણાઈ ગઈ. નાથાભાઈએ મોટા પાયે સેવા-કામ ઉપાડ્યું. કેસરિયા ટોપી પહેરીને જનસંઘના જુવાનિયાનાં ધાડાં ને ધાડાં સેવા માટે ઊમટી પડ્યાં. કર્ણાવતીનાં નગરજનોએ અને છાપાંઓએ ભરપેટ વખાણ કર્યાં.

નાથાભાઈના હાથે બે-ત્રણ વાર ફ્રેકચર થયું હતું. રસ્તે જતાં-આવતાં કે પ્રવાસમાં, ટ્રેઈનમાં કે બસમાં કોઈ બહેન-દીકરી સાથે અડપલાં કરે કે અસભ્ય વર્તન કરે તો નાથાભાઈ સાંખી શકતા નહીં. પારકો ઝઘડો માથે લેતા અને આવા જ ઝઘડામાં ઝગડાજીને બેત્રણ વાર ત્રણત્રણ મહિનાના પાટા બાંધવા પડ્યા હતા.

નાથાભાઈના અવાજમાં રૌદ્રતા હતી, પરંતુ ઋજુ, સંવેદનાસભર પરગજુ વ્યક્તિત્વ હતું. નાથાભાઈનું જીવન ભણતર નહોતું પામ્યું, પરંતુ ગણતરમાં પારંગતતા મેળવી હતી. નાથાભાઈનું જીવન ગણતર અને ઘડતરનું બેમિસાલ મિલન હતું.

ભાજપની વર્તમાન પેઢી માટે નાથાભાઈનું જીવન વધુ પરિચિત નહીં હોય, પરંતુ ભાજપ પાસે આજે જે કંઈ છે તેમાં નાથાભાઈના પરસેવાની મહેક છે. નાથાભાઈએ પોતાની જાતનું ખાતર કરીને કમળ ખીલવ્યું છે. તેમનો પરિશ્રમ, તેમની સ્વ-વિકાસ માટેની જહેમત કોઈ પણ કાર્યકર્તાને પોતાના વિકાસ માટે પ્રેરણા આપે તેમ છે. ગરીબ છીએ, નાના છીએ, અભણ છીએ વગેરે હીનભાવનો ત્યાગ કરી, સમર્પણભાવથી લક્ષ્યને માટે કર્તવ્ય-રત રહીએ એ જ નાથાભાઈને સાચી શ્રદ્ધાંજલિ બની રહે, એ જ આજની પેઢીનું કર્તવ્ય છે.



• •





વૈભવશાળી રાષ્ટ્રજીવન

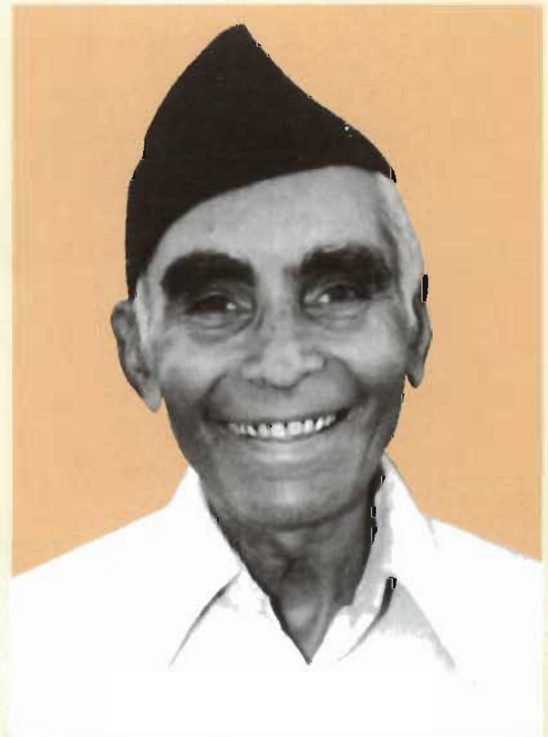
લોકો આપણને સાંપ્રદાયિક વગેરે કહે
તો પણ તેમના અને આપણા વિશ્વાસ એક જ છે.
અંતર એટલું જ છે કે
આપણામાં સત્ય કહેવાનું સાહસ છે
અને તેઓ ભયને કારણે
તુષ્ટીકરણ અને શમન કરવાનો પ્રયત્ન કરતા રહે છે.
હા, એ અવશ્ય છે કે
તેઓ પોતાની આ બીક પર
વિશાળહૃદયતા, ધર્મનિરપેક્ષતા વગેરેનું આવરણ નાંખે છે.
બીજો કોઈ ફેર નથી,
તેથી આપણે જે પરિણામ પર પહોંચીએ છીએ,
તે એ છે કે એવી બધી જાતિઓ કે
જે આ દેશમાં વસી રહી છે,
છતાં હજુ પણ તેના પ્રત્યે વફાદાર નથી,
તેની સંસ્કૃતિને તેમણે મનથી ગ્રહણ કરી નથી,
એ જીવનસંચારનો સ્વીકાર નથી કર્યો
જેને આ દેશે અનેક શતાબ્દીઓથી વિકસિત કર્યો છે,
એનાં દર્શન, એના રાષ્ટ્રીય મહાપુરુષો
તથા આ દેશનાં બધાં આધારભૂત તત્ત્વો પર
તેમનો વિશ્વાસ નથી.
જો ટૂંકમાં કહીએ તો કહી શકાય કે
તેઓ આપણા રાષ્ટ્રજીવન માટે વિદેશી છે.
કેવળ હિંદુ સમાજનું જીવન
ભારતની આ પવિત્ર ભૂમિનું વાસ્તવિક ચિરંતન અને
વૈભવશાળી રાષ્ટ્રજીવન રહ્યું છે.



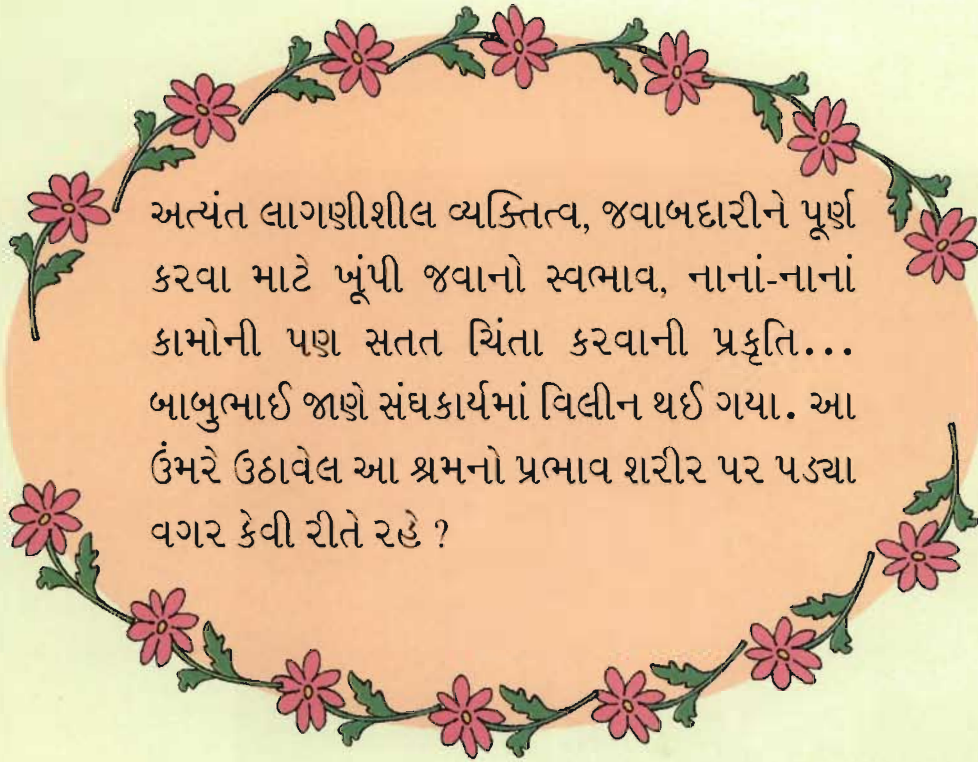
- પ. પૂ. શ્રી ગુરુજી

૧૩

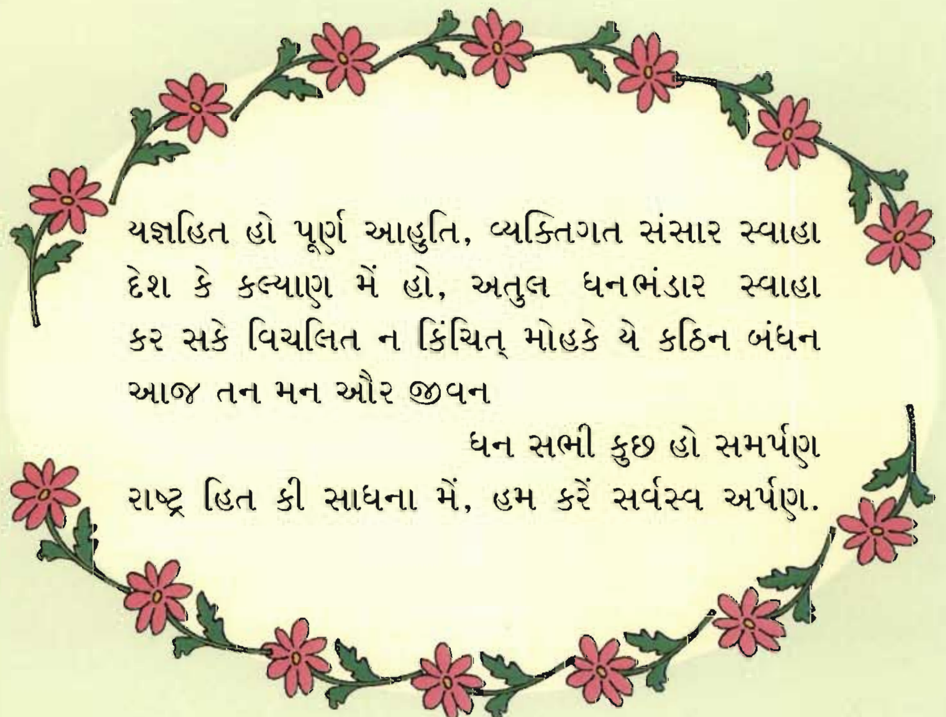
બહુમુખી પ્રતિભા
શ્રી બાબુભાઈ ઓઝા



 મા. શ્રી બાબુભાઈ ઓઝા 



અત્યંત લાગણીશીલ વ્યક્તિત્વ, જવાબદારીને પૂર્ણ કરવા માટે ખૂંપી જવાનો સ્વભાવ, નાનાં-નાનાં કામોની પણ સતત ચિંતા કરવાની પ્રકૃતિ... બાબુભાઈ જાણે સંઘકાર્યમાં વિલીન થઈ ગયા. આ ઉંમરે ઉઠાવેલ આ શ્રમનો પ્રભાવ શરીર પર પડ્યા વગર કેવી રીતે રહે ?



યજ્ઞહિત હો પૂર્ણ આહુતિ, વ્યક્તિગત સંસાર સ્વાહા
દેશ કે કલ્યાણ મેં હો, અતુલ ધનભંડાર સ્વાહા
કર સકે વિચલિત ન કિંચિત્ મોહકે યે કઠિન બંધન
આજ તન મન ઔર જીવન
ધન સભી કુછ હો સમર્પણ
રાષ્ટ્ર હિત કી સાધના મેં, હમ કરેં સર્વસ્વ અર્પણ.





મોઢેરા – સૂર્યમંદિર

સામાન્ય રીતે રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘ બાબતે એમ ભ્રમ પેદા કરવામાં આવ્યો છે કે સંઘમાં ઉચ્ચ બ્રાહ્મણકુળના લોકો જ સંઘ સાથે જોડાયેલા છે. સમાજના અન્ય વર્ગોનું સંઘમાં કોઈ સ્થાન જ નથી. ખરેખર તો હકીકત અને સત્ય વચ્ચે આસમાન-જમીન જેટલું છેટું છે. ગુજરાતમાં રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘ – આર. એસ. એસ.ની વિકાસયાત્રા તરફ નજર કરીએ તો સમાજના છેવાડાના વર્ગની હાજરી ઊડીને આંખે વળગે છે. આર. એસ. એસ. હિન્દુ સંગઠન અને હિન્દુત્વને વરેલ હોઈ, ત્યાં ક્યારેય જાતિભેદ, આર્થિક સ્થિતિને કારણે કોઈ ભેદભાવ જેવું વાતાવરણ જ હોતું નથી. કહેવાતી કોઈ ઉચ્ચ જાતિની નોંધ લેવાતી નથી કે ન તો કોઈ જાતિ નીચી હોય તો તેનો અસ્વીકાર કરવામાં આવે છે. પરિણામે સમાજજીવનમાં ઘર કરી ગયેલી આ જાતિભેદની વિકૃતિનો લેશમાત્ર પ્રવેશ સંઘ-જીવનમાં નથી. પરિણામે સમાજના બધા જ વર્ગોનું સંઘમાં પ્રતિનિધિત્વ હોય, સહયોગ હોય, છતાંય ક્યારેય તેના ઢોલ પીટવામાં આવતા નથી અને પરિણામે ભ્રમ ફેલાવનાર તત્ત્વોને ફાવતું જડે છે. સત્ય તો સત્ય જ રહે છે, તેને નકારી શકાતું નથી.

શ્રી બાબુભાઈ ઓઝા ગુજરાતમાં આર. એસ. એસ.માં વર્ષો સુધી ઉચ્ચ પદ પર રહ્યા હતા. ઓઝા અટકને કારણે અને આર. એસ. એસ.ના કર્તાહર્તા હોવાને કારણે સહુ કોઈ તેમને ઉચ્ચ બ્રાહ્મણકુળની વ્યક્તિ તરીકે ઓળખાવે. સંઘમાં જાતિ દ્વારા ઓળખની ક્યારેય પરંપરા ન રહી હોવાના કારણે ક્યારેય આવા ભ્રમને ગંભીરતાથી લેવાયો નહીં.

શ્રી બાબુભાઈ ઉત્તર ગુજરાતના મહેસાણા જિલ્લાના અત્યંત સામાન્ય પ્રજાપતિ પરિવારનું સંતાન હતા. શિશુ-અવસ્થામાં જ પિતાજીની છત્રછાયા ગુમાવી હતી. પરિવારના સહુ પ્રજાપતિ સમાજના પારંપરિક માટીકામના વ્યવસાય સાથે જોડાયેલા હતા. બાલ્યકાળથી જ સંઘજીવનનો સ્પર્શ થવાને કારણે કુટુંબમાં જીવન તરફ જોવાનો દૃષ્ટિકોણ બદલાયો. ઘરમાં શિક્ષણે સ્થાન લીધું. બાબુભાઈ સ્વભાવે ખંતીલા હતા. કોઈ પણ કામ ખંતથી કરવું તે તેમનો સહજ સ્વભાવ હતો. પરિવારની આર્થિક સ્થિતિ, સામાજિક પરિવેશ જેવી બાબતો તેમના ખંતીલા સ્વભાવને કારણે તેમને શૈક્ષણિક કારકિર્દીમાં ક્યારેય રુકાવટ ન બની. એ જમાનામાં એન્જિનિયરિંગનો અભ્યાસ પૂર્ણ કર્યો. નિયમિત સંઘકાર્ય કરતાં-કરતાં ઉત્તમ કારકિર્દી સાથે એન્જિનિયર બન્યા. શ્રી બાબુભાઈ તેમના સમાજમાં વધુ અભ્યાસ માટે અમેરિકા જનાર પ્રથમ યુવક હતા. શૈક્ષણિક ઉચ્ચ લાયકાત અને યોગ્યતાના ધોરણે તેઓ અમેરિકા પહોંચ્યા હતા. અમેરિકામાં ઈલિનોઈસ યુનિવર્સિટીમાં એમ. એસ.ની ડિગ્રી મેળવી. સંઘ વિશે બીજો એક ભ્રામક પ્રચાર એ પણ ચાલતો રહ્યો કે સંઘકાર્યમાં અત્યંત સામાન્ય સ્તરની શૈક્ષણિક કારકિર્દીવાળા લોકો જોડાય છે. હકીકત તદ્દન જુદી છે તેનું ઉદાહરણ શ્રી બાબુભાઈ સ્વયં છે. આજથી પાંચ દશક પહેલાં અમેરિકા જવું કે ડિગ્રી ધારણ કરવી એ માત્ર ભારતના લોકો માટે જ નહીં, અમેરિકાના લોકો માટે પણ કૌતુક જેવું લાગતું. અમેરિકામાં સહુ બાબુભાઈને એક પ્રશ્ન હંમેશાં પૂછે, 'તમારી ગેરહાજરીમાં તમારી પત્ની તમારાં માતા-પિતા સાથે રહે ખરી?' ત્યારે બાબુભાઈ અમેરિકન મિત્રોને સમજાવતા કે 'ભારતમાં લગ્નસંસ્થા માત્ર વ્યક્તિમિલનની વ્યવસ્થા નથી, પરંતુ બે પરિવારોના મિલનની સામાજિક વ્યવસ્થા છે. પત્ની માત્ર પતિને નહીં, પૂરા પરિવારને અપનાવતી હોય છે.'

૫૦-૫૫ના ગાળામાં અમેરિકામાં ઉચ્ચ શિક્ષણ પ્રાપ્ત કરનાર વ્યક્તિ માટે અમેરિકાનું વૈભવી જીવન, આર્થિક સમૃદ્ધિ, કારકિર્દીની ઉજ્જ્વળ તકો સામે આવીને ઊભી હોય એવે વખતે વ્યક્તિગત હિતને બદલે રાષ્ટ્રહિતને પ્રાથમિકતા આપી, અમેરિકાની જાહોજલાલીના મોહમાં પડવાને બદલે ભારતમાં પરત આવી, પોતાનાં જ્ઞાન અને અનુભવનો દેશ માટે ઉપયોગ કરવાનો શ્રેષ્ઠ નિર્ણય કરી બાબુભાઈ સદાને માટે અમેરિકાને અલવિદા કહી ભારતને ખોળે ખૂંપી ગયા.

સંઘ-સંસ્કારની એક વિશેષતા રહી છે. સમગ્ર સમાજને પરિવાર માનવાના સંસ્કાર સંઘમાં સહજ રીતે મળે છે. અમેરિકામાં બાબુભાઈના જીવનમાં બનેલ એક ઘટનામાં તેનાં દર્શન થયાં. અમેરિકામાં ઈલિનોઈસ યુનિવર્સિટીમાં ભણતા હતા ત્યારે તેમના સહપાઠી સુરેન્દ્રનગર જિલ્લાના લીંબડી તાલુકાના લાલિયાદ ગામના કિરણસિંહ સાથે મિત્રતા થઈ. કમનસીબે ભણવા ગયેલ વિદ્યાર્થીને માથે કેટલી મોટી આફત? તેનું આકસ્મિક મૃત્યુ થયું. સાથીદારની અંતિમક્રિયા કરી કિરણસિંહનાં પરિવારજનોને રજેરજની વિગતો મોકલાવી. આશ્ચર્ય તો એ વાતનું થયું કે કિરણસિંહના મૃત્યુ પછી બાબુભાઈ પહેલી વાર ભારત આવ્યા ત્યારે આદરપૂર્વક સાચવેલાં કિરણસિંહનાં અસ્થિ સાથે લાવ્યાં અને જાતે લાલિયાદ જઈ કિરણસિંહના પિતા મોબતસિંહ ઝાલાના હાથમાં મૂક્યાં. સહુની આંખમાં આંસુ હતાં. જુવાનજોધ દીકરો આવવાને બદલે તેનાં અસ્થિ આવ્યાં. પરંતુ બાબુભાઈના આ સંસ્કાર મોબતસિંહ ઝાલાના પરિવારમાં આગવી છબી પાડી ગયા. જીવનના અંત સુધી મોબતસિંહ પરિવાર માટે બાબુભાઈ પરિવારનું અંગ બની રહ્યા.

આવો જ બીજો પ્રસંગ પણ બાબુભાઈની વિશેષતાનું અનોખું દૃષ્ટાંત પૂરું પાડે છે. સંઘકાર્ય કરવાની કાર્યશૈલીમાં વ્યક્તિગત સંબંધો સંવેદનાપૂર્ણ વ્યવહાર અને સાલસતા આજે પણ અનેક વ્યક્તિત્વો પર અમીટ છાયા છોડી ગયાનો

અનુભવ થાય છે. વિશ્વપ્રસિદ્ધ મહિલા અવકાશયાત્રી સુનીતા વિલિયમ્સના પિતાજી ડૉ. દીપકભાઈ પંડ્યા બચપણમાં કડીમાં બાબુભાઈ ઓઝાના સંપર્કમાં આવ્યા, અને પહેલી જ મુલાકાતમાં તેઓએ બાબુભાઈ પ્રત્યે એક અનોખું આકર્ષણ અનુભવ્યું. બાબુભાઈના નિયમિત સંપર્કના કારણે દીપકભાઈ એક સારા સ્વયંસેવક તરીકે પોતાનું જીવન ઘડવામાં સફળ રહ્યા અને તેનો યશ બાબુભાઈને આપે છે.



દીપકભાઈના પિતાજીનો તેમના બચપણમાં સ્વર્ગવાસ થયો હતો અને માતા પણ નાની ઉંમરમાં ગુજરી ગયા ત્યારે બાબુભાઈ સહિત ૭/૮ સ્વયંસેવકોની ટોળી દીપકભાઈનો સથવારો બની રહ્યા એટલું જ નહીં, એ નાના-નાના સ્વયંસેવકોએ દીપકભાઈનાં માતુશ્રીની અંત્યેષ્ટિની બધી જ ચિંતા કરી, દીપકભાઈને આ દુઃખની પળોમાં ૨૪ કલાક સાથે રહીને સથવારો આપ્યો એ પ્રસંગને યાદ કરતાં આજે પણ દીપકભાઈની આંખમાં ઝળઝળિયાં આવી જાય છે.

આપણા દેશમાં લોકશાહીનો ઢોલ પીટનારાઓ સત્તાના જોરે આર. એસ. એસ.ના સ્વયંસેવકો પર જુલ્મ કરવાનું ક્યારેય ચૂકતા નહીં. બાબુભાઈની સંઘ-નિષ્ઠાને કારણે એમને એ. ઈ. સી. – અમદાવાદ ઈલેક્ટ્રિકસિટી કંપનીની નોકરી છોડી મહારાષ્ટ્રમાં સામાન્ય નોકરી સ્વીકારવી પડી. બાબુભાઈએ નોકરી છોડી, પરંતુ સંઘ-કાર્ય ન છોડ્યું.

અમેરિકાથી આવ્યા પછી બાબુભાઈને વડોદરાની પ્રતિષ્ઠિત જ્યોતિ લિ.માં ઉચ્ચ પદે નોકરી મળી. વડોદરાના જીવનમાં તેમની નોકરી પ્રતિષ્ઠાભરી, મોભાવાળી હતી. જ્યોતિ લિ.ના શ્રી નાનુભાઈ અમીન વડોદરાના સાર્વજનિક જીવનમાં શ્રદ્ધેય વ્યક્તિત્વરૂપ હતા. શ્રી નાનુભાઈ અને શ્રી બાબુભાઈ વચ્ચે જોતજોતામાં સ્નેહપૂર્ણ સંબંધ બંધાઈ ગયો. સહજ રીતે તેમને લોકો આદરથી જોતા. ઉચ્ચપદે નોકરી હતી. નાનુભાઈ અમીન જેવા પ્રતિષ્ઠિત વ્યક્તિના સાથી હતા. વડોદરાના ઉચ્ચ વર્ગમાં મોભાનું સ્થાન જમાવવા માટે તેમની પાસે બધું જ ઉપલબ્ધ હતું. તેમ કરવા માટે તેમને કશો વધારાનો પ્રયાસ કરવો પડે તેવું પણ નહોતું. પરંતુ એક સ્વયંસેવક તરીકે પોતાની જાતને તેમણે બધાથી અલિપ્ત રાખી અને વધુમાં વધુ સમય સંઘકાર્ય માટે કેવી રીતે અપાય, પોતાનાં જ્ઞાન અને અનુભવનો લાભ સંઘકાર્યને કેવી રીતે મળે તેનો જ વિચાર કેન્દ્રમાં રહેતો.

બાબુભાઈ વડોદરાના જીવનમાં મોભાનું સ્થાન પ્રાપ્ત કરી શકે તેવી સ્થિતિમાં હતા. માન-મરતબો મળે એવી અનેકવિધ સંસ્થાઓ સાથે જોડાઈ તેઓ વ્યક્તિગત જીવનમાં ઘણું-બધું મેળવી શકે તેમ હતા. આપણા સમાજના સ્વભાવ પ્રમાણે આજથી ૪૦-૫૦ વર્ષ પહેલાં અમેરિકાથી પરત આવેલ વ્યક્તિ માટે અહોભાવનાં જાણે ઘોડાપૂર આવતાં. પરંતુ બાબુભાઈએ સમાજમાં ઝાકઝમાળવાળી જીવનશૈલીથી દૂર રહેવાનું પસંદ કર્યું. સંઘકાર્યને જ જીવનમાં પ્રાથમિકતા આપી. જ્યોતિ લિ.ની મોભાદાર જવાબદારીને પૂરેપૂરો ન્યાય મળે અને બાકીનાં સમય અને શક્તિ સંઘના સંસ્કારો પ્રમાણે સમાજ માટે ઉપયોગી રહે તેવી જીવનરચના વિકસાવી.

બાબુભાઈનાં વ્યક્તિત્વ અને યોગ્યતાને કારણે જ્યોતિ લિ.માં ઘણી પ્રતિષ્ઠા હતી. પોતે ઇચ્છે ત્યાં સુધી જ્યોતિ લિ. તેમની સેવા લેવા માટે આતુર હતી. પરંતુ બાબુભાઈએ ૫૮ વર્ષે નિવૃત્ત થવાનો મક્કમ નિર્ધાર કરી પોતાનું શેષ જીવન સંઘ માટે સમર્પિત કરવાનો નિર્ણય કર્યો.

રા. સ્વ. સંઘની વ્યવસ્થામાં સંઘચાલક તરીકેની જવાબદારી અત્યંત ગૌરવમય અને પ્રતિષ્ઠાભરી હોય છે. નિવૃત્તિ સાથે જ તેમને ગુજરાતના સહપ્રાંત - સંઘચાલકની જવાબદારી મળી. પૂર્ણ સમય સંઘ માટે સમર્પિત કરવાના નિર્ધાર સાથે ગુજરાતના ખૂણેખૂણે પ્રવાસ કરી, સંઘકાર્યની વૃદ્ધિ માટે કામે લાગ્યા. કમનસીબે થોડાક જ સમયમાં ગુજરાતના પ્રાંતપ્રચારક કેશવરાવ દેશમુખનો અચાનક સ્વર્ગવાસ થઈ ગયો. સંઘજીવનમાં પ્રાંત-પ્રચારક સંઘકાર્યનું મુખ્ય ચાલક બળ હોય છે. અચાનક જ સંઘનો મોભ તૂટી પડ્યો હતો. આવી વિકટ પરિસ્થિતિમાં પહેલી વાર બાબુભાઈ ઓઝા જેવા ગૃહસ્થી જીવન જીવનાર વ્યક્તિની પ્રાંત-પ્રચારકના કાર્ય માટે પસંદગી થઈ. પરિવારની અનેક જવાબદારીઓ છતાં બાબુભાઈએ પૂર્ણ સમર્પણભાવથી એ જવાબદારી માથે લીધી. સંઘના કાર્યાલયને જ ઘર બનાવી દીધું. પરિવારજનો સાથેનો સંપર્ક ફોન કે પત્ર પૂરતો સીમિત થઈ ગયો. પ્રચારક-પરંપરાને શોભે તે રીતે અવિરત પ્રવાસ દ્વારા સંગઠનમાં પ્રાણ પૂરવાના નિરંતર પ્રયાસ કરતા રહ્યા.

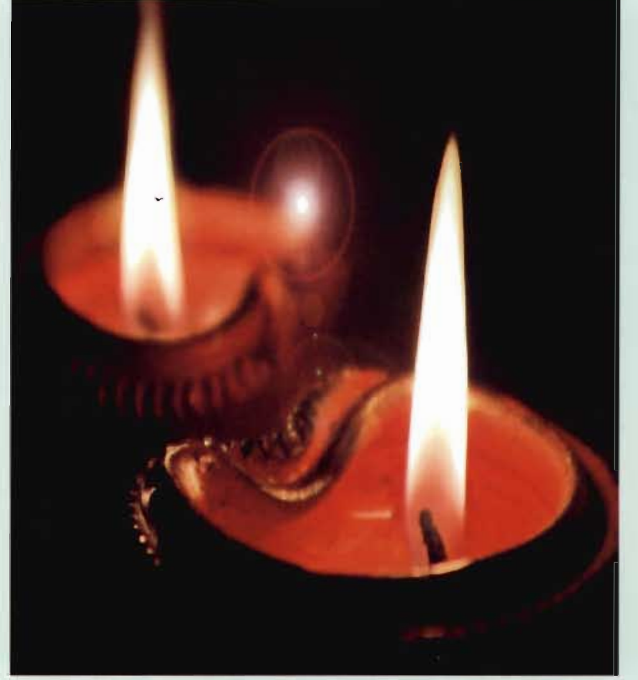
બાબુભાઈએ પ્રાંત-પ્રચારકની જવાબદારીમાં કોઈ ખોટ ના રહી જાય તે માટે કલ્પના બહારનો શારીરિક શ્રમ ઉઠાવ્યો, કષ્ટમય જીવનને સહજ રીતે સ્વીકારી લીધું.

અત્યંત લાગણીશીલ વ્યક્તિત્વ, જવાબદારીને પૂર્ણ કરવા માટે ખૂંપી જવાનો સ્વભાવ, નાનાં-નાનાં કામોની પણ સતત ચિંતા કરવાની પ્રકૃતિ... બાબુભાઈ જાણે સંઘકાર્યમાં વિલીન થઈ ગયા. આ ઉંમરે ઉઠાવેલ આ શ્રમનો પ્રભાવ શરીર પર પડ્યા વગર કેવી રીતે રહે ?

પરંતુ તેમણે શરીરની ચિંતા ન કરી. નાનીમોટી બીમારી વચ્ચે પણ કાર્ય કરતા જ રહ્યા. પોતાની બીમારીથી સાથીઓને ચિંતા થશે એવી લાગણીને કારણે પોતાની તબિયત વિશે કોઈને જાણવા જ ન દે. પરિણામે અચાનક હૃદયરોગના જીવલેણ હુમલાને કારણે અંતિમ ક્ષણ સુધી કાર્ય કરતાં-કરતાં તેમણે નશ્વર દેહ છોડી દીધો.

બાબુભાઈનું સ્નેહાળ સ્મિત, અવિરત કાર્યસાધના, સહજ-સરળ જીવન આજે પણ અનેક કાર્યકરોના જીવનમાં અંકિત છે.

• •









અધિકાર નહીં કર્તવ્ય

આજે આપણે બધી જગ્યાએ
અધિકારો માટે કોલાહલ સાંભળીએ છીએ.
આપણા બધા રાજકીય પક્ષો પણ
સમાન અધિકારોની વાત કરીને
લોકોમાં અહંભાવ જાગૃત કરી રહ્યા છે.
ક્યાંય કર્તવ્ય અને નિઃસ્વાર્થ સેવા પર
ભાર મૂકવામાં આવતો નથી.
સ્વકેન્દ્રિત અધિકારજ્ઞાનના વાયુમંડળમાં
સહયોગની ભાવના જે સમાજનો આત્મા હોય છે,
તે જીવિત રહી શકતી નથી.
આ કારણે આજે આપણે
આપણા રાષ્ટ્રજીવનમાં
વિવિધ ઘટકોમાં સંઘર્ષ જોઈ રહ્યા છીએ,
ભલે તે અધ્યાપક હોય કે વિદ્યાર્થી હોય
અથવા મજૂર હોય કે ઉદ્યોગપતિ હોય.
આપણી પોતાની સાંસ્કૃતિક દૃષ્ટિને
આત્મસાત્ કરવાથી જ
આપણા રાષ્ટ્રજીવનમાં મદદની
સાચી ભાવના અને કર્તવ્યચેતના પુનર્જીવિત થઈ શકે છે.

- પ. પૂ. શ્રી ગુરુજી



૧૮

ગંગાઘાટ - શ્રી બચુભાઈ ભગત

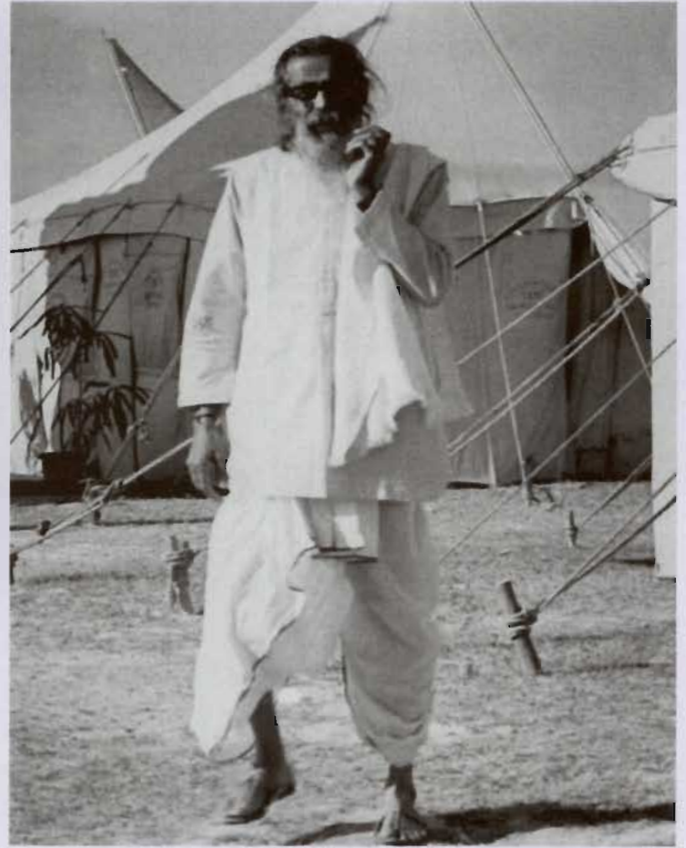


 મા. શ્રી બચુભાઈ ભગત 

સંઘયાત્રામાં અનેક ઝંઝાવાતો આવ્યા. સંઘ પરનો પ્રતિબંધ હોય કે કર્ણાવતીમાં નાનામોટા તનાવ હોય, કૉંગ્રેસી સરકારો સંઘને કચડી નાંખવાની એક પણ તક જતી ન કરતી. આવે વખતે બરફના પહાડની જેમ બચુભાઈ અડગ ઊભા રહેતા. બચુભાઈનો સ્વભાવ સંઘર્ષશીલ ક્યારેય નહોતો, પરંતુ તેઓ મનના પાકા હતા. સંઘકાર્યમાં નાનામોટા શિબિર કે વર્ગનું મહત્ત્વ અને તેમાંય વ્યવસ્થા એ ભગીરથ કાર્ય હોય છે. ગુજરાતમાં વ્યવસ્થાક્ષેત્રે સંઘપરિવારમાં જે કોઈ વિકાસ થયો છે તેના પાયામાં બચુભાઈએ વર્ષોથી જે પરંપરા ઊભી કરી છે તેનો સ્પર્શ આજે પણ એમ ને એમ જણાઈ આવે છે.

ચરણ કમલ પર માતા તેરે, પ્રાણોં કા સંગીત નિછાવર
અનગિન ગુણ-સંપન્ન સુતોં કી, જનમ જનમ કી પ્રીત નિછાવર.







ગંગાઘાટ

ભારતીય સંસ્કૃતિની અમર આસ્થા એટલે ગંગાસ્મરણ.

ગંગાદર્શન...

ગંગાસ્નાન...

ગંગા-આચમન...

પ્રત્યેક ભારતીય હૃદયની ઇચ્છા હોય છે – જીવનની અંતિમ ક્ષણે ગંગાજળનું પાન.

કેટલી ગહન શ્રદ્ધા છે !

આપણી મહાન સંસ્કૃતિના ઉતાર-ચઢાવ, વિકાસ-વિસ્તારની સદાય સાક્ષી એટલે ગંગા.

ગંગાનું પૂજન કે ગંગાની અર્ચના આપણા માટે નવી વાત નથી.

પરંતુ ક્યારેય ગંગાઘાટનો વિચાર કર્યો છે ? આ ગંગાઘાટ વિશે કંઈક લખાયું હોય કે વિચાર્યું હોય એવું ક્યારેય સાંભળ્યું છે ?

કોઈ કવિની કલમે ગંગાઘાટે અવતરણ કર્યું હોય એવુંયે જાણમાં નથી અને જો સહેજ વિચાર કરીએ તો વિચારની ક્ષિતિજો દૂર ને દૂર વિસ્તરતી જાય.

ગંગાઘાટે આવીને કેટકેટલાયે ગંગાનું અર્ચન, પૂજન, આચમન કર્યું હશે !

ગંગાઘાટે આવી કોઈકે તનનો મેલ ધોયો હશે,

તો કોઈકે મનનો મેલ પણ ધોયો હશે.

કોઈકે દીપ-ધૂપ કર્યા હશે,

તો કોઈકે જીવનદીપ ઝગમગાવ્યા હશે.

કોઈકે ચંદન ઘસી સુગંધ રેલાવી હશે,

તો કોઈકે જીવન ઘસી સુવાસ ફેલાવી હશે.

કોઈકે જીવનસાધના કરી હશે,

તો સંત તુલસી જેવા અનેકોએ અમર જીવન-સાહિત્યનું સર્જન કર્યું હશે.

વળી, આપણી મહાન સાંસ્કૃતિક વિરાસતની વિશેષતા તો જુઓ ! ગંગાઘાટ કંઈ ગંગાતટે જ હોય એવું થોડું છે ?

ગુજરાતમાં વહેતી સંઘગંગાના તટે ધીર-સ્થિર, આસ્થા અને સંસ્થા-રૂપ એક જીવંત ગંગાઘાટ એટલે સ્વ. બચુભાઈ ભગત.

ગુજરાતમાં સંઘગંગા હજુ તો ગંગોત્રી જેવા એક નાનકડા ઝરણા સમાન હતી ત્યારથી વિદ્યાર્થી બચુભાઈનું જીવન સંઘ-વિકાસયાત્રાનું સક્રિય સાક્ષી રહ્યું છે. પ્રાંતપ્રચારક તરીકે સ્વ. મા. મધુકરરાવજી, સ્વ. મા. રાજપાલપુરીજી હોય કે સ્વ. મા. વકીલસાહેબ હોય કે પછી વર્તમાન પેઢીમાંથી કોઈ હોય, બચુભાઈ પ્રારંભથી અંત સુધી સહુના અત્યંત વિશ્વસનીય સાથી રહ્યા.

માણેકચોકનું જરીપુરાણું, પ્રાથમિક સુવિધાઓનો પણ જ્યાં અભાવ હતો એવું કાર્યાલય. એ તો નામમાત્ર હતું. ખરેખર તો બચુભાઈનું ઘર જ વર્ષો સુધી કાર્યાલય રહ્યું.

બચુભાઈના જીવનમાં ઝગમગાટ, ઉતાર-ચઢાવ, વ્યથા કે આક્રોશ ક્યારેય જોવા કે અનુભવવા ન મળે. સંઘગંગાના તટે પરિવાર-ક્ષેત્રરૂપી નાનાંમોટાં અનેક તીર્થક્ષેત્ર વિકસ્યાં અને વિસ્તર્યાં. બચુભાઈ-રૂપી ગંગાઘાટ પાસે બેસીને સંઘગંગાનું આચમન કરી આગળ વધેલા આ બધા સ્વયંસેવકો, કાર્યકરો કે નેતાઓ ઉપર બચુભાઈનો નૈતિક પ્રભાવ ઘણો હતો. બચુભાઈ પરિવાર-ક્ષેત્રના કામમાં કંઈક સૂચવે અને ન થાય તેની કલ્પના પણ ન થઈ શકે, પરંતુ સંઘપરિવારના આ વટવૃક્ષના સહુ કોઈ સાક્ષી છે કે બચુભાઈએ પરિવાર-ક્ષેત્રના કોઈ પણ કામમાં ક્યારેય માથું ન માર્યું, હા... મદદ સદાય કરી. પોતે સંઘનિષ્ઠ જ રહ્યા, સંઘકાર્ય જ કરતા રહ્યા. પહેલી નજરે વ્યવહારજીવનની આ લક્ષ્મણરેખાનો આગ્રહ નાની વાત લાગે છે, પરંતુ આજના સંદર્ભમાં જોઈએ તો પચાસ વર્ષ સુધી એક પણ વાર લક્ષ્મણરેખા ઓળંગ્યા વગર કામ કરતા રહેવામાં એમણે કેટલો સંયમ જાળવ્યો હશે !

સંઘગંગા અવિરત વહેતી રહે, વિસ્તરતી રહે, તે માટે અનેક કુટુંબો ખપી ગયાં છે એમ આપણે કહીએ છીએ. શબ્દોમાં બોલાતી આ વાતના મૂળમાં ડોકિયું કરીએ તો હૈયું હચમચી જાય એવી સચ્ચાઈ આપણી સામે દેખાય છે.

ગુજરાતમાં સંઘગંગાની વિકાસયાત્રામાં પાંચ દાયકાથી જોડાયેલ બધાય ક્યાંક ને ક્યાંક બચુભાઈ સાથે પ્રત્યક્ષ કે પરોક્ષ સંપર્કમાં આવ્યા છે. બચુભાઈ ગંગાઘાટની જેમ સહુને સંઘગંગાનું આચમન કરવાનો સધિયારો બની રહેલ. ગંગાઘાટ જેવું તેમનું વ્યક્તિત્વ અનેકોનાં જીવનમાં પ્રેરણા જગાવતું રહ્યું છે, હૂંફ આપી રહ્યું છે.

સંઘના વર્તમાન સરકાર્યવાહ મા. મોહનરાવ ભાગવતજીના પિતાજી સ્વ. મા. મધુકરરાવ ભાગવત ગુજરાતમાં સંઘકાર્ય માટે આવ્યા હતા. વિદ્યાર્થી બચુભાઈને સંઘનો રંગ લગાડવામાં એમનો ફાળો ખૂબ મોટો હતો. વિદ્યાર્થીકાળે જ બચુભાઈ સંઘગંગામાં ડૂબી ગયા. ૧૯ વર્ષની ઉંમરે વિદ્યાર્થીકાળમાં પિતા બિહારીલાલ ભગતને ગુમાવ્યા. સંઘનું ઘેલું લાગેલું હોવાથી પિતાજીના ધંધા ઉપર ધ્યાન ન આપી શક્યા. દેવું થતું ગયું. માણેકચોકનાં બબ્બે ઘર વેચવાં પડ્યાં. એક ઘર બચ્યું તે પણ ગિરવે મૂકવું પડ્યું. કૉલેજમાં ભણવું પણ મુશ્કેલ થઈ ગયું. એસ.વાય.બી.કોમ.થી જ અભ્યાસ છોડવો પડ્યો. જી. સી. ડી. – ગવર્નમેન્ટ કૉમર્શિયલ ડિપ્લોમાનો કોર્સ કરી ચંદુભાઈ રવજી ભાવસારને ત્યાં ૨૭૦ રૂપિયાના પગારે નોકરી કરી. દેવું ચૂકવવું, ઘર સંભાળવું, એવી કઠિન પરિસ્થિતિ ઊભી થઈ. છતાં સંઘકાર્યમાં કોઈ પણ ખંડ પડવા દીધા વગર, મોંમાંથી ક્યારેય પોતાની મુસીબતની વાત બહાર આવવા ન દીધી.

બચુભાઈની સંઘભક્તિ એટલી તીવ્ર હતી કે પિતાજીનો સ્વર્ગવાસ થયો હતો, મૃતદેહ ઘરમાં હતો અને શાખામાં પ્રાર્થના કરીને આવું છું એમ કહીને શાખામાં પહોંચી ગયા. આ તીવ્રતા યુવાનીમાં જ હતી, એટલું જ નહીં, છેલ્લે ગુજરાતના મહાન 'સંકલ્પ શિબિર' પહેલાં બચુભાઈનાં પત્ની, અમારા સૌનાં 'મોટી બહેન'નો સ્વર્ગવાસ થયો. શિબિરના પ્રારંભના દિવસે 'મોટી બહેન'ના તેરમાની વિધિ હતી. બચુભાઈ શારીરિક રીતે અસ્વસ્થ હોવા છતાં તેરમાની વિધિ વહેલી સવારે પતાવી, બપોર પહેલાં તો શિબિરમાં પહોંચી ગયા. ગુજરાતની સંઘગંગાના ૬૦ વર્ષમાં એક પણ શિબિર કે કાર્યક્રમ એવો નહીં મળે જેમાં બચુભાઈ ઉપસ્થિત ન હોય !

એક કલાક શાખા અને ૨૩ કલાક સંઘ – આ મંત્ર બચુભાઈના જીવનમાં સંસ્કાર બનીને સ્થિર થઈ ગયો હતો. બચુભાઈ સેલ્સટેક્સ અને ઈન્કમટેક્સના વકીલ હતા. એમના જીવનમાં ક્યારેય લેતી-દેતી કરીને કોઈનો કેસ પતાવ્યો હોય એવી એક પણ ઘટના નથી બની.

ઈન્કમટેક્સ અને સેલ્સટેક્સના સરકારી અધિકારીઓ હંમેશાં તેમનો ખૂબ જ આદર કરતા. વર્ષો પહેલાં સેલ્સટેક્સના એક અધિકારીએ બચુભાઈના અસીલ ત્રિભોવનદાસ ચોકસીના કેસમાં ૪૬ રૂપિયાની આકારણી ખોટી રીતે કરી. આજના જમાનામાં ૪૬ રૂપિયા કોઈ મોટી વાત નથી. બચુભાઈના સંઘસંસ્કાર માનવા તૈયાર ન થયા. બચુભાઈ અપીલમાં ગયા અને કેસ જીતીને સિદ્ધાંતનો ઝંડો ઊંચો રાખ્યો.

બચુભાઈના જીવનમાં કરુણા એ જાણે સ્વાભાવિક ભાવ હતો. બચુભાઈ વિદ્યાર્થીકાળમાં ટાઈફૉઈડની માંદગીમાં ગંભીર રીતે બીમાર પડ્યા. એ વખતે સંજીવનભાઈ દેવધરના પિતાજી સ્વ. ગજાનનભાઈ દેવધર સંઘપરિવારમાં અત્યંત શ્રદ્ધેય નામ હતું. ગજાનનભાઈએ જાતે બચુભાઈની ખૂબ સેવા કરી, દવા સહિતની બધી જ ચિંતા કરી. કરુણાના આ સ્પર્શનું પરિણામ હતું કે સંઘપરિવારમાં કોઈના પણ જીવનમાં કષ્ટ આવ્યું હોય તો બચુભાઈનો આ કરુણાનો ભાવ પ્રગટ થયા વગર ન રહે. રાત-દિવસ જોયા વગર એ હૉસ્પિટલમાં બેસી ચિંતા કરે એવી તો અનેક ઘટનાઓ છે.

બચુભાઈ હંમેશાં કહેતા – પોતાના જીવનમાં ત્રણ શ્રદ્ધાકેન્દ્રો છે - એક પરમ પૂજનીય શ્રી ગુરુજી, બે કરનાળી અખાડાના મહંત દાદાજી અને ત્રીજા સ્વ. વકીલસાહેબ. બચુભાઈના જીવનમાં દાદાજી અને ગીતામંદિરનો પ્રવેશ લગ્ન પછી ભાભી (મોટીબહેન) દ્વારા થયો. બચુભાઈના જીવનની આ વિશાળતા હતી. પોતે સંઘમય હોવા છતાં પણ સહજભાવે ગીતામંદિરનો સ્વીકાર કરી પોતાની ભક્તિ બતાવી દીધી.

બચુભાઈને જીવનમાં એવી અતૂટ શ્રદ્ધા હતી કે દીકરી મંદાનાં લગ્ન કે દીકરા કાકુનાં લગ્નમાં મુહૂર્તને મહત્ત્વ ન હતું. જે દિવસે પ. પૂ. ગુરુજીને અનુકૂળતા એ મુહૂર્ત અને એ જ દિવસે દીકરીનાં લગ્ન કર્યાં. એવું જ જે દિવસે પૂ. બાળાસાહેબને અનુકૂળ હોય એ જ દિવસને મુહૂર્ત માની કાકુનાં લગ્ન કર્યાં.

બચુભાઈનું વ્યક્તિત્વ ખૂબ જુદું તરી આવતું હતું. અનેક વર્ષોના સહવાસમાં બે મિત્રો એવા હતા જે તેમને 'બચુ' કહીને બોલાવતા. ખૂબ જૂના સ્વયંસેવકો – મહેશભાઈ નાણાવટી અને બીજા નાનુભાઈ મહેતા.

બચુભાઈના સંઘજીવનમાં સ્વ. કેશવરાવ દેશમુખ અને સ્વ. નાથાભાઈ ઝગડા નિકટના મિત્રો હતા. સાથે સિનેમા જોવા જનારની તેમની કાયમની ટોળી હતી. બચુભાઈ વકીલોના બારમાં કેરમ રમવામાં એક્સપર્ટ તરીકે પંકાતા. તેમને કેરમ રમવાનો પણ ભારે શોખ હતો.

સંઘયાત્રામાં અનેક ઝંઝાવાતો આવ્યા. સંઘ પરનો પ્રતિબંધ હોય કે કર્ણાવતીમાં નાનામોટા તનાવ હોય, કૉંગ્રેસી સરકારો સંઘને કચડી નાંખવાની એક પણ તક જતી ન કરતી. આવે વખતે બરફના પહાડની જેમ બચુભાઈ અડગ ઊભા રહેતા. બચુભાઈનો સ્વભાવ સંઘર્ષશીલ ક્યારેય નહોતો, પરંતુ તેઓ મનના પાકા હતા. સંઘકાર્યમાં નાનામોટા શિબિર કે વર્ગનું મહત્ત્વ અને તેમાંય વ્યવસ્થા એ ભગીરથ

કાર્ય હોય છે. ગુજરાતમાં વ્યવસ્થાક્ષેત્રે સંઘપરિવારમાં જે કોઈ વિકાસ થયો છે તેના પાયામાં બચુભાઈએ વર્ષોથી જે પરંપરા ઊભી કરી છે તેનો સ્પર્શ આજે પણ એમ ને એમ જણાઈ આવે છે. પ. પૂ. ગુરુજીના ૫૧મા જન્મદિનની ઉજવણી વખતે બચુભાઈ માંડ ૨૫-૩૦ વર્ષની ઉંમરના હતા. સમાજના અનેક શ્રેષ્ઠજનોને સાથે લઈને બચુભાઈએ કામ ખૂબ ઉમદા રીતે પાર પાડ્યું હતું.



ગુજરાતમાં ૩૭ વર્ષ પહેલાં પ્રાંતકાર્યાલય 'હેડગેવાર ભવન'નો પાયો નંખાયો હતો. ડૉ. વણીકરજીનો ઉત્સાહ અને બચુભાઈનું આયોજન ન હોત, તો આપણી પાસે આજ હેડગેવાર ભવન ક્યાંથી હોત ?

ગુજરાતમાં સંઘગંગાની વિકાસયાત્રામાં પાંચ દાયકાથી જોડાયેલ બધાય ક્યાંક ને ક્યાંક બચુભાઈ સાથે પ્રત્યક્ષ કે પરોક્ષ સંપર્કમાં આવ્યા છે. બચુભાઈ ગંગાઘાટની જેમ સહુને સંઘગંગાનું આચમન કરવાનો સધિયારો બની રહેલ. ગંગાઘાટ જેવું તેમનું વ્યક્તિત્વ અનેકોનાં જીવનમાં પ્રેરણા જગાવતું રહ્યું છે, હૂંફ આપી રહ્યું છે.



લક્ષ્મણઝુલા



પુનરુજ્જીવન

આપણા હિંદુરાષ્ટ્રના પૂર્ણ વૈભવ
અને એની મહાનતાનું પુનરુજ્જીવન
આપણું એક માત્ર લક્ષ્ય છે.
આપણા લક્ષ્યને સમજવા માટે
આપણે પ્રાર્થનામાં બોલીએ છીએ
તે આપણા રાષ્ટ્રના પરમવૈભવના
અર્થને બરાબર સમજીએ.
તદુપરાંત આપણે એ પણ સમજવાનું છે કે
આપણા રાષ્ટ્રની વૈભવશાળી અવસ્થા
કેવી રીતે પ્રાપ્ત કરી શકાય
અને કઈ રીતે સ્થિર રાખી શકાય ?
સામાન્ય રીતે કોઈ પણ રાષ્ટ્રનો વૈભવ
તેની ભૌતિક સંપન્નતાને આધારે માપી શકાય છે.
નિઃસંદેહ ગૌરવશાળી રાષ્ટ્રે
બધા પ્રકારે સંપન્ન થવું આવશ્યક છે.
રાષ્ટ્રમાં પ્રત્યેક વ્યક્તિના જીવનની
બધી જરૂરિયાતોની પૂર્તિ પૂર્ણરૂપે થવી જોઈએ,
પરંતુ જે રાષ્ટ્રીય વૈભવની કલ્પના
આપણે આપણા રાષ્ટ્ર માટે કરીએ છીએ
એનું પૂર્ણ ચિત્ર આવું છે ?
આ એક અત્યંત મહત્ત્વપૂર્ણ પ્રશ્ન છે
જેના પર આપણે ગંભીરતાથી વિચાર કરવાનો છે.

- પ. પૂ. શ્રી ગુરુજી



૧૫

વિનોદી
વાસુદેવરાવ તળવલકર



 મા. શ્રી વાસુદેવરાવ તળવલકર 

યુવાનીની એ પળોમાં ઘરની આશા-અપેક્ષાઓના અંબાર વચ્ચે નોકરી છોડવાનો નિર્ણય નાનીસૂની ઘટના નથી હોતી. વ્યક્તિના જીવનમાં એ ઉંમરે ખૂબ મોટો નિર્ણય ગણી શકાય. વાસુદેવરાવે દેશહિત માટે સંઘકાર્ય કરવાનું મનોમન નક્કી કરી લીધું. નોકરી પણ છોડી, ઘર પણ છોડ્યું અને માતૃભૂમિની સેવામાં ડગ માંડ્યાં.

માતૃ-મંદિર કા સમર્પિત દીપ મૈં
ચાહ મેરી યહ કિ મૈં જલતા રહું



ગંગા છત્રી - ભાવનગર



સરદાર સ્મારક - ભાવનગર





વાસુદેવરાવની સાથે વાતચીત કરીએ તો અસ્સલ કાઠિયાવાડી લહેકા સાથેની ગુજરાતી ભાષાનો આનંદ આવે. મૂળ એ મહારાષ્ટ્રિયન પરિવાર પાકો ભાવનગરી પરિવાર બની ગયો હતો.

ભાવનગરમાં જ સંઘકાર્યમાં ઓતપ્રોત વાસુદેવરાય રેલવેમાં નોકરી કરતા હતા. રેલવેની નોકરી સરકારી નોકરીમાં મોભાદાર નોકરી ગણાતી. વાસુદેવરાવ નોકરી કરતા, ભણતા અને સંઘકાર્યમાં ડૂબેલા રહેતા. બીજા અર્થમાં કહીએ તો સંઘનું ભૂત સવાર થયું હતું.

ભાવનગરમાં શાખાના વિસ્તાર માટે વર્ષો સુધી પાયાના કાર્યકર તરીકે તેઓ કર્તવ્ય-રત રહ્યા, પરંતુ પોતાને ક્યારેય સંતોષ ન થયો. મનમાં એક તડપ હતી, તડપન પણ હતી. શાખા-કાર્યમાં કલાકો વિતાવ્યા છતાં સમાજસેવા માટે વધુ શું કરી શકાય, તેની મથામણ ચાલ્યા જ કરતી હોય. ભાવનગર સંસ્કારનગરી છે. સાહિત્ય અને સંસ્કાર ત્યાંની જીવનધારાનાં અંગ રહ્યાં છે. વાસુદેવરાવને વિચાર આવ્યો : સામાન્ય કુટુંબોને પણ આ રંગે રંગવાં જોઈએ. સામાન્ય પરિવારો માટે વાચનાલય ઊભું કરવાનો વિચાર આવ્યો. સંઘકાર્ય અને સંઘ-સંસ્કારનું તેમાં પણ પ્રગટીકરણ કરવાનું તેમને સૂઝતું. તેમણે વાચનાલય માટે ધન એકત્ર કરવાને બદલે પોસાય તેવા પરિવારો પાસેથી દેશભક્તિની પ્રેરણા આપે તેવાં પુસ્તકો એકત્ર કરવાનું શરૂ કર્યું. અનેક સ્વજનો પાસેથી વાંચેલ પુસ્તકો, વાંચેલ મૅગેઝીનો મેળવીને એક નાનકડું વાચનાલય ઊભું કર્યું. વાચનમાં રુચિ ધરાવતું એક નવું મિત્ર-મંડળ તૈયાર થયું. ધીરેધીરે વાચન રાષ્ટ્રભક્તિ તરફ વળ્યું અને પરિણામે સંઘકાર્યના વિસ્તાર માટે પણ તેનો ઉપયોગ થયો.

વાસુદેવરાવ માટે રેલવેની નોકરીનો કોઈ આનંદ નહોતો. એ જમાનામાં રેલવેની નોકરી એટલે આજના યુગમાં કોઈ એરલાઈન્સમાં કે ટેલિકોમમાં નોકરી મળી હોય તેવો માભો પડતો, પરંતુ આવી બાબતો તેમને સ્પર્શતી જ નહોતી. સામાન્ય માનવી નોકરીમાં સ્થિર થઈ પ્રગતિ માટેનું આયોજન કરે, ત્યારે વાસુદેવરાવ નોકરી છોડવા માટેનું જ આયોજન કરતા રહેતા.

યુવાનીની એ પળોમાં ઘરની આશા-અપેક્ષાઓના અંબાર વચ્ચે નોકરી છોડવાનો નિર્ણય નાનીસૂની ઘટના નથી હોતી. વ્યક્તિના જીવનમાં એ ઉંમરે ખૂબ મોટો નિર્ણય ગણી શકાય. વાસુદેવરાવે દેશહિત માટે સંઘકાર્ય કરવાનું મનોમન નક્કી કરી લીધું. નોકરી પણ છોડી, ઘર પણ છોડ્યું અને માતૃભૂમિની સેવામાં ડગ માંડ્યાં.


સોમનાથના સાનિધ્યમાં – મા. શ્રી વકિલ સાહેબ, મા. શ્રી નટવરસિંહજી, શ્રી પ્રવિણભાઇ મણિયાર, શ્રી નરેન્દ્ર મોદી તથા સંઘ સાથીઓ...

વાસુદેવરાવની વાચનમાં રુચિ હતી. અંગ્રેજી વાચનની પણ ફાવટ હતી. પ્રારંભમાં કાર્યની સાથેસાથે બસમાં કે રેલવેમાં પ્રવાસ દરમ્યાન વાચનભૂખ સંતોષતા. વાચન દ્વારા સ્વ-વિકાસની મથામણ ચાલુ રાખતા.

પ્રચારક-જીવનનો ઘણો સમય સૌરાષ્ટ્રના જુદાજુદા જિલ્લાઓમાં કાર્યરત રહ્યા. બધા વરિષ્ઠ પ્રચારકો માટે તેમનો પરિશ્રમ કરનાર અને નિર્ધારિત કાર્ય પૂરું કરનાર એક પુરુષાર્થી પ્રચારક તરીકે અનેક યુવાનોમાં આદરનું સ્થાન તેમણે પ્રાપ્ત કર્યું. સાહસિક યુવાનો માટે જૂનાગઢમાં ગિરનાર પર્વત ચઢી જવાની સ્પર્ધાઓ તો જાણે તેમના સંઘકાર્યનો હિસ્સો જ બની ગઈ હતી.

વાસુદેવરાવની કાર્ય કરવાની અનેક વિશેષતાઓ હતી. તેઓ સંઘ-પ્રચારકોની સામાન્ય બીબાઢાળ જીવનશૈલીથી સાવ જ જુદા હતા. વ્યક્તિગત જીવનમાં તદ્દન ઓલિયા. માથાના વાળ ઓળવા જ જોઈએ એવું લાગે જ નહીં. લઘરવગર કપડાં, જાડા-જાડા કાચનાં ચશ્માં, વેરવિખેર વાળ, ફાટ્યાં-તૂટ્યાં ચપ્પલ... બધું જ અલગારી. વ્યક્તિગત જીવનમાં જેટલા અવ્યવસ્થિત, સંઘજીવનમાં એટલા જ વ્યવસ્થિત. સંઘકાર્ય-પ્રણાલીનાં બધાં જ અંગ-ઉપાંગો બાબતે ખૂબ જ આગ્રહી. ક્યારેય કોઈ બાંધછોડ કરવાની જ નહીં. નક્કી થયેલાં કામ થાય, પરંતુ તે પણ નક્કી થયેલી પદ્ધતિથી થાય તેવો આગ્રહ રાખે. વાસુદેવરાવજીના જીવનમાં સંઘકાર્ય માટેનો આગ્રહ, પદ્ધતિનો આગ્રહ, નિયમિતતા – સઘળું પ્રાથમિકતાના ધોરણે, પરંતુ સ્નાન, ભોજન, સૂવાનો સમય, છાપાં વાંચવાં વગેરે બધી જ બાબતોને સમયનું કોઈ જ બંધન નહીં. ઘણી વાર રાત્રે એક વાગ્યે કપડાં ધોવાનો અવાજ આવે તો બધા સમજી જાય કે વાસુદેવરાવે પોતાનાં દિવસભરનાં બાકી કામ પૂરાં કરવાનું ચાલુ કર્યું લાગે છે.

એ સમયની સંઘની મુખ્ય ટીમમાં અનંતરાવજી એમના મધુર કંઠ માટે જાણીતા હતા, જ્યારે વાસુદેવરાવને કંઠ, રાગ કે લય સાથે કોઈ નાતો નહીં. પરંતુ સંઘકાર્યમાં સંસ્કાર-પ્રક્રિયામાં સંઘગીત, સંઘના સાંઘિક ગીત વગેરેનું વૈજ્ઞાનિક મહત્ત્વ છે. સામૂહિક ગાન ટીમના નિર્માણ માટે ઉદ્દીપકનું કામ કરી શકે છે તે વાત સંઘજીવનમાં પુરવાર થઈ છે. વાસુદેવરાવ આ વાતને બરાબર સમજે. પોતાનો કંઠ હાંસીપાત્ર હોવા છતાં વ્યક્તિગત રીતે ટીકાનો ભોગ બનવાનું પસંદ કરીને પણ ગીતનો આગ્રહ છોડે નહીં. પોતાના બેસૂરા કંઠે પણ ગીતની પરંપરા જાળવી અનેક નવા તરવરિયા જુવાનોને દેશભક્તિનાં ગીતોના રંગે રંગી દીધા.

સંઘકાર્યમાં બેઠકનું આગવું મહત્ત્વ છે. સામૂહિક ચિંતન, સામૂહિક નિર્ણય, સામૂહિક જવાબદારી એ સંઘકાર્યની આગવી વિશેષતા છે. એક પ્રકારે એ સંઘશક્તિનું મહત્ત્વનું અંગ છે. પરિણામે સંઘમાં બેઠકોનો ક્રમ, બેઠકોના સમયનું પ્રમાણ ઘણું હોય છે. સંઘની બેઠકોમાં ઝીણામાં ઝીણી બાબતોની ખૂબ જ ઝીણવટપૂર્વક ચર્ચા કરવાની પરંપરા વિકસી છે. વાસુદેવરાવ હોય અને સંઘની બેઠકમાં ઉત્તેજના ન વ્યાપે એવું ક્યારેય બને નહીં. સમગ્ર બેઠકની મુખ્ય ધારા તદ્દન નવા જ મૌલિક વિચારો તેઓ બેધડક મૂકે. નિર્ણય થતાં સુધી ખૂબ ઉત્તેજિત થઈ પોતાના વિચારો પ્રતિપાદિત કરતા જ રહે. ઘણી વાર બેઠક લંબાઈ પણ જાય. આવી ઉત્તેજનાપૂર્ણ બેઠકમાં વાસુદેવરાવને સાંભળવા એ એક લહાવો રહેતો. તેમના તર્કમાં મૌલિકતા હોય, વિચારોની ધાર હોય, વસ્તુસ્થિતિની છણાવટ હોય. ઘણી વાર એવું બનતું કે પ્રારંભમાં સ્વીકારવા યોગ્ય ન લાગતાં તેમનાં સૂચનો બેઠકનો અંત આવતાં સ્વીકારાઈ જાય.

સંઘની લાંબી ચાલતી બેઠકો ક્યારેક કંટાળાજનક પણ બની જાય. અનેક વાર આવે સમયે વાસુદેવરાવની યાદ આવ્યા વગર ન રહે. ગમે તેવી ઉત્તેજનાપૂર્ણ બેઠક હોય, ગમે તેવી કંટાળાજનક બેઠક ચાલતી હોય, પરંતુ વચ્ચેવચ્ચે વાસુદેવરાવની મૌલિક ટીખળ ગંભીરમાં ગંભીર વિષયને હળવો-ફૂલ બનાવી દે.

પ્રચારક-જીવનનો ઘણો સમય સૌરાષ્ટ્રના જુદાજુદા જિલ્લાઓમાં કાર્યરત રહ્યા. બધા વરિષ્ઠ પ્રચારકો માટે તેમનો પરિશ્રમ કરનાર અને નિર્ધારિત કાર્ય પૂરું કરનાર એક પુરુષાર્થી પ્રચારક તરીકે અનેક યુવાનોમાં આદરનું સ્થાન તેમણે પ્રાપ્ત કર્યું. સાહસિક યુવાનો માટે જૂનાગઢમાં ગિરનાર પર્વત ચઢી જવાની સ્પર્ધાઓ તો જાણે તેમના સંઘકાર્યનો હિસ્સો જ બની ગઈ હતી.

વાસુદેવરાવ હાજરજવાબી હતા. વકીલસાહેબ - લક્ષ્મણરાવજી ઇનામદાર જ્યારે પ્રાંતપ્રચારક તરીકે એક બેઠક લઈ રહ્યા હતા ત્યારે વાસુદેવરાવના કાર્યક્ષેત્રનો અહેવાલ નિયમિત નથી મળતો તેવી ટકોર કરી. હાજરજવાબી વાસુદેવરાવે કહ્યું, 'વકીલસાહેબ, આજકાલ સંઘકાર્યમાં ટપાલોનું પ્રમાણ વધી ગયું છે, તેથી મેં નિયમ બનાવ્યો છે કે છાપેલો પત્ર હોય તો ખોલવાની જરૂર નહીં, ટાઈપ કરેલો પત્ર ખોલીએ પણ ન વાંચીએ તો ચાલે અને

હાથે લખેલો પત્ર હોય તો અગત્યનો છે તેમ માની વાંચીને તરત જ અમલ કરું છું.' વાસુદેવજીની આ હાસ્યસભર રજૂઆત બહુ જ મૌલિક હતી. વકીલસાહેબ પણ પેટ પકડીને હસી પડ્યા.

વાસુદેવરાવને વાહનવ્યવહારમાં સાઈકલ, બસ અને રેલવે જેવાં યાતાયાતનાં સાધનો સિવાય કોઈ રુચિ નહીં. તેઓ કાર, મોટરસાઈકલ કે ગાડી ચલાવતાં શીખે તે માટે બધાના પ્રયત્નો નિષ્ફળ ગયા. ૬૦-૬૫ વર્ષની ઉંમરે પણ તેઓ સાઈકલ ચલાવવાનું જ પસંદ કરે. પોતાનાથી જુનિયર સહુને માટે સ્કૂટર, મોટરસાઈકલનો પ્રબંધ કરે, પણ પોતાના માટે સાઈકલથી વધુ કશું જ નહીં.

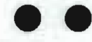
વાસુદેવરાવ જીવનનો મોટો ભાગ સૌરાષ્ટ્રમાં કાર્યરત રહ્યા. ઘણાં વર્ષો પછી દક્ષિણ ગુજરાતમાં તેમને કાર્યની જવાબદારી સોંપાઈ. એક વાર નવા કાર્યક્ષેત્રના અનુભવો બાબતે વાતચીત નીકળી. સહજભાવે તેમણે સૌરાષ્ટ્ર અને દક્ષિણ ગુજરાતની વિશેષતા વર્ણવી દીધી. વાસુદેવરાવે કહ્યું કે 'સૌરાષ્ટ્રમાં બે વાહનો અથડાય અને વાહનોને કોઈ નુકસાન પણ ન થયું હોય તેવી ઘટના સાવ સામાન્ય હોય, પણ બંને ચાલકો નીચે ઊતરી બાખડ્યા વગર રહે નહીં. વાહનને નુકસાન તો ન થયું હોય, તો પણ ચાલકોમાંથી કોઈકનું માથું ફૂટ્યું હોય કે દાંત પડ્યા હોય.' દક્ષિણ ગુજરાતનું વર્ણન કરતાં કહે કે 'અહીં બે વાહનો અથડાયાં હોય, બંનેને ખાસું નુકસાન થયું હોય, વાહનનો ભૂકો બોલી ગયો હોય, પરંતુ બંને ચાલકો એકસાથે બોલી ઊઠે : જો... ભાઈ... તારી પણ ભૂલ છે ને મારી પણ ભૂલ છે... અને જોતજોતામાં બધુ શાંત થઈ જાય. જાણે કશું બન્યું જ નથી.'

સંઘ-પરિવારમાં વિવિધ ક્ષેત્રોના કાર્યના વિકાસ માટે કાર્ય-પ્રારંભમાં સંઘના પ્રચારકો રુચિ લે, માર્ગદર્શન આપે, મદદ પણ કરે. પરંતુ વાસુદેવરાવજી અન્ય ક્ષેત્રોના વિકાસની વાતને સ્વીકારે ખરા, પરંતુ સંઘકાર્યના ભોગે હરગિજ નહીં. તેથી તેઓ ક્યારેય વિવિધ ક્ષેત્રોમાં થતાં કાર્યોમાં રસ જ ન લે. અર્જુનની જેમ સંઘકાર્યમાં જ તેઓ ખૂંપેલા રહેતા.

વાસુદેવરાવે પોતાની બાબતે વધારે પડતી ઉદાસીનતા સેવી હતી. પરિણામે શરીર ક્ષીણ થઈ ગયું. પેટની ગંભીર બીમારીઓએ તેમને અસહાય બનાવી દીધા. ઘણાં વર્ષો સુધી નિકટના સાથીઓને પણ તેમની બીમારીની ખબર સુધ્ધાં ન પડવા દે. કાર્યને પૂરી લગનથી ખેંચી રાખે. બીમારી વચ્ચે પણ શારીરિક શ્રમમાં કોઈ કમી નહીં. મૂળ સૌરાષ્ટ્રના, જીવનનો અતિમહત્ત્વનો સમય સૌરાષ્ટ્રમાં વિતાવેલો, સેંકડો કુટુંબો તેમની ભક્તિપૂર્વક સેવા કરવા માટે આતુર, પરંતુ વાસુદેવરાવે બીમારી વચ્ચે પણ ભરૂચમાં જ પોતાનું કેન્દ્ર રાખી, બીમારી સામે સંઘર્ષ આદર્યો. પથારીવશ થવું પડ્યું તોપણ તેઓ વચ્ચે બેચાર દિવસ તબિયત સારી લાગે તો કામ હાથમાં લઈ લે. કાર્ય માટેનું આ ઉચ્ચ કક્ષાનું સમર્પણ હતું.

જીવનના અંતકાળ સુધી તેમનું મન સંઘમાં રમમાણ રહ્યું. આજના જમાના પ્રમાણે વાસુદેવરાવની વિદાય ઘણી વહેલી ગણાય. તેમના સહકાર્યકરોની એક આખી પેઢી આજે પણ વાસુદેવરાવની ખોટ અનુભવે છે.

સંઘ-પરિવારના આ વિશાળ વટવૃક્ષની છાયામાં બેઠેલા આપણે સહુ તેમના ઋણી છીએ.

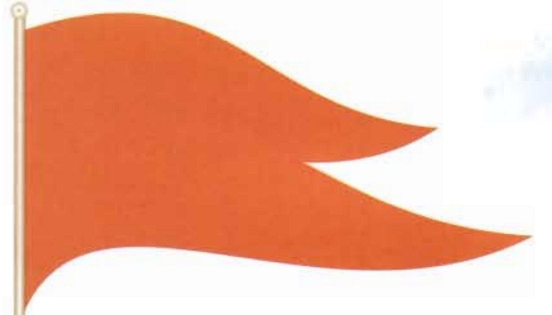



જૈન દેરાસર - પાલીતાણા - ભાવનગર

આદર્શને પૂજો, વ્યક્તિ કે ગ્રંથને નહિ



આ જીવંત પ્રતીકને સંઘે
પોતાના પથપ્રદર્શક ગુરુ તરીકે સ્વીકાર્યો છે.
ડૉક્ટરજીએ આ ભગવા ધ્વજને
આપણા ગુરુ, આપણા આદર્શ તરીકે રજૂ કર્યો
ત્યારે સાથીઓ પૈકી કેટલાકની ભમરો ખેંચાઈ હતી.
રક્ત અને માંસના બનેલા
ડૉક્ટરજીના પોતાના સ્વરૂપમાં
આદર્શને જોઈ ચૂકેલા હોઈ,
તેમણે પૂછ્યું, "આપણા આદર્શ તરીકે
ડૉક્ટરજીને જ શા માટે ન અપનાવવા ?"
આપણા સંસ્થાપકે તો
સંગઠનની ભાવના સાથે સંવાદ સાધીને,
અમર અવિનાશી ભગવા ધ્વજની જ
આપણા આદર્શ તરીકે પ્રતિષ્ઠા કરી.
કોઈ પણ વ્યક્તિ, તે ગમે તેટલી મહાન હોય
તો પણ, રાષ્ટ્રના આદર્શનું સ્થાન લઈ ન શકે.
ગમે તેવી તોય વ્યક્તિ એ તો
રાષ્ટ્રના અનંત પ્રવાહમાં વહી જતી એક શાંત હસ્તી છે.
ગમે તેટલી મહાન હોવા છતાં
કોઈ એક વ્યક્તિ, સૈકાઓ દરમિયાન
ખીલતા રહેનારા રાષ્ટ્રના પરિપૂર્ણ સૌંદર્ય અને
સુગંધનો એકાદ ખંડ યા અંશને ઝીલી શકે.
વધારામાં, તેવી અપેક્ષા રાખવી પણ નિરર્થક છે કે
બધા જ લોકો કોઈ એક વ્યક્તિ
પછી ગમે તેટલી ઉમદા અને શક્યતાઓથી
ભરેલી હોવા છતાં તેને માટે
સમાન આદરભાવ સેવશે.
કેટલાક લોકો શ્રીરામને પોતાના
ઇષ્ટદેવતા તરીકે આરાધે છે,
જ્યારે બીજા કેટલાક
શ્રીકૃષ્ણને પરમેશ્વર તરીકે પૂજે છે
અને બીજા બીજાને.
તેથી સંઘે એવું પ્રતીક રાખ્યું છે કે
જેની પ્રેરકતા સર્વવ્યાપી છે.



- પ. પૂ. શ્રી ગુરુજી

૧૬

પાનખર વિનાની વસંત
શ્રી વસંતરાવ ચીપલોણકર



 મા. શ્રી વસંતરાવ ચીપલોણકર 

ગુજરાતમાં સંઘજીવનનો પાયો મજબૂત કરનારા અનેકો પૈકીના એક એટલે વસંતરાવ ચીપલોણકર. એમણે જીવનભર ઉઠાવેલી વિટંબણાઓ, અગવડો, કષ્ટો, તકલીફોની ભરમાર બેસુમાર હતી. તેમના જીવન તરફ સહેજ નજર કરીએ તો લાગે કે એમનામાં એવી કઈ ઊર્જા હતી કે જેના કારણે કાયમ હસતા મોઢે સૌને હસાવતા-હસાવતા જીવન જીવી ગયા હશે ! જીવન તરફ જોવાનો એમનો દૃષ્ટિકોણ ખૂબ અદ્‌ભુત હતો. તેઓ હંમેશાં કહેતા કે સુખી જીવનનો પાયાનો સિદ્ધાંત એક જ છે - ક્યારેય કોઈ અપેક્ષા રાખવી નહીં અને ક્યારેય કોઈ ફરિયાદ કરવી નહીં. અપેક્ષા પણ નહીં, ફરિયાદ પણ નહીં. સીધો-સાદો લાગતો આ સરળ નિયમ એમના જીવનમાં એવો ગૂંથાઈ ગયેલો હતો કે જેના કારણે દરેક પરિસ્થિતિને તે આનંદથી જીવી લેતા હતા.

સૂર્ય, વાદળ, ગ્રહ, નક્ષત્રો, મારા આભમાં ઇન્દુ છું.
મને સદા ગૌરવ છે કે માનવ છું ને હિન્દુ છું.





શ્રી સંતરામ મંદિર – નડીયાદ

બહુ ઓછાં જીવન એવાં હોય છે કે જેમને ક્યારેય પાનખરનો અનુભવ થતો નથી. કુદરતને કારણે જ કાયમ વસંતનો વાસ હોય છે એવું નથી હોતું. માનવી જો સાચા અર્થમાં સ્થિતપ્રજ્ઞની અવસ્થા પામી શકતો હોય તો જ પાનખર પ્રવેશી શકતી નથી.

'વિચાર માટે ખપી જવું' એ કોને કહેવાય એ 'સાધના' માટેની વસંતરાવની સાધનામાંથી જોવા મળે. જીવનમાં પ્રત્યેક ચીજને વિનોદથી ભરી દેવી અને સમગ્ર જીવન હરીભરી વસંતથી ભરેલું અનુભવવું એ એમની જીવનશૈલીની વિશેષતા હતી. 'સાધના'ના કાર્યકાળ દરમ્યાન એમની આ રમૂજી વૃત્તિનાં દર્શન ડગલે ને પગલે થતાં હતાં.

રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના પ્રચારક શ્રી વસંતરાવ ચીપલોણકરનું સમગ્ર જીવન જોઈએ તો એમ લાગે કે વસંતરાવની આ એવી વિશેષતા હતી કે જેમાં પાનખર પ્રવેશી જ ના શકે. મહારાષ્ટ્રના આકોલાના વતની વસંતરાવે ૮૦ વર્ષની વયે વિદાય લીધી. લગભગ ૬ દાયકા જેટલો સમય ગુજરાતમાં આર. એસ. એસ.ના પ્રચારક તરીકે એમણે ખપાવી દીધો. ૬ દાયકાનું આ જીવન સાચા અર્થમાં એક તપસ્યારૂપ હતું અને અનેક અગ્નિપરીક્ષાઓમાંથી ઉત્તીર્ણ થયેલું, તપાયેલું જીવન હતું.

આર. એસ. એસ.ના ગુજરાતના પ્રારંભિક સમયગાળામાં સંઘકાર્ય સાવ અપરિચિત હતું. સંગઠનના નામથી લઈને તેનો વિચાર, તેની કાર્યપદ્ધતિ - બધું જ ગુજરાત માટે નવું હતું, નોખું હતું. એવા સમયમાં ગુજરાતમાં સંઘજીવનનો પાયો મજબૂત કરનારા અનેકો પૈકીના એક એટલે વસંતરાવ ચીપલોણકર. એમણે જીવનભર ઉઠાવેલી વિટંબણાઓ, અગવડો, કષ્ટો, તકલીફોની ભરમાર બેસુમાર હતી. તેમના જીવન તરફ સહેજ નજર કરીએ તો લાગે કે એમનામાં એવી કઈ ઊર્જા હતી કે જેના કારણે કાયમ હસતા મોઢે સૌને હસાવતા-હસાવતા જીવન જીવી ગયા હશે ! જીવન તરફ જોવાનો એમનો દૃષ્ટિકોણ ખૂબ અદ્‌ભુત હતો. તેઓ હંમેશાં કહેતા કે સુખી જીવનનો પાયાનો સિદ્ધાંત એક જ છે - ક્યારેય કોઈ અપેક્ષા રાખવી નહીં અને ક્યારેય કોઈ ફરિયાદ કરવી નહીં. અપેક્ષા પણ નહીં, ફરિયાદ પણ નહીં. સીધો-સાદો લાગતો આ સરળ નિયમ એમના જીવનમાં એવો ગૂંથાઈ ગયેલો હતો કે જેના કારણે દરેક પરિસ્થિતિને તે આનંદથી જીવી લેતા હતા.

વિશ્વભરમાં વિશાળ સંગઠન તરીકે જેની ઓળખ છે, એવા આર. એસ. એસ.ના સંગઠનના વ્યાપ અને વિસ્તારના મૂળમાં વસંતરાવ જેવાં જીવનોનાં લોહી-પસીનાની સુવાસ છે. વસંતરાવ એમના પ્રારંભિક કાળમાં સાબરકાંઠામાં આર. એસ. એસ.ના કાર્યનો પ્રારંભ કરવા ગયા હતા. ઇડર અને હિંમતનગરમાં કામ ઊભું કરવાની નેમ હતી. અહીંયાં કામની શરૂઆત કરવા માટે કોઈ આશરો નહોતો. ઇડરમાં થેલી મૂકવા માટે પણ ક્યાંય જાણીતી જગ્યા નહોતી. પ્રવાસ માટે પૈસા નહોતા. ભોજનનો કોઈ પ્રબંધ નહોતો. આવી પરિસ્થિતિમાં પણ નિરાશ થયા વગર ફાટ-ફાટ થતી જવાની લઈને એમણે કામનો આરંભ કર્યો. સંઘકાર્ય શરૂ કરવા માટે એક દિવસ હિંમતનગર સંઘની શાખા લગાવે, પાંચ-પચાસ બાળકોને શાખાની અંદર ખેંચી લાવે અને ત્યાંની શાખાનું કામ આટોપી હિંમતનગરથી ઇડર ક્યારેક ચાલતા તો ક્યારેક દોડતા - પગપાળા જાય, કારણ, બસમાં જવા માટે પૈસા નહોતા. લગભગ ૨૮ કિલોમીટરનો પગપાળા પ્રવાસ એ દર આંતરા દિવસનો ક્રમ બની ગયો હતો. ઇડરમાં જઈને સંઘકાર્ય કરવાનું અને ઇડરની ભેખડોની અંદર વિશાળકાય પથ્થરોમાંથી બનેલી કુદરતી ગુફાઓ વચ્ચે રાતવાસો કરવાનો. રાંધેલું ભોજન શક્ય ન હોવાને કારણે બજારમાંથી બાજરાનો લોટ લઈને કોરો લોટ પાણીમાં પલાળીને તેને પી જવાનો. મહિનાઓ સુધી આવી તપશ્ચર્યા કરીને સંઘકાર્યનો



પાયો નાંખવાનો એમણે પ્રયાસ કર્યો. થોડા સમય માટે વસંતરાવને નડિયાદમાં પણ સંઘકાર્યની જવાબદારી મળી. ત્યાં રહેવા માટે સંતરામ મંદિરમાંથી એક ઓરડી પણ મળી ગઈ અને સંઘકાર્યનો વ્યાપ ધીરેધીરે વધવા લાગ્યો.

નડિયાદમાં શાખામાં આવનારા એક-બે સ્વયંસેવકો શાકભાજીના વ્યવસાય સાથે જોડાયેલા હતા, તેથી ક્યારેક-ક્યારેક અતિઉત્સાહમાં વસંતરાવને ભેટમાં શાકભાજી આપે. સ્વયંસેવકો એમ માનતા હતા કે શાકભાજી એમને ખાવા માટે કામમાં આવશે. પરંતુ તેમને ખબર નહોતી કે શાકભાજી સાથે ખાવા માટે એમની પાસે કશું જ નહોતું. ઘણું કરીને કાચાં કોબી, ફ્લાવર, ટમેટાં, ડુંગળી એ જ સંપૂર્ણ આહાર રહેતો. એકાદ મહિના પછી આ શાકભાજી આપનારા સ્વયંસેવકોને ખબર પડી, તો તેમને આશ્ચર્ય થયું કે આટલી મોટી કઠોર તપશ્ચર્યા ! અને ક્યારેય કોઈ વાર અણસાર પણ ન આવવા દીધો ! અને એમાંથી એમના માટેની સેવાભાવના જાગી, લાગણીઓ બંધાણી અને ધીરેધીરે અઠવાડિયામાં બે, ત્રણ, ચાર દિવસ કોઈ ને કોઈ એમને પોતાને ઘરે લઈ જઈને જમાડવા લાગ્યા.

વસંતરાવ જેમ કર્મવીર હતા, તેમ જ્ઞાનમાર્ગી પણ હતા. મૂળ તો મરાઠીભાષી. એમની માતૃભાષા મરાઠી હતી, પરંતુ ગુજરાતી ભાષા ઉપર એમણે ખૂબ જ સારી પકડ જમાવી હતી. ભાષાશુદ્ધિ, જોડણીશુદ્ધિ એ બધી બાબતોમાં અનેક પ્રકારે તેઓ સંઘવર્તુળમાં અધિકૃત વ્યક્તિ તરીકે સ્વીકૃતિ પામ્યા હતા. જ્ઞાન પ્રત્યેની એમની આ રુચિના કારણે સંઘમાં એમને 'સાધના' સાપ્તાહિકની એક વિચારપત્રિકા માટેની કામગીરીની જવાબદારી સોંપાણી. સાઇકલ ઉપર ફરીફરીને 'સાધના'નો પ્રચાર અને પ્રસાર કેમ થાય, 'સાધના'ના વાચકો કેમ વધે, જાહેરખબરો મેળવીને 'સાધના'ને આર્થિક રીતે પગભર કેમ કરી શકાય - આ કામ લગભગ ૨૫ વર્ષ સુધી તેઓ કરતા રહ્યા.

વસંતરાવ જ્ઞાનમાર્ગી હોવાને કારણે જ્ઞાન-ઉપાસનાને પણ વરેલા હતા. 'સાધના'ની જવાબદારી મળતાં જ પોતાની જાતને એ કાર્યને યોગ્ય બનાવવા આવશ્યક ગુણવૃદ્ધિની તપસ્યા તેમણે આદરી. પોતાને મળેલ જવાબદારી સુપેરે પાર પાડવા માટે તેમણે ૪૫ વર્ષની ઉંમરે પત્રકારિતાનો વિધિવત્ અભ્યાસ કર્યો. ૧૮-૨૦ વર્ષની ઉંમરના વિદ્યાર્થીઓ વચ્ચે બેન્ચ પર બેસીને ભણવા માટે ઘણી મોટી હિંમત જોઈએ. કાર્ય પ્રત્યેની અપાર નિષ્ઠા જ આવી હિંમત આપી શકે.

વસંતરાવ અનેક પ્રકારે 'જહાં કમ, વહાં હમ' એવા મંત્રને ચરિતાર્થ કરતા હતા. પ્રવાસ દરમ્યાન રિપોર્ટરની જેમ સમાચારો પણ પહોંચાડે, વિચારકણિકાઓ પણ બનાવે અને ક્યારેક પ્રવાસમાંથી પાછા આવીને સંપાદનનું કામ પણ કરે. પ્રૂફ-રીડરનું કામ પણ કરે, તો ક્યારેક 'સાધના'ને પોસ્ટ કરવા માટે એના ઉપર રેપર અને સ્ટૅમ્પ લગાવવા પણ બેસી જાય. સાઇકલ ઉપર બંડલો બાંધીને પહોંચાડવાની જવાબદારી પણ પૂરી કરે.

વસંતરાવ ઓલિયા જેવું જીવન જીવતા હતા. એક પ્રકારે બંધનોથી મુક્ત નિજાનંદનું જીવન હતું. એના પરિણામે એમના ભુલકણા સ્વભાવની ઘટનાઓએ સંઘીય જીવનમાં સેંકડોની સંખ્યામાં રમૂજી કિસ્સાઓની ભરમાર ઊભી કરી દીધી હતી.

'વિચાર માટે ખપી જવું' એ કોને કહેવાય એ 'સાધના' માટેની વસંતરાવની સાધનામાંથી જોવા મળે. જીવનમાં પ્રત્યેક ચીજને વિનોદથી ભરી દેવી અને સમગ્ર જીવન હરીભરી વસંતથી ભરેલું અનુભવવું એ એમની જીવનશૈલીની વિશેષતા હતી. 'સાધના'ના કાર્યકાળ દરમ્યાન એમની આ રમૂજી વૃત્તિનાં દર્શન ડગલે ને પગલે થતાં હતાં.

એક વાર 'સાધના' સાપ્તાહિકમાં બે ફોટા પ્રગટ થયા હતા. એક ફોટો બિહારમાં સાધુ-મહાત્માઓના સંમેલનનો હતો, જેમાં શરીરે તંદુરસ્ત એવા મહાત્માઓ મંચ શોભાવતા હતા. બાજુમાં બીજો એક ફોટો એવો હતો કે જેમાં ઓરિસ્સાના ભયંકર દુષ્કાળથી પીડિત માનવસમૂહનાં દૃશ્યો હતાં. તંત્રીવિભાગની ભૂલના કારણે બંને ફોટાના નીચેનાં કૅપ્શન અરસપરસ બદલાઈ ગયાં હતાં. હૃષ્ટપુષ્ટ સાધુ-મહાત્માઓના ફોટા નીચે લખ્યું હતું : 'ઓરિસ્સાના દુષ્કાળપીડિતો' અને દુષ્કાળપીડિતોના ફોટા નીચે લખ્યું હતું : 'સાધુ-મહાત્માઓનું સંમેલન.' એ વખતે રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘના ગુજરાતના પ્રાંતપ્રચારક શ્રી વકીલસાહેબે વસંતરાવને ટકોર કરી કે વસંતરાવ, આવી ભૂલ કેમ ? તો વસંતરાવે

હળવાશથી રમૂજમાં જવાબ આપ્યો કે વકીલસાહેબ, પ્રૂફરીડિંગની જવાબદારી મારી છે. જોડણીમાં કંઈ ભૂલ હોય તો મારું ધ્યાન દોરો. ગંભીરમાં ગંભીર વાતને સહજતાથી વિનોદમાં કેમ લેવી એ એમને સારી પેઠે આવડતું હતું.

'સાધના' સાપ્તાહિક માટેની અજોડ સાધનાના જીવનવ્રતી વસંતરાવ બુધવારે 'સાધના' પ્રગટ થાય તે માટે ભારે જહેમત કરતા. સોમથી બુધ એટલે જાણે શ્વાસ લેવાની ફુરસદ ના હોય. આર્થિક મુશ્કેલીઓ વચ્ચે જીવતા 'સાધના' માટે પ્રૂફરીડર રાખવો પણ પાલવે નહીં, ત્યારે વસંતરાવ સબ બંદર કા વ્યાપારીની જેમ પ્રૂફ જુએ, પાનાં પાડે, ફાઈનલ પ્રૂફ જુએ ત્યારે 'સાધના' અવતરે.

વસંતરાવ ઓલિયા જેવું જીવન જીવતા હતા. એક પ્રકારે બંધનોથી મુક્ત નિજાનંદનું જીવન હતું. એના પરિણામે એમના ભુલકણા સ્વભાવની ઘટનાઓએ સંઘીય જીવનમાં સેંકડોની સંખ્યામાં રમૂજી કિસ્સાઓની ભરમાર ઊભી કરી દીધી હતી. વસંતરાવના જીવનની રમૂજી ઘટનાઓ એક વાર કહેવાની શરૂ થાય તો કલાકો સુધી કાર્યાલયમાં હાસ્યની છોળો ઊડે. અને ક્યારેક વસંતરાવ પોતે પણ આવી રમૂજી ઘટનાઓમાં સ્વયં પણ ભાગીદાર બનીને આનંદની ઊંચાઈને વધારી દેતા.

એમનો ભુલકણો સ્વભાવ એવો હતો કે કોઈના પણ ઘરે જાય અને ત્યાં જે ચાવીઓ પડી હોય તેને રમાડવા માંડે અને ઊઠતી વખતે ખિસ્સામાં લઈને ચાલવા માંડે. કાર્યાલયમાં એમના કબાટમાં એટલી બધી ચાવીઓના ઢગલા થઈ જાય કે ક્યારેય ખબર ન પડે કે કોના ઘરની ચાવી લઈ આવ્યા છે. ઘરના લોકો પણ પરેશાન થઈ જાય કે ચાવી ક્યાં ગઈ ? આવી બે-પાંચ કિલો ચાવીઓ એમના કબાટમાંથી મળવી, એ સહજ બાબત હતી. જેમ-જેમ લોકોને વસંતરાવની આ આદતની ખબર પડવા માંડી તેમ-તેમ જ્યારે વસંતરાવ કોઈના ઘરે જાય ત્યારે યજમાન પહેલું કામ એ કરે કે ક્યાંય ચાવી તો પડી નથી ને ? જો પડી હોય તો ચાવીઓ બધી ઠેકાણે મૂકી દે.

વસંતરાવનું હાજરજવાબીપણું પણ એવું હતું કે એક વાર વકીલસાહેબ આકોલાથી પ્રવાસ કરીને પાછા આવતા હતા. વસંતરાવનાં માતુશ્રી આકોલા રહેતાં હતાં અને રાષ્ટ્રીય સેવિકા સમિતિનાં એક સમર્પિત કાર્યકર્તા હતાં. વકીલસાહેબ એમને મળીને આવ્યા હતા. સ્ટેશન પરથી પાછા ફરતાં કાર્યાલયમાં પ્રવેશતાં વસંતરાવ સામે મળ્યા. એમણે કહ્યું કે 'તમારાં બા મળ્યાં હતાં. બા ચિંતા કરતાં હતાં. તમે તેમને પત્ર લખતા નથી.' તો વસંતરાવે કહ્યું કે 'વકીલસાહેબ, એવું



હોતું હશે ? હું પત્ર તો નિયમિત લખું છું, પણ પોસ્ટ કરવાનું ભૂલી જાઉં છું.' એમ કહીને કબાટમાંથી ચાલીસેક લખેલા પત્રો પડી રહેલા એમણે બતાવ્યા.

વસંતરાવ 'સાધના'ના કાર્યમાંથી મુક્ત થઈને પ્રત્યક્ષ સંઘકાર્યમાં ફરીથી સક્રિય થયા, ત્યારે 'સાધના' સાપ્તાહિકના ટ્રસ્ટીઓએ એમનો વિદાયસમારંભ રાખ્યો હતો. લગભગ ૨૫-૩૦ વર્ષની સળંગ કામગીરી પછી વસંતરાવ 'સાધના' છોડી રહ્યા હતા, તેથી 'સાધના' સાપ્તાહિકે વિચાર કર્યો કે એમને વિદાયમાં ઘડિયાળ ભેટ આપીએ. એક પ્રકારે ૨૫-૩૦ વર્ષ એક જગ્યાએ કામ કરીને જવાનું હોય તો વાતાવરણ અતિગંભીર હોય. વસંતરાવ પોતાના સન્માનનો પ્રત્યુત્તર આપવા ઊભા થયા ત્યારે એમણે કહ્યું કે, 'મેં ૨૫-૩૦ વર્ષ કામ કર્યું, પણ આપણા 'સાધના' સાપ્તાહિકના ટ્રસ્ટી શ્રી રમણભાઈ મને હજુ ઓળખી શક્યા નથી. જો તેઓ મને ઓળખી શક્યા હોત તો મને ઘડિયાળ ભેટમાં ન આપ્યું હોત, પરંતુ કૅલેન્ડર ભેટ આપ્યું હોત, કારણ, મારે સમયના ગોટાળા નથી થતા, તારીખના ગોટાળા થાય છે.' થતું પણ એવું કે વસંતરાવને મંગળવારે જવાનું હોય ત્યાં કાં તો સોમવારે પહોંચી જાય, કાં બુધવારે જઈને ઊભા રહે. પોતાના જીવનનું આ ઓલિયાપણું હતું, એને પણ એમણે આટલી સહજ રીતે પોતાના જીવન સાથે અને સાથીઓનાં જીવન સાથે પણ જોડી દીધું હતું. આથી જ ક્યારેય કોઈને ખૂંચતું નહોતું.

વસંતરાવ એક વાર બીમાર પડ્યા અને કમરથી એકદમ વાંકા વળી ગયા અને લગભગ ૯૦ ડિગ્રી વાંકા રહી જમવું, બેસવું, ઊઠવું, ચાલવું પડતું. એક વાર સંઘના અધિકારી આ દિશામાં પ્રવાસમાં આવ્યા અને વસંતરાવને વ્હીલચેરમાં બેઠેલા અને કમરેથી ૯૦ ડિગ્રી બેવડ વળેલા જોઈને એમને બહુ જ દુઃખ થયું. બહુ જ લાગણીસભર રીતે એમણે પૂછ્યું કે 'વસંતરાવ, આ શું થઈ ગયું ? તમે ટટ્ટાર ઊભા પણ રહી શકતા નથી !' તો એમનો તરત જ સહજ જવાબ હતો કે, 'હિંદુ રાષ્ટ્રનું સંગઠન કરવું હોય તો ઝૂકવું તો પડે જ ને ?' પોતાની પીડાને પણ તાત્ત્વિક અધિષ્ઠાન આપવું, શારીરિક પીડાને પણ જીવનના આનંદનો હિસ્સો બનાવી દેવો, એના માટે પોતાના જીવનનો પોતે સાક્ષાત્કાર કરવો પડતો હોય છે. અને કદાચ વસંતરાવ જીવનનો સાક્ષાત્કાર કરનાર એક નોખા માનવી હતા.

વસંતરાવ કોઈના પણ રૂમમાં કોઈ મીટિંગ વખતે રોકાયા હોય તો નિશ્ચિત જ હોય કે એ રૂમમાં બીજા જેટલા પણ લોકો હોય, એમાં કોઈનું શર્ટ ગયું હોય, કોઈનો ટોવેલ જતો રહ્યો હોય. એટલે બધાને જ ખબર હોય કે આવું કાંઈ ઓછું થયું હોય તો વસંતરાવની બૅગ તપાસો; અને ખરેખર બને પણ એવું કે વસંતરાવે જ એમાં મૂકી દીધું હોય. કોઈ એમને એમના ભુલકણા સ્વભાવની વાત કરે તો કહે કે 'તમારી બધી વસ્તુઓ રખડતી પડી હોય તો હું કેટલી બધી સાચવું છું ! તમારે ક્યાંય શોધવી પડે નહીં. એક સરનામું નક્કી છે. ત્યાં આવીને શોધી લેવાનું. મળી જશે.'

એમની યાદશક્તિ એટલી બધી તીવ્ર હતી કે કોઈ પણ ભાષણ એમણે સાંભળ્યું હોય અને પૂરું થયા પછી જો એને લખવાનું હોય, તો ક્રમબદ્ધ રીતે સંપૂર્ણ ભાષણ એ કાગળ ઉપર ઉતારી શકતા હતા. કાર્ય પ્રત્યેની મગ્નતા હોય ત્યારે તો એ એટલા બધા ફોકસ અને ગળાડૂબ હોય, લીન થઈ ગયા હોય અને સામાન્ય જીવનમાં તદ્દન નિઃસ્પૃહ. ક્યાંય કોઈ બંધનથી બંધાયેલા નહીં, એવી પરમહંસ-અવસ્થામાં જીવી જાણતા હતા.

એક વાર અમારા એક યુવાન પ્રચારક બહારગામના પ્રવાસેથી પરત આવ્યા. જમવાનો સમય થયો હતો. વસંતરાવ કહે કે 'ચાલો, આજે એક જગ્યાએ લગ્નનું નિમંત્રણ છે. મારી જોડે ચાલો, ત્યાં જ જમવાનું થઈ જશે.' અમારા પેલા યુવાન પ્રચારકને થયું કે સારું થયું. મોડા આવ્યા હોત તો જમવાનો મેળ પડત નહીં. એક સ્વયંસેવકને ત્યાં લગ્ન હતાં. બન્ને જણા સાઇકલ લઈને પહોંચ્યા. લગ્નનો જમણવાર હતો એનાથી થોડે દૂર જ નિમંત્રકની દુકાન હતી. આ લોકો લગ્નમાં જતા હતા અને નિમંત્રક તો દુકાને બેઠા હતા. એમને આશ્ચર્ય થયું, એટલે તેઓ દુકાને ગયા. એ દરજીની દુકાન હતી. એમને પૂછ્યું કે 'કેમ, આજે તો લગ્ન છે, તો તમે અહીંયાં કેમ છો ?' તો તે કહે કે 'ના, ના. કોનું લગ્ન છે ?' તો કહે કે 'અમારી પાસે પત્રિકા છે ને.' પત્રિકા બતાવી તો એક વર્ષ જૂની હતી. તારીખ, સમય અને સ્થળ બરાબર હતાં. એક વર્ષ જૂની પત્રિકા લઈને લગ્નમાં હાજરી આપવા માટે ગયા હતા ! બન્યું એવું કે તે દિવસે પેલા યુવાન પ્રચારકને ભૂખ્યા રહેવાનો વારો આવ્યો.



ઓ. ટી. સી.માં વસંતરાવને ચર્ચાગટ લેવા માટેની જવાબદારી હોય, પરંતુ ચર્ચાગટની અંદર બૌદ્ધિક ઝંઝાવાત ઊભો કરી ભલભલાના જ્ઞાનતંતુઓને હલાવી નાંખવામાં એમને આનંદ આવે. તો એક વાર ઓ. ટી. સી.માં એમણે પોતાના ચર્ચાગટના સ્વયંસેવકોને કામ સોંપ્યું. હોમ, હવન અને યજ્ઞ - આ ત્રણમાં ફરક શું ? શોધી લાવો. બીજી બાજુ ચર્ચાગટના બધા જ સ્વયંસેવકો માથું ખંજવાળતા હતા. તે સમયે બૌદ્ધિક પ્રમુખ તરીકે વયોવૃદ્ધ વડીલ પ્રિન્સિપાલ વણીકર આ બધું સંભાળતા. તો વસંતરાવ સ્વયંસેવકોને એમની પાસે મોકલે કે 'જાઓ, એમને પૂછી આવો અને કાલે જવાબ લેતા આવજો.' ત્રણેય શબ્દનો કોઈ ચોક્કસ અર્થ મળે નહીં. રોજ જુદાજુદા અધિકારીઓ પાસે આ સ્વયંસેવકોને મોકલ્યે જાય. બધાની પરીક્ષા કરવી અને દરેકને વિચારવા માટે મજબૂર કરીને આ રીતે બૌદ્ધિક ક્ષમતા અને તર્કશક્તિ કેળવવામાં પણ એમની વિશેષતા હતી.

સંઘકાર્યમાં શિબિરનું સવિશેષ મહત્ત્વ છે. સમૂહજીવનના સંસ્કાર માટે શિબિરનું વાતાવરણ ઉત્તમ હોય છે. સ્વયંસેવકો દ્વારા જાતે તંબુઓ બાંધીને શિબિરનું આયોજન થાય. અમદાવાદના લાલબહાદુર શાસ્ત્રી સ્ટેડિયમ પર ગુજરાતનો સંઘનો વિશાળ શિશિર શિબિર હતો. શિબિરના તંબુ બંધાયા પછી ભરશિયાળે અચાનક માવઠું થયું. ભારે વરસાદ પડ્યો. શિબિરમાં આવેલા સ્વયંસેવકો ત્રણ દિવસ શિયાળાની કડકડતી ટાઢમાં વરસાદથી ભીંજાયેલ જમીન ઉપર સૂતા. એ શિબિર બધા માટે કષ્ટદાયક યાદગાર રહ્યો. શિબિર પૂર્ણ થયા પછી બધું સંકેલાઈ ગયું ત્યારે એક અધિકારીના ધ્યાનમાં આવ્યું કે રસોઈના ચૂલાના ખાડા તો પૂરવાના જ રહી ગયા. વસંતરાવે એકલે હાથે બીડું ઉઠાવ્યું. કોઈ જાતનાં સાધનસામગ્રી વગર હાથેથી માટી ભેગી કરીકરીને ચૂલાના ખાડા પૂરી દીધા. મેદાનમાં ખાડા એમ ને એમ મૂકીને નીકળી ગયા હોત તો કોઈ પૂછનાર નહોતું. પરંતુ સંઘના સંસ્કારની આજ તો વિશેષતા છે.

સંઘમાં વ્યવહારશુદ્ધિ બાબતે ઉચ્ચ આદર્શનું વાતાવરણ હોય છે. પ્રચારકોએ દર મહિનાનું પોતાનું આય-વ્યય-પત્રક ભરીને હિસાબ આપવાની વ્યવસ્થા હોય છે. વસંતરાવને હિસાબની કડાકૂટનો કાયમ કંટાળો. ક્યારેય હિસાબ મળે નહીં. ઘણી વાર કપડાં ધોતી વખતે ખિસ્સામાં પાંચ-દશ રૂપિયાની નોટને પણ ધોઈ નાંખી હોય. મહિનાના અંતે ક્યારેય હિસાબ મળે નહીં. પરંતુ આય-વ્યય-પત્રક ભરવામાં બરાબર સમય સાચવે. પરંતુ તેમના આય-વ્યય-પત્રકની વિશેષતા હતી. તેઓ હિસાબ લખે :

૧.૮૦ બસ-ભાડાના

૦.૫૦ સિંગ ખરીદી

૦.૧૦ પાણીના ગ્લાસના

૧.૦૦ ચપ્પલ રીપેરિંગ

૦.૮૦ પૈસા સાબુના

૩૪.૩૦ G. K.

દરેક આય-વ્યય-પત્રકમાં છેલ્લે G. K. તો આવે જ.

'જેટલું સહજ જીવન એટલો જ સહજ વિનોદ. જેવી અલિપ્ત વૃત્તિનું મન, તેવી જ બંધનમુક્ત પ્રવૃત્તિ.' અપેક્ષાથી મુક્ત, ફરિયાદવિહીન એક મસ્ત જીવન, એનું બીજું નામ જ વસંતરાવ. ભવિષ્યમાં ક્યારેક એમના વ્યક્તિગત જીવનની સાચી બનેલી ઘટનાઓની વિવિધતાસભર બાબતોને સંગ્રહિત કરવામાં આવે તો હાસ્યના ફુવારા ઊડે એવો દળદાર ગ્રંથ તૈયાર થઈ શકે, એવા પ્રસંગોની ભરમાર પડી છે.



અને પૂરા હિસાબના ૮૦ ટકા રકમ G. K.માં હોય. વારંવાર આમ થતાં સંઘમાં હિસાબ સંભાળતા વ્યવસ્થા-પ્રમુખે વકીલસાહેબનું ધ્યાન દોર્યું. વકીલસાહેબે વસંતરાવને પૂછ્યું, 'હિસાબમાં દર વખતે G.K.નો ખર્ચ શું હોય છે ?' મીટિંગમાં બધાને જિજ્ઞાસા હતી : G. K. શું છે ? બધા જાણવા આતુર હતા ત્યારે વસંતરાવે કહ્યું, 'G. K. એટલે God Knows - એ રૂપિયા ક્યાં વાપર્યા તે ખબર નથી. તેથી જેટલાનો હિસાબ ન મળે તે બધું G. K.' નખશિખ પ્રામાણિકતા માત્ર ને માત્ર પ્રભુસાક્ષીએ સઘળું.

એક વાર કાર્યાલયમાં અમારા વડીલ પ્રચારક પોતાના ખર્ચનો હિસાબ કરતા હતા. હિસાબમાં ૨૫ પૈસાનો મેળ બેસતો નહોતો... *'નિર્માણોં કે પાવન યુગ મેં'*... ગીત ગણગણતા જાય અને હિસાબ કરે... પણ ૨૫ પૈસાનો મેળ ન પડે... ગીતની કડી શરૂ કરે *'નિર્માણોં કે પાવન યુગ મેં...'* ને પછી તરત ગણગણવા લાગે '૨૫ પૈસા... ૨૫ પૈસા...'

આમ સતત અડધા કલાક સુધી ગીતની કડી ગાય અને ૨૫... ૨૫... પૈસાનું રટણ કરતા જાય. વસંતરાવ આ સમગ્ર પ્રક્રિયા જોતા હતા. વિનોદી વસંતરાવે તે વડીલ પ્રચારકના હાથમાં ૨૫ પૈસા મૂક્યા અને કહ્યું, 'ચાલો, હિસાબનો મેળ પડી ગયો. હવે ગીત પૂરું કરો. ક્યારના એકને એક કડી રટ્યા કરો છો.'

આ સમગ્ર ઘટના એ વાતની સાક્ષી પૂરે છે કે તત્કાલ પરિસ્થિતિમાં હળવાશ સાથેના નુસખાઓની તો જાણે વસંતરાવના જીવનમાં ભરમાર ભરેલી છે.

ડૉ. હેડગેવાર ભવન સંઘ-કાર્યાલયમાં અમારા બધા વચ્ચે વસંતરાવનું એક સૂત્ર બહુ પ્રચલિત હતું : 'પી ફૉર પી ઈન પી બાય પી ઓન પી...' બહારથી કોઈ મહેમાન આવે તો વસંતરાવના આ સૂત્રને સમજવા માટે ખાસું માથું ખંજવાળવું પડતું. નાસ્તા વખતે બોલાતા આ સૂત્રનો અર્થ હતો : પૌંઆ ફૉર પ્રચારક ઈન પ્રાંતિક કાર્યાલય બાય પ્રેમજી ઓન પાટ...' વસંતરાવની શબ્દો સાથેની ધિંગામસ્તી પણ સંઘજીવનની આગવી ઓળખની અનુભૂતિ કરાવે છે.

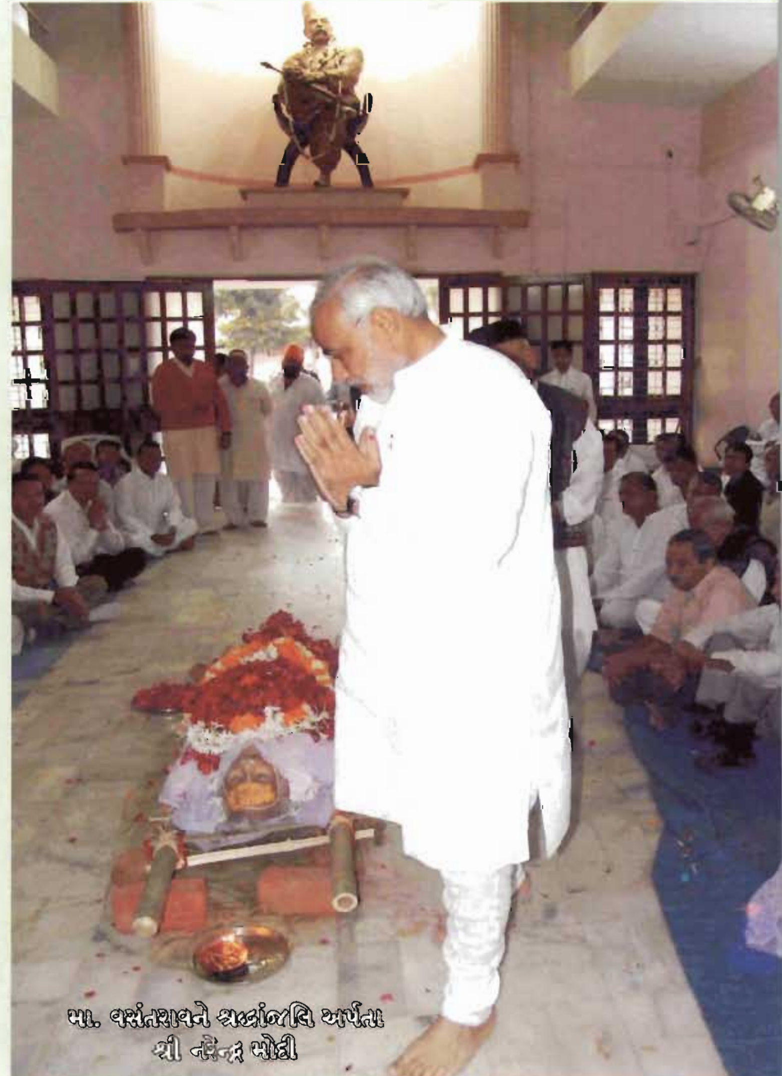
વસંતરાવ દિવાળી પહેલાં બેત્રણ મહિના 'સાધના'ના દિવાળી અંકની જાહેરખબરના કામ માટે મુંબઈમાં જ હોય. તેમણે મુંબઈમાં 'સાધના'ના ચાહકોનો મોટો વર્ગ ઊભો કર્યો હતો. એક વર્ષે 'સાધના'ને મુંબઈમાંથી ૫૦ હજાર રૂપિયાની માતબર રકમની જાહેરખબરો મળી. વસંતરાવ ખૂબ ખુશ



હતા. 'સાધના'માં પણ ભરપૂર આનંદ હતો. વસંતરાવને આનંદમાં જોઈ મુંબઈ સંઘ કાર્યાલયમાં સાથે રહેતા પ્રચારકોએ સારા ભોજનની પાર્ટી આપવા માટે દબાણ કર્યું. વસંતરાવે પાર્ટી ગોઠવી. બધા સાથી પ્રચારકો મુંબઈની એક હોટલમાં જમવા ગયા. મુંબઈની હોટલમાં માંસાહાર કોઈ નવી બાબત નથી. વેઈટર પણ સ્વાભાવિક રીતે માંસાહારી ભોજનની પૃચ્છા કરે. કોઈએ વસંતરાવને પૂછ્યું, 'તમને માંસાહાર ચાલશે ને ?' વસંતરાવે વટ મારવા હા પાડી. બધા પોતપોતાની રીતે ઑર્ડર આપવા લાગ્યા. વસંતરાવે વેઈટર પાસેથી વિગતો માગી... ફિશ, ચિકન, આમલેટ વગેરે વગેરે.... વસંતરાવ કહે, 'મૅનેજરને બોલાવો...' મૅનેજર પાસેથી ભોજનની વિગતો માગી. ફરીથી એ જ વાત : ફિશ... ચિકન... આમલેટ... વગેરે. વસંતરાવ કહે : 'બસ આવાં સામાન્ય પ્રાણીઓ જ ખવડાવો છો ? વાઘનો ખીમો છે ? સિંહનો સૂપ છે ?' મૅનેજર સામે જ જોઈ રહ્યો... કહે, 'ના, સાહેબ, નથી.' તો વસંતરાવ કહે, 'એમ કરો, ભીંડીનું શાક અને પરોઠાં લાવો...'

પોતે શાકાહારી હોવા છતાં સાથીઓને અચંબામાં મૂકી બધાને ભરપૂર મોજ કરાવી અને હોટેલનો સ્ટાફ પણ એક પછી એક તેમને ખાસ જોવા આવી ગયો.

વસંતરાવ એક તો આટલા બધા ભુલકણા અને તદ્દન બિન્દાસ ઓલિયું જીવન જીવે, તો બીજી તરફ એમની યાદશક્તિ એટલી બધી તીવ્ર હતી કે કોઈ પણ ભાષણ એમણે સાંભળ્યું હોય અને પૂરું થયા પછી જો એને લખવાનું હોય, તો ક્રમબદ્ધ રીતે સંપૂર્ણ ભાષણ એ કાગળ ઉપર ઉતારી શકતા હતા. કાર્ય પ્રત્યેની મગ્નતા હોય ત્યારે તો એ એટલા બધા ફોકસ અને ગળાડૂબ હોય, લીન થઈ ગયા હોય અને સામાન્ય જીવનમાં તદ્દન નિઃસ્પૃહ. ક્યાંય કોઈ બંધનથી બંધાયેલા નહીં, એવી પરમહંસ-અવસ્થામાં જીવી જાણતા હતા. ક્યારેય કોઈ એવી વ્યક્તિ મારા ધ્યાને નથી આવી કે વસંતરાવ માટે કોઈ ફરિયાદ કરી હોય. આટલા લાંબા જીવનમાં એવું વ્યક્તિત્વ એમણે વિકસાવ્યું હતું કે જેમાં પાણીના પ્રવાહની જેમ તેઓ પ્રવેશી જાય. ક્યાંય કોઈને ખૂણો-ખાંચરો અડકી જાય કે અથડાઈ જાય એવું ક્યારેય ન બનતું. એમની હાજરી વાતાવરણને હર્યુંભર્યું બનાવી દે, પણ એમની ગેરહાજરી ક્યારેય ખાલીપણાનો અનુભવ કરવા ન દે; અને એ પણ કદાચ બંધનમુક્ત જીવનયાત્રાની આ ઉચ્ચતમ અવસ્થાનું પરિણામ હશે.



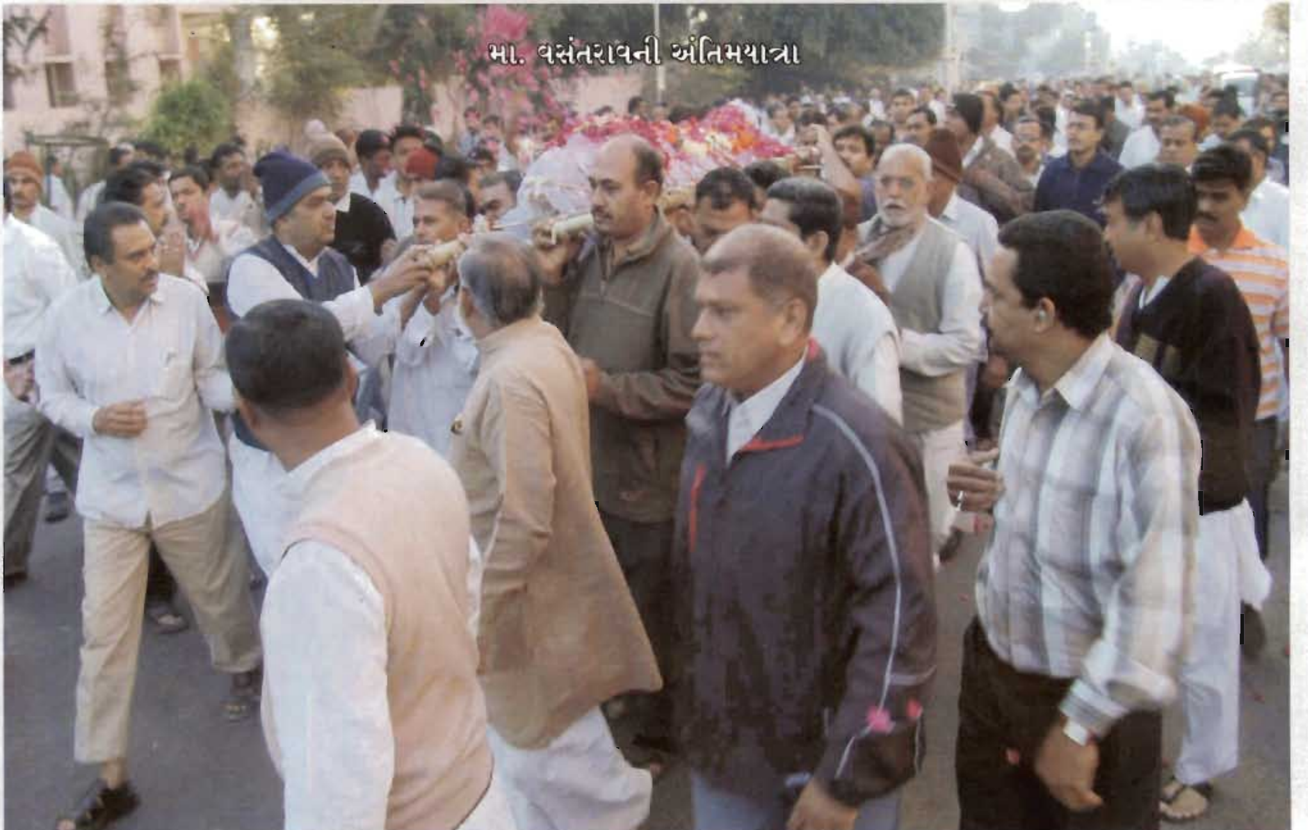
મા. વસંતરાવને શ્રદ્ધાંજલિ અર્પતા
શ્રી નરેન્દ્ર મોદી

વર્ષો થયાં એમણે જીવનભર સાઇકલ સિવાય કોઈ વાહનનો ઉપયોગ ન કર્યો. જેમ-જેમ સંઘનું કામ વધતું ગયું એમ-એમ સંઘકાર્ય માટે સાધનો પણ વધવા લાગ્યાં. એમના હાથ નીચે કામ કરતા તદ્દન નાની વયના યુવાન કાર્યકર્તાઓ સ્કૂટર ચલાવતા થઈ ગયા, પરંતુ વસંતરાવે સાઇકલ સિવાયના વાહનને હાથ સુધ્ધાં ન લગાડ્યો, જ્યારે બીજી બાજુ પોતાનાથી જુનિયર એવા કાર્યકર્તાઓને પણ દોડવા માટે વધુ સારી સુવિધા મળે એની ચિંતા કરી.

વસંતરાવ પોતાની સાઇકલ બગડી ગઈ હોય તો ક્યારેક સાઇકલ ભાડે લાવે, પણ પછી ભૂલી જાય કે કઈ દુકાનેથી ભાડે લીધી હતી. તેથી ક્યારેક પાંચ-છ સાઇકલની દુકાન ઉપર સાથે લઈ જઈને બતાવવી પડે કે આ સાઇકલ તમારે ત્યાંની છે ? આ પ્રકારના વ્યક્તિત્વની ઝલક અને છતાં પણ ઉચ્ચ બુદ્ધિપ્રતિભા, સાદગી, પરિશ્રમ, વિનોદવૃત્તિ, નિરપેક્ષભાવ - એ બધાનું એક અદ્દભુત મિશ્રણ એમના જીવનમાં હતું.

છેલ્લાં બે-એક વર્ષથી લકવાની બીમારી થઈ, છતાંયે એમણે ક્યારેય કાર્યથી પોતાનો નાતો તોડ્યો નહીં. છેલ્લા દિવસ સુધી જ્ઞાનની ઉપાસના, ભાષાશુદ્ધિ, જોડણીશુદ્ધિ વગેરે કામો માટે લગાતાર કામ કરતા જોવા મળતા હતા. લકવાની પીડા છતાંયે સંઘપરિવારના કોઈ પણ કાર્યક્રમો હોય તો કષ્ટ વેઠીને પણ પહોંચવા માટે છેવટ સુધી પ્રયાસ કરતા રહ્યા. લગભગ બે વર્ષની આ બીમારીના ગાળામાં પણ કાર્યાલયમાં આવનાર કોઈ પણ વ્યક્તિની પાસે એમની પોતાની સ્થિતિ, પરિસ્થિતિ, તબિયત કે શારીરિક પીડા બાબતમાં એક પણ વખત એક પણ શબ્દ બોલ્યા નથી. આવી પળે પણ આવનાર વ્યક્તિના હાલ પૂછવા, એમના કામ અંગે વાત કરવી, આવનારની ચિંતા કરવી અને પોતાની તબિયત પૂછે તો કોઈ ને કોઈ હાસ્ય, વ્યંગ, વિનોદ કરીને વાતને ટાળી દેવી.

જીવનના અંતિમ કાળે ગુજરાતની ચૂંટણીનાં પરિણામોનો આનંદ અને પોતે મત આપ્યાનો સંતોષ સ્પષ્ટ દેખાતો હતો. મૃત્યુના ૨૪ કલાક પહેલાં ચૂંટણીવિજયના આનંદના વાતાવરણમાં હું મીઠાઈ લઈને એમની પાસે પહોંચ્યો. ચૂંટણીવિજયનાં અભિનંદન આપ્યાં, મીઠાઈ ખાધી. પણ આજે વસંતરાવ પહેલાં જેવા દેખાતા નહોતા. અને છતાંયે પોતાની મુશ્કેલીઓ કહેવા તૈયાર નહોતા. પ્રમાણમાં સહેજ અંતર્મુખ થયેલા જણાયા. કાયમની જેમ ઠસ્સાદાર હાસ્ય ખૂબ લાંબું ન ચાલ્યું અને પોતાને જ કંઈક સંકેત થયો હોય અને જાણે કે ગુજરાતમાં ભાજપના ઝળહળતા વિજયની પ્રતીક્ષા કરતા હોય એમ હવે શરીર સંકેલવાની શરૂઆત કરી


મા. વસંતરાવની અંતિમયાત્રા

દીધી હોય એવું અનુભવાતું હતું. વર્ષો જૂના સંબંધોને કારણે સહેજ વિચાર આવ્યો કે એમને હૉસ્પિટલાઇઝ કરવા જોઈએ. એમને હૉસ્પિટલમાં ખસેડ્યા અને જે મનમાં આશંકા હતી એવું જ બન્યું. વિજયના આનંદની અંદર જ એમણે પોતાની જાતને વિલીન કરી દીધી.

વસંતરાવની વિદાયને કારણે એક હસતી-ખેલતી જ્ઞાનશાળાની વિદાય થઈ છે. વસંતરાવની વિદાયની સાથે કર્મઠ જીવનનો પર્યાય લુપ્ત થયો છે. વસંતરાવની વિદાયથી કાલાતીત જીવનશૈલી, જેને કાળ આભડી નથી શકતો, એવી જીવનશૈલીનો યુગ આથમ્યો છે. દુનિયાની નજરમાં ન ચમકેલું અને છતાંયે ટમટમતા દીવા જેવું એક જીવન જીવીને છેલ્લી ક્ષણ સુધી તેઓ પ્રકાશ પાથરતા રહ્યા.

'જેટલું સહજ જીવન એટલો જ સહજ વિનોદ. જેવી અલિપ્ત વૃત્તિનું મન, તેવી જ બંધનમુક્ત પ્રવૃત્તિ.' અપેક્ષાથી મુક્ત, ફરિયાદવિહીન એક મસ્ત જીવન, એનું બીજું નામ જ વસંતરાવ. ભવિષ્યમાં ક્યારેક એમના વ્યક્તિગત જીવનની સાચી બનેલી ઘટનાઓની વિવિધતાસભર બાબતોને સંગ્રહિત કરવામાં આવે તો હાસ્યના ફુવારા ઊડે એવો દળદાર ગ્રંથ તૈયાર થઈ શકે, એવા પ્રસંગોની ભરમાર પડી છે.

૮૦ વર્ષની ઉંમરે પણ યુવાનોને પ્રેરણા આપે એવું કામ શરીર પાસે લેવાની એમની ત્રેવડ એમને નિકટથી જોનારાઓને નવી પ્રેરણા આપનાર છે. રાષ્ટ્રીય સ્વયંસેવક સંઘની અનેક પેઢીઓની વિકાસયાત્રાના તેઓ સક્રિય સહયોગી રહ્યા. અનેક પેઢીઓ તેમના કરતાં ઘણી આગળ નીકળી ગઈ, પરંતુ તેઓ પોતે દીવાદાંડીની જેમ દૂર-દૂર સુધી પ્રકાશમાર્ગ પર લોકોને આકર્ષિત કરતા રહ્યા અને સંઘીય જીવનના બીબામાં ઢાળતા રહ્યા. વસંતરાવનું જીવન પાનખરથી પર હતું, એમ વસંતરાવના જીવનની યાદો પાનખરની વચ્ચે પણ વસંત(કાળ)ની અનુભૂતિ કરાવશે એ નિશ્ચિત છે.







વંદે માતરમ્

વંદે માતરમ્
સુજલાં સુફલાં મલયજ શીતલામ્
સસ્ય શ્યામલાં માતરમ્
વંદે માતરમ્.
શુભ્ર જ્યોત્સ્ના પુલકિત યામિનીમ્
ફુલ્લકુસુમિત દ્રુમદલ શોભિનીમ્
સુહાસિનીં સુમધુર ભાષિણીમ્
સુખદાં વરદાં માતરમ્
વંદે માતરમ્.
કોટિ કોટિ કંઠ કલકલ નિનાદ કરાલે
કોટિકોટિ ભુજૈર્ધૃત ખરકરવાલે
અબલા કેનો મા એતો બોલે
બહુબલ ધારિણીં નમામિ તારિણીમ્
રિપુદલવારિણીં માતરમ્
વંદે માતરમ્.
તુમિ વિદ્યા તુમિ ધર્મ
તુમિ હૃદિ તુમિ મર્મ
ત્વં હિ પ્રાણાઃ શરીરે
બાહુતે તુમિ મા શક્તિ
હૃદયે તુમિ મા ભક્તિ
તોમારોઈ પ્રતિમા ગડિ મંદિરે મંદિરે
વંદે માતરમ્.
ત્વં હિ દુર્ગા દશપ્રહરધારિણી
કમલા કમલદલ વિહારિણી
વાણી વિદ્યાદાયિની
નમામિ ત્વાં નમામિ કમલામ્
અમલાં અતુલામ્
સુજલાં સુફલાં માતરમ્
વંદે માતરમ્.
શ્યામલાં સરલાં સુસ્મિતાં ભૂષિતાં
ધરણીં ભરણીં માતરમ્
વંદે માતરમ્.

વંદે માતરમ્

હે માતા, હું તને વંદન કરું છું. શ્રેષ્ઠ નદીઓ અને સરોવરોનાં ઉત્તમ જળથી તું પરિપૂર્ણ છે. તારા ઉપર ઉગેલાં વૃક્ષોને ખૂબ ફળો લાગે છે. તારામાં રહેલું વાતાવરણ મલય પર્વત ઉપરથી વાતા પવનથી સુગંધિત અને શીતળ થયેલું છે. તારા ઉપર ફેલાયેલાં ખેતરો ધાન્યથી ઘેરાં લીલાં શોભે છે. માતા, હું તને વંદન કરું છું.

અહો ! શુભ્ર ધવલ ચંદ્રની ચાંદનીથી રસાયેલી તારી રાત્રિઓ કેટલી આનંદદાયી છે ? એ શોભા નિહાળતાં શરીર રોમાંચિત થાય છે. તારાં લીલાંછમ વૃક્ષો ઉપર ફૂલો ખીલ્યાં છે અને ફળો આવ્યાં છે. એમની શોભા અવર્ણનીય છે. એમની તરફ જોઈને લાગે છે કે તું હસે છે અને મધુર બોલે છે. તું અનેક પ્રકારનાં સુખ આપનારી, વરદાન આપનારી મહન્મંગલા માતા છે. માતા, હું તને વંદન કરું છું.

તારા કોટિ કોટિ પુત્રો ઉચ્ચ સ્વરે તારો જયજયકાર કરે છે. તારા કોટિ કોટિ પુત્રો હાથમાં ઉગ્ર તલવારો લઈને તૈયાર ઉભા છે. એ સ્થિતિમાં તને કોઈ અબલા કેવી રીતે કહી શકે ? તું અતિશય બલશાલિની છે. હું તને નમસ્કાર કરું છું. તું બધાને તારનારી છે. તું બધા શત્રુઓનું નિવારણ કરનારી છે. માતા, હું તને વંદન કરું છું.

તું વિદ્યા છે, તું ધર્મ છે. એટલે કે જગતને તારી પાસેથી જ વિદ્યા પ્રાપ્ત થઈ છે. અને ધર્મ સમજાયો છે. તું બધાના હૃદયોમાં વિરાજમાન છે. તું બધાનું મર્મસ્થાન છે. તારા પુત્રોની ભૂજાઓમાં તું જ શક્તિ ઉત્પન્ન કરે છે. તારા પુત્રોનાં હૃદયોમાં તું જ ભક્તિ નિર્માણ કરે છે. હજારો મંદિરોમાં જે વિભિન્ન દેવમૂર્તિઓ છે એ તારી જ છે. માતા, હું તને વંદન કરું છું.

અનેક શસ્ત્રો ધારણ કરનારી દુર્ગા તું જ છે. કમળમાં વાસ કરનારી લક્ષ્મી તું જ છે. વિદ્યા, કલા અને ભાષાની જનની સરસ્વતી તું જ છે. માતા, હું તને વંદન કરું છું.

હે કમળ સમાન સુંદર અને નિર્દોષ માતા, અમે તને વંદન કરીએ છીએ. તું જગતમાં અનુપમ છે. હે ઉત્તમ જળયુક્ત અને ફળયુક્ત માતૃભૂમિ, અમે તને વંદન કરીએ છીએ.

તું શ્યામલવર્ણી છે, તું સરળ સ્વભાવની છે, તું સદા પ્રસન્ન હોય છે, તું સુંદર સ્મિતથી શોભે છે. તું સર્વને ધારણ કરે છે. તેથી ધરણી છે. તું સર્વનું ભરણ પોષણ કરે છે માટે તું ભરણી છે. તારી વત્સલતાનો પાર નથી. હે માતા, હું તને વંદન કરું છું.



વિચાર - રત્નો

આ જીવન અલ્પકાલીન છે, સંસારના મોજશોખો ક્ષણભંગુર છે; પણ જેઓ બીજા માટે જીવે છે તેઓ જ ખરેખર જીવે છે, બાકીના લોકો તો જીવતા કરતાં વિશેષ મરેલા છે.



જે ધર્મ કે જે ઈશ્વર વિધવાનાં આંસુઓ લૂછી ન શકે કે અનાથના મુખમાં રોટીનો ટુકડો મૂકી ન શકે એવા ધર્મ કે ઈશ્વરમાં હું માનતો નથી.

ઈશ્વરની શોધ બીજે ક્યાં કરવા જશો ? શું બધાં દીન-દુઃખી અને દુર્બળ લોકો ઈશ્વરરૂપ નથી ? તો એમની પૂજા પ્રથમ શા માટે ન કરવી ? ગંગા કાંઠે કૂવો ખોદવા શા માટે જવું ?

નિઃસ્વાર્થતા વધુ લાભદાયક છે, પરંતુ તેનું આચરણ કરવા જેટલું ધૈર્ય લોકોમાં હોતું નથી.

જ્યાં સુધી લાખો લોકો ભૂખ અને અજ્ઞાનમાં જીવે છે ત્યાં સુધી એમના ભોગે કેળવણી પામીને એમના તરફ જે લેશમાત્ર પણ ધ્યાન આપતો નથી તે દરેક માણસને હું દેશદ્રોહી કહું છું.



સરસ્વતીના સાધક - શ્રી નરેન્દ્રભાઈ મોદી

વિવિધતામાં એકતા ભારતની આગવી વિશેષતા છે. માતાના ગુણો તેના સંતાનમાં અવશ્ય ઉતરે એવી રીતે માતૃભૂમિ માટે સર્વસ્વ અર્પણ કરીને રાષ્ટ્રભક્તિમાં લીન જીવન ગુજારનાર સમર્પિત પ્રચારકના જીવનમાં પણ આગવી વિશેષતા જોવા મળે જ...

ગુજરાત રાજ્યના મુખ્યમંત્રી તરીકે સૌથી લાંબા સમય સુધી શાસન કરવાનો અનોખો વિક્રમ સર્જનાર શ્રી નરેન્દ્રભાઈ મોદી એટલે અનેક વિવિધતાનો સંગમ. કુશળ વહીવટકર્તા, કુશાગ્ર રાજનીતિજ્ઞ, મૃદુહૃદયી કવિ, વાર્તાકાર, દસ્તાવેજી પુસ્તકો અને ચરિત્રકથા તેમજ સામાજિક ચિંતનને લગતા પુસ્તકોના લેખક અને ગુજરાતી ઉપરાંત હિન્દી, પંજાબી, અંગ્રેજી, બંગાળી, મરાઠી ભાષા સાથે ઘરોબો ધરાવતા સિદ્ધહસ્ત લેખકનો સમન્વય તેમના વ્યક્તિત્વમાં સહજ જોવા મળે છે.

શ્રી નરેન્દ્રભાઈ મોદીને વાંચન - લેખન - કલા - સાહિત્ય પ્રત્યે નાની ઉંમરથી જ વિશેષ રૂચિ રહેતી. સ્પષ્ટ અને ચોક્કસ વિચારો સાથેની તેમની ચિંતન સાધના તેમની કલમની ઓળખ રહી છે, અને માત્ર ૨૫ વર્ષની ઉંમરે તેમણે આ વિચારોને **'સંઘર્ષમાં ગુજરાત'** પુસ્તક રૂપે રજૂ કર્યા. તે અગાઉ તેઓ સામાજિક સમસ્યા, રાજકીય આટાપાટા, ધર્મ ભાવના તેમજ માનવીય સંવેદનાનું પ્રતિબિંબ પાડતા લેખો - વાર્તાઓ - નિબંધો વિવિધ સામાયિકોમાં લખતા રહ્યા હતા. **'સંઘર્ષમાં ગુજરાત'** એ લોકશાહીને બચાવવા માટેની નામી-અનામીઓની ધગધગતી રાષ્ટ્રભાવનાનું નિરૂપણ કરાવતું પુસ્તક જ નહીં પણ ઇતિહાસ કથન છે. તો તેમની ચિંતનશીલ કલમ દ્વારા **'સેતુબંધ', 'પત્રરૂપ ગુરૂજી', 'તપવંદના', 'ગુરૂજી એક સ્વયંસેવક'** જેવા પુસ્તકો થકી તેમણે ઋષિતૂલ્ય મહાપુરૂષોને અનોખી અંજલિ આપી...

રાષ્ટ્રીય, રાજકીય, સામાજિક સમસ્યા - પ્રશ્નો પ્રત્યેનો તેમનો સુરેખ અને સ્પષ્ટ અભિગમ તેમના વિચારોમાંથી ધોધરૂપે પ્રગટ થતો રહે છે, અને આ વિચારોની અભિવ્યક્તિએ તેમને દેશના ઉત્તમ વક્તાઓની હરોળમાં સ્થાન અપાવ્યું છે. આવી પ્રભાવી અભિવ્યક્તિ **'કેળવે તે કેળવણી', 'આચાર્યધર્મ'** વગેરે શબ્દાંકનરૂપે અવતરણ પામી છે, તેવી રીતે અગાઉ તેમની સંવેદનશીલ કલમમાંથી ટપકેલી ઊર્મિઓને અક્ષરદેહ રૂપે રજૂ થયેલી વાર્તાઓનો સંગ્રહ **'પ્રેમતીર્થ'** ખરેખર માતૃત્વના માનસરોવરની અનુભૂતિ કરાવે છે.

શ્રી નરેન્દ્રભાઈ મોદી પોતાને સાહિત્યકાર કે કવિ તરીકે ઓળખાવવાને બદલે સરસ્વતીના સાધક ગણાવે છે, અને આ સાધકે પ્રકૃતિની સાધના રૂપે - **'આંખ આ ધન્ય છે'** કાવ્યગ્રંથ સાહિત્ય પ્રેમીઓને ચરણે પણ ધર્યો છે.

'જ્યોતિપુંજ' પુસ્તક શ્રદ્ધાની અનુભૂતિ કરાવે છે સાથે સાથે સાહિત્યક પરિભાષામાં શબ્દચિત્રની સશક્ત શૈલી પણ પ્રવાહિત થાય છે **'જ્યોતિપુંજ'** ઇતિહાસ, પંરપરા, મૂલ્યો, નિષ્ઠાના પ્રવાહમાં વાચકને તરબતર કરી મૂકે છે.

